''चरक संहिता''

Shyam-Vidya Ayurved P.G. Entrance Coaching Center, Bhopal (M.P.)
By- Dr. Neelima Singh Lodhi (M.D.) Mob.- 09826438399, 09993961427

- उपदेष्टा (**Expounder**) – पुनर्वसु आत्रेय – 1000 ई. पूर्व (उपनिषद काल)
- तन्त्रकर्ता (**Author**) – अग्निवेश – 1000 ई. पूर्व. (उपनिषद काल)
- प्रतिसंस्कर्ता (**Redactor**) – चरक – 200 ई. पूर्व. (शुंगकाल)
- सम्पूरक (**Supplimentater**) – दृढबल – 4 शती (गुप्तकाल)

- आत्रेय के उपदेशों को तंत्ररूप में निबिद्ध करने के कारण अग्निवेश **'तंत्रकर्ता'** है।
- अग्निवेश तंत्र का भाष्यात्मक प्रतिसंस्कार करने के कारण चरक **'भाष्यकार'** हैं।
- चरक 'अग्निवेश तंत्र' के और दृढबल 'चरक संहिता' के **प्रतिसंस्कर्ता (Redactor)** हैं।

विषय विवेचन

1.	सूत्रस्थान	30 अध्याय	**1952**
2.	निदानस्थान	8 ''	247
3.	विमानस्थान	8 ''	354
4.	शारीरस्थान	8 ''	382
5.	इन्द्रियस्थान	12 ''	378
6.	चिकित्सास्थान	30 ''	**4904**
7.	कल्पस्थान	12 ''	378
8.	सिद्धिस्थान	12 ''	**700**
	कुल 8 स्थान	**120 अध्याय**	**9295 सूत्र**

- कुल औषध योग – 1950 – इसमें से 1600 योग चिकित्सा स्थान में वर्णित है।
- कुल श्लोक – 12000 – यस्य द्वादश साहस्त्री हृदि तिष्ठति संहिता। (च. सि. 12/52)

चरकसंहिता पर कुल टीकाएं = 43 (17 संस्कृत टीकाएं – इनमें से 6 उपलब्ध है।)

	टीका	टीकाकार	काल
1.	चरक न्यास (प्रथम टीका)	भट्टार हरिश्चन्द्र	6 वीं शती (सूत्रस्थान 3 अध्याय तक)
2.	चरक पंजिका	स्वामि कुमार	7 ''
3.	निरन्तर पद व्याख्या	जेज्जट	9 ''
4.	न्यास	अमितप्रभ	9 ''
5.	चरक वार्तिक	क्षीरस्वामीदत्त	9 ''
6.	परिहार वार्तिक	आषाढ़वर्मा	9 ''
7.	वृहत्तन्त्र प्रदीप	नरदत्त	10 ''
8.	चरक चन्द्रिका	गयदास	11 ''
9.	चरक भाष्य	श्रीकृष्ण वैद्य	11 ''
10.	आयुर्वेद दीपिका	चक्रपाणि	11 '' (सन् 1075)
11.	चरक तत्व प्रदीपिका	शिवदास सेन	16 '' (15 वीं शती के अंत में)
12.	चरक प्रकाश कौस्तुभ	नरसिंह कविराज	17 ''
13.	चरकोपस्कार	योगिन्द्रनाथ सेन	19 ''
14.	जल्पकल्पतरू	गंगाधर राय	19 ''
15.	चरक प्रदीपिका	ज्योतिष चन्द्र सरस्वती	20 ''

—: हिन्दी टीकाकार :—

1. श्रीकृष्णलाल
2. जयदेव विद्यालंकार कृत
3. अत्रिदेव विद्यालंकार कृत
4. ब्रह्मानन्द त्रिपाठी कृत — **चरक चन्द्रिका टीका**
5. रविदत्त त्रिपाठी कृत — **वैद्य मनोरमा**
6. डॉ. काशीनाथ पांडे एवं गोरख नाथ शास्त्री — सविमर्श **'विद्योतनी'** हिन्दी व्याख्या।

—: अनुवाद :—

1. चरक संहिता का अरबी अनुवाद 8 वीं शताब्दी में **'शरक इण्डियानस'** से हुआ।
2. चरक संहिता का अंग्रेजी अनुवाद सर्वप्रथम कविरत्न अविनाशचन्द्र ने 1891—99 में कलकत्ता से प्रकाशित किया।
3. अंग्रेजी अनुवाद 6 संस्करणों में डॉ. प्राणजीवन मेहता ने सन् 1949 में जामनगर से प्रकाशित किया।
4. हिन्दी भाषा में प्रथम अनुवाद पं. ज्वाला प्रसाद ने लाहौर से की।
5. तैलगू व्याख्या विश्वनाथ शास्त्री ने 'कौमुदी' नाम से की।

भरद्वाज :— भारद्वाज ने इन्द्र से ज्ञान प्राप्त किया था। भारद्वाज के पिता वृहस्पति और माता का नाम ममता था।.

1. चरक संहिता में भरद्वाज को तपस्वी ऋर्षि होने के कारण **'उग्रतपा'** नाम से संबोधित किया गया है।
2. भरद्वाज को **'अमितायु'** भी कहते है।

आत्रेय :— चरक संहिता में 3 आत्रेय उल्लेख आया है।

1. पुर्नवसु आत्रेय — महर्षि अत्रि के पुत्र एवं शिष्य दोनों थे, जिन्होंने भारद्वाज से आयुर्वेद का ज्ञान प्राप्त किया था। इनकी माता का नाम चन्द्रभागा था अतएव इंन्हे **'चन्द्रभागि या चन्द्रभाग'** भी कहा गया है।
2. कृष्णात्रेय — (च. सू. 11/65) में वर्णन आया है।
   महाभारत में भी कायचिकित्सा चिकित्सक के रूप में 'कृष्णात्रेय' का उल्लेख आया है।
3. भिक्षु आत्रेय — (च. सू. 25/24—25) कालवाद के समर्थक है।

आत्रेय के शिष्य — (6) — अग्निवेश, पराशर, जतूकर्ण, हारीत, भेल और क्षीरपाणि।   (अ परा जित है भेल क्षीर)

चरक :—

1. चरक का वास्तविक नाम **'कपिष्ठल चरक'** था।
2. चरक **'विशुद्ध'** के पुत्र थे।
3. 'महर्षि **वैशम्पायन**' के शिष्य थे।
4. चरक कुषाणवंशीय **'राजा कनिष्क'** के राजवैद्य थे।
5. भावप्रकाश के अनुसार चरक 'शेषनाग के अवतार' तथा **यायावर कोटी के ऋषि** थे।
   ऋर्षि 2 प्रकार — 1. शालीन (कुटी में रहने वाले)   2. यायावर (घूमफिर कर ज्ञान अर्जित करने वाले)
6. चरक का निवास स्थान पंचनद प्रान्त में इरावती एवं चन्द्रभागा नदियों के बीच स्थित **'कपिस्थल' ग्राम** में था।
7. कृष्णयर्जुवेद की एक शाखा का नाम भी **'चरक'** है और इस सम्प्रदाय के लोग भी चरक कहलाते थे।

दृढबल :—

1. यह कपिलबली के पुत्र थे।
2. इन्होने चरक संहिता के 120 अध्यायों में से 41 अध्याय (चिकित्सा के 17, कल्प 12, सिद्धि 12) लिखे है।
3. चिकित्सा स्थान के रसायन, बाजीकरण, मदायत्य
   + ज्वर, रक्तपित्त, गुंल्म, प्रमेह, कुष्ठ, राजयक्ष्मा, **अर्श, अतिसार**
   + द्विवण्री, विसर्प

   अध्यायों को छोडकर शेष सभी 17 अध्याय दृढबल ने लिखे है।

—: चरक संहिता :—

1. कविराज गंगाधर रायें (19 वीं शती) ने चरक संहिता की 'जल्पकल्पतरू' टीका के प्रारम्भ में चरक संहिता को **''अखिलशास्त्रविद्याकल्पद्रुम''** कहा है। यथा – 'जयत्यसौ सोऽखिलशास्त्रविद्याकल्पद्रुमः सर्वफलोदयत्वात्'।
2. **चरक संहिता में उत्तर तंत्र शामिल था** – ऐसा शिवदास सेन का कथन है।
3. चक्रदत्त पर रचित निश्चलकर की 'रत्नप्रभा' टीका में **चरकोत्तर तंत्र तथा चरक परिशिष्ट** को उदधृत किया गया हैं।
4. वृहत्रयी में चरक संहिता **'मूर्धन्य'** अर्थात शिर के समान मानी गयी है।
5. आचार्य चरक के अनुसार यूनानी चिकित्सा के प्रथम वैद्य 'कांकायन' थे।
6. चक्रपाणि बंगाल के **'लोध्रबली'** कुल में उत्पन्न हुये थे।

—: चरक संहिता की विशेषताए :—

1. चरक संहिता की शैली एवं भाषा **उपनिषदकालीन** है।
2. चरक में उपनिषद शब्द आया है एवं सांख्य शब्द – 5 बार तथा इतिहास शब्द – 2 बार आया है।
3. अग्निवेश ने माण्डूक्य उपनिषद् में उल्लेखित ब्रह्म चतुष्पाद सिद्धान्त को माना है।
   (चतुष्पाद सिद्धान्त – 1. वैश्वानर 2. तैजस 3. प्राज्ञ **4. तुरीय** – ये 4 पाद ब्रह्म के कहे गये है।)
4. चकरसंहिता में वैद्य की तृतीयाजाति, पंचमहाभूत, सप्तधातु सिद्धान्त ये सभी उपनिषदकालीन माने जाते है।
   (वैद्य की **तृतीयाजाति** :– 1. गर्भ में जन्म 2. प्रसव के पश्चात् जन्म 3. मृत्यु के पश्चात पुर्नजन्म)
5. अग्निवेशतंत्र – सूत्र, संग्रह तथा भाष्य के क्रम में परिणत होकर चरकसंहिता के रूप में विद्यमान है।
   दृढबल ने अग्निवेशकृत ग्रन्थ के लिए **'तंत्र'** और चरककृत प्रतिसंस्करण के लिए **'संहिता'** शब्द प्रयोग किया है।
6. अग्निवेश तंत्र संभवतः सौश्रुत तंत्र के बाद का है एवं इसमें धन्वन्तरि संप्रदाय का उल्लेख भी मिलता है।
7. चरक संहिता में **14 देश एवं 68 आचार्य** (वाह्वीक का महत्वपूर्ण उल्लेख) का वर्णन मिलता है।
8. चरकसंहिता **4 सूत्रों** – गुंरूसूत्र, शिष्यसूत्र, प्रतिसंस्कर्ता सूत्र एवं एकीय सूत्र में विषय वस्तु विभक्त है।
9. **भैषज्य कल्पना का व्यस्थित एवं वैज्ञानिक विवरण** चरक संहिता मे है।
10. **'आचार्य रसायन'** चरक की मौलिक देन है।
11. बौद्ध सम्मत **'स्वभावोपरमवाद'** प्राकृतिक चिकित्सा का मूल हैं। (च. सू. 16/27)
12. चरक ने ग्रहचिकित्सा को **'उभयाभिप्लुता'** कहा हैं।
13. **सप्त चतुष्क** के रूप में सूत्र स्थान का वर्णन किया है। (BSNL KRiYA)
    1. भैषज/औषध चतुष्क
    2. स्वास्थ्य चतुष्क
    3. निर्देश चतुष्क
    4. कल्पना चतुष्क
    5. रोग चतुष्क
    6. योजना चतुष्क
    7. अन्नपान चतुष्क + 2 संग्रहद्वय अध्याय (दशप्राणायतन, अर्थेदशमहामूलीय अध्याय)
14. चरक संहिता मे कुल 7 स्थानों पर **संभाषा परिषद** का उल्लेख मिलता है।

(1) सूत्रस्थान में – 4	**(2) शारीरस्थान में – 2**	**(3) सिद्धिस्थान में – 1**
1. दीर्घज्जीवितीय	(सूत्रस्थान 1 अध्याय)	– भूलोक में आयुर्वेदावतरण पर विचार
2. वात कलाकलीय	(सूत्रस्थान 12 अध्याय)	– दोष विनिश्चयार्थ
3. यज्जःपुरूषीय	(सूत्रस्थान 25 अध्याय)	– पुरूष भाव विनिश्चयार्थ
4. आत्रेयभद्रकाप्यीय	(सूत्रस्थान 26 अध्याय)	– रस संख्या विनिश्चयार्थ
5. गर्भावक्रान्ति शारीर	(शारीरस्थान 3 अध्याय)	– गर्भ का मासानुमासिक वृद्धि
6. शरीरविचय शारीर	(शारीरस्थान 6 अध्याय)	– गर्भ में प्रथम अंग निर्माण विषयक
7. फलमात्रा सिद्धि	(सिद्धिस्थान 11 अध्याय)	– फलवस्ति सिद्धि विषयक

15. **चरक क्लब :–** ''चरक क्लब'' की स्थापना 1898 में न्यूयार्क में प्रो. ऑसलर द्वारा हुई है।

1. दीर्घजीवितीय अध्याय

'सूत्रस्थान' = श्लोकस्थान' भी कहा जाता है। (च. सू. 30/34)
प्रथम सूत्र – अथातो दीर्घञ्जीवितीयमध्यायं व्याख्यास्यामः। (च. सू. 1/1) (अथ शब्द का अर्थ मंगलसूचक होता है)
इस सूत्र में 1. अथ 2. अतः 3. दीर्घ 4. जीवितीयं 5. अध्यायं 6. वि 7. आ 8. ख्यास्यामः। – ये 8 मांगलिक पद है।
इति ह स्माह भगवानात्रेयः। (च. सू. 1/2) – द्वितीय श्लोक में उपदेष्टा का परिचय दिया है।

दीर्घञ्जीवितीयमन्विच्छन् भरद्वाज उपागमत्। इन्द्रमुग्रतपा बुद्धा शरण्यममरेश्वरम् (च. सू. 1/2)
(1) दीर्घ जीवन की इच्छा रखते हुए भरद्वाज **(उग्रतपा)** देवराज इन्द्र के पास ज्ञान प्राप्त करने के लिए गए।

चरक संहिता अनुसार आयुर्वेदावतरण – ब्रह्मा → दक्ष प्रजापति → अश्विनीद्वय → इन्द्र → भारद्वाज।
(2) ब्रह्मा, दक्षप्रजापति, अश्विनी कुमार, इन्द्र – आयुर्वेदशास्त्र के चार देव उपदेशक आचार्य कहलाते है।
संभाषा परिषद – विषय – आयुर्वेदावतरण
स्थान – हिमालय (समेताः पुण्यकर्माणः पार्श्वेः **हिमवतः शुभे** – च. सू. 1/7)
ऋषि संख्या – 53 (अगिंरा जमदग्निश्च वसिष्ठः कश्यपो भृगुः – च. सू. 1/9–14)
आरोग्य – धर्मार्थकाममोक्षाणामारोग्यं मूलमुत्तमम्। (च. सू. 1/15)
आरोग्य धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष इन चार पुरूषार्थो की प्राप्ति का प्रधान साधन है।
इन्द्र के पर्याय – (1) सहस्राक्ष (2) शचीपति (3) शक्र **(4) बलहन्तार** (5) सुरेश्वरम् (6) शतक्रतु।

त्रिसूत्र/त्रिस्कन्ध – हेतुलिंगौषधज्ञानं स्वस्थातुरपरायणम्। त्रिसूत्रं शाश्वतं पुण्यं बुबुधे यं पितामहः।। (च. सू. 1/15, 25)
(स्कन्धत्रय – हेतु, दोष, द्रव्य।)
षट्पदार्थ का क्रम – सामान्य, विशेष, गुण, द्रव्य कर्म, समवाय। – (चरक)।
द्रव्य, गुण, कर्म, सामान्य, विशेष, समवाय। – (वैशेषिक दर्शन)।

आत्रेय के शिष्य – (6) – अग्निवेश, पराशर, जतूकर्ण, हारीत, भेल और क्षारपाणि। (अ परा जित है भेल क्षार)
अग्निवेश – बुद्धेर्विशेषस्तत्रासीन्नोपदेशान्तरं मुनेः। **तन्त्रस्य कर्ता प्रथममग्निवेशो** यतोऽभवत्। **(च. सू. 1/32)**
आत्रेय के सभी शिष्यों में से अग्निवेश प्रथम तन्त्रकर्ता हुए।
अग्निवेश आदि ऋषियों में बुद्धि, सिद्धि, मेधा, धृति, स्मृति, क्षमा, दया, कीर्ति रूप **8 ज्ञान** देवताओं ने प्रवेश किया।

आयुर्वेद की परिभाषा – 'हिताहितं सुखं दुःखमायुस्तस्य हिताहितम्।
मानं च तच्च यत्रोक्तमायुर्वेदः स उच्यते।। (च.सू. 1/41)

आयु के प्रकार – 4 – (1) हितायु (2) अहितायु (3) सुखायु (4) दुःखायु।
'आयु' – 'शरीरेन्द्रिय सत्वात्मसंयोगो धारि जीवितम्। नित्यगश्चानुबन्धश्च पर्यायैरायुरूच्यते।। (च.सू. 1/42)
आयु – शरीर + इन्द्रिय + सत्व + आत्मा के संयोग को आयु कहते हैं।
आयु के पर्याय – धारि, जीवितम्, नित्यग, अनुबन्ध। + चेतनानुवृत्ति (च. सू. 30/22)।
{काल के 2 भेद –**1. नित्यग** 2. आवस्थिक – कालो हि नित्यगश्चावस्थिकश्च। च. वि. 1/21}
{दोषों के 2 भेद –**1. अनुबन्ध्य** 2. अनुबन्ध – अनुबन्ध्यानुबन्धविशेषकृतस्तु बहुविधो दोषःभेदः। च. वि. 6/11}
'तस्य आयुषः पुण्यतमो वेदो वेदविदां मतः। (च.सू. 1/43) – आचार्य चरकानुसार सभी वेदों में **आयुर्वेद पुण्यतम वेद है।**

सामान्य विशेष :– सर्वदा सर्वभावनां सामान्य वृद्धिकारणम्। ह्रासहेतुः विशेषश्च प्रवृत्तिरूभयस्य तु।। (च.सू. 1/44)

सामान्य – सदा सभी भावों की वृद्धि करने वाला। विशेष – सभी भावों का ह्रास करने वाला।

सामान्यमेकत्वकरं विशेषस्तु पृथक्त्वकृत। तुल्यार्थता हि सामान्यं, विशेषस्तु विपर्ययः।। (च.सू. 1/45)

प्रकार – चक्रपाणि (3) – द्रव सामान्य, गुण सामान्य, कर्म सामान्य, – द्रव विशेष, गुण विशेष, कर्म विशेष।
न्याय दर्शन (2) – पर सामान्य, अपर सामान्य।

त्रिदंड – 'सत्वामात्मा शरीरं च त्रयमेतत् त्रिदण्डवत्। लोकस्तिष्ठति संयोगात्तत्र सर्व प्रतिष्ठिम्।'

त्रिदण्ड – सत्व + आत्मा + शरीर। **आयुर्वेद का अधिकरण** – सत्व, आत्मा, शरीर युक्त चेतन (संयोगपुरूष)।

गुण – 'सार्था गुर्वादयो बुद्धिः प्रयत्नान्ताः परादयः। गुणाः प्रोक्ताः– (च.सू. 1/49)

चरकोक्त 41 गुण :– इन्द्रिय गुण (वैशेषिक/विशिष्ट गुण) – 5
गुर्वादि गुण (चिकित्सीय गुण/शारीर गुण) – 20
आत्म गुण (अध्यात्मिक गुण/सात्त्विक गुण) – 6
परादि गुण (चिकित्सा सिद्धि के उपाय गुण) – 10

गुण – समवायी तु निश्चेष्टः कारणं गुणः। (च. सू. 1/51) 1. गुणाश्च गुणान्तरमारभन्ते। (वैशेषिक दर्शन)।

गुण संख्या – चरक – 41, योगीन्द्रनाथसेन – 42
(योगीन्द्रनाथसेन ने चरकोक्त 41 + मन को आत्म गुण **(8)** में शामिल कर गुण 42 माने है।)
न्याय – 24 वैशेषिक – 17

गुण विभाजन :– आचार्य चक्रपाणि ने गुण को 3 तीन भागों में विभाजित किया है।

1. **सामान्य गुण** – **(30)** – गुर्वादि एवं परादि गुण (पंचमहाभूतों में सामान्यतः होने के कारण)
2. **विशैषिक गुण** – **(5)** – इन्द्रिय गुण (विशेष रूप से इन्द्रियों में रहने के कारण)
3. **आत्म गुण** – **(6)** – आत्म गुण (आत्म से संबंध होने के कारण 'अध्यात्मिक गुण' भी कहते है)

द्रव्य – यत्राश्रिताः कर्मगुणाः कारणं समवायि यत्। तद् द्रव्यं – (च. सू. 1/51)

द्रव्य वह है जिसमें कर्म और गुण आश्रित रहते है, और जो अपने कार्य द्रव्यों का समवायिकारण होता है।

द्रव्य लक्षणन्तु क्रियागुणवत् समवायिकारणं इति। (सु. सू. 40/3)

द्रव्य – 'खादीन्यात्मा मनः कालो दिशश्च द्रव्यंसग्रहः। सेन्द्रिय चेतनं द्रव्यं, निरिन्द्रियमचेतनम्।। (च.सू. 1/48)

द्रव्य संख्या – 9 – पंचमहाभूत, मन, आत्मा, दिशा, काल – **कारणद्रव्य।**
द्रव्य प्रकार – 2 – 1. सेन्द्रिय (चेतन द्रव्य), 2. निरिन्द्रिय (अचेतनद्रव्य) – **कार्यद्रव्य।**
द्रव्य के भेद – 3 – (1) दोषप्रशमन (2) धातुप्रदूषण (3) स्वस्थहितकर।

कर्म – 'प्रयत्नादि कर्म चेष्टितमुच्यते। (च.सू. 1/49) – प्रयत्न द्वारा की गई चेष्टा कर्म कहलाती है।

प्रकार – 5 – (वैशेषिक दर्शन) – उत्क्षेपण, अवक्षेपण, आकुन्चन, प्रसारण तथा गमन।

चरक – 3 एवं 5 – दृष्टं हि **त्रिविधं** कर्म हीनं मध्यममुत्तमम्। (च. वि. 3/31)
कर्म **पञ्चविधं** मुक्तं वमनादि। (च. सू. 26/10)

समवाय –'समवायोऽपृथग्भावो भूम्यादीनां गुणैः मतः। स नित्यो यत्र हि द्रव्य न तत्रानियतो गुणः।। (च.सू. 1/50)

'पृथ्वी' आदि द्रव्यों का अपने गुणों के साथ अपृथग्भाव होना समवाय है। उदा. पृथ्वी में गंध, जल में शीतलता, अग्नि में उष्णता। यह नित्य है।

अन्नम्भट्ट के मतानुसार – **नित्य सम्बन्ध समवायः** – (तर्क संग्रह)

घटादीनां कपालादौ द्रव्येषु गुणकर्मणौः। तेषु जातेश्च सम्बन्धः समवायः प्रकीर्तितः।। (करिकावली)

कर्म – संयोगे च विभागे च कारणं द्रव्यमाश्रितम्। कर्तव्यस्य क्रिया कर्म, कर्म नान्यदपेक्षते।। (च.सू. 1/52)

आयुर्वेद (तंत्र) का प्रयोजन – इत्युक्तं <u>**कारणं कार्य**</u> धातुसाम्यमिहोच्यते। **धातुसाम्यक्रिया** चोक्ता तंत्रस्यास्य प्रयोजनम्।

रोगों के त्रिविध हेतु – काल बुद्धीन्द्रियार्थानां योगो मिथ्या न चाति च। द्वयाश्रयाणां व्याधीनां त्रिविधो हेतुसंग्रहः।।
रोगों के तीन कारण – काल, बुद्धि, इन्द्रियार्थ का मिथ्या, हीन, अतियोग होना।
आरोग्य का कारण – काल, बुद्धि, इन्द्रियार्थ का सम्यक् योग होना।

रोग और आरोग्य के आश्रय – 2 – शरीरं सत्वसञ्ज्ञं च व्याधिनाम् आश्रयोमतः। तथा सुखानां। (च. सू. 1/55)
रोग और आरोग्य के आश्रय – **शरीर और मन** है।
(वेदना का आश्रय :– **शरीर, मन, और इन्द्रियॉ** – वेदना का अधिष्ठान है। – च. शा. 1/36)

आत्मा – निर्विकारः परस्त्वात्मा सत्वभूतगुणेन्द्रियैः। चैतन्ये कारणं नित्यो **द्रष्टा पश्यति** हि क्रियाः।। (च. सू. 1/56)
निर्विकारः परस्त्वात्मा सर्वभूतानां निर्विशेषः। सत्वशरीरयोश्च **विशेषाद् विशेषोपलब्धिः।।** (च. शा. 4/33)

शारीरिक दोष :– 3 – 1. वायुः पित्तं **कफ**श्चोक्तः शारीरो दोष संग्रहः। (च. सू. 1/57)
2. वात पित्त **श्लेष्माण** एव देह सम्भव हेतवः। (सु. सू. 21/2)
3. वायुः पित्तं कफश्चेति **त्रयो** दोषा समासतः। (अ.हृ.सू. 1/6)
शारीरिक दोष तीन है – वात, पित्त और कफ।

मानसिक दोष :– 2– मानसः पुनरूद्दिष्टो रजश्च तम एव च। मानसिक दोष 2 है – रज, तम – इनमें रज प्रधान है।

चिकित्सा सूत्र – शारीरिक दोष – दैवव्यपाश्रय, युक्तिव्यापश्रय चिकित्सा। **(प्रशाम्यत्यौषधैः पूर्वो दैवयुक्तिव्यापश्रयैः)**
मानसिक दोष – ज्ञान, विज्ञान, धैर्य, स्मृति, समाधि। **(मानसो ज्ञानविज्ञानधैर्यस्मृतिसमाधिभिः)**

वात के गुण :– 7 – **रूक्षः शीतो लघुः सूक्ष्मश्चलोऽथ विशदः खरः। (च. सू. 1/59)**

पित्त के गुण :– 7 – **सस्नेहमुष्णं तीक्ष्णं च द्रवमम्लं सरं कटु। (च. सू. 1/60)**

कफ के गुण :– 7 – **गुरू शीत मृदु स्निग्ध मधुर स्थिर पिच्छिलाः। (च. सू. 1/61)**
वात, कफ दोष के गुणों में 1 गुण समान है – शीत।

असाध्य रोग– **साधनं न त्वसाध्यानां व्याधीनामुपदिश्यते।** असाध्य रोगों की चिकित्सा करने का उपदेश नहीं दिया जाता हैं

रस – रसनार्थो रसः द्रव्यमापः क्षितिस्तथा। निर्वृतौ च, विशेषे च प्रत्ययाः खादयस्त्रयः।। (च. सू. 1/64)
जिह्वा के अर्थ (ग्राह्य विषय) को रस कहते हैं।
1. रस की निर्वृत्ति (अभिव्यक्ति) में कारण द्रव्य – जल और पृथ्वी।
2. रस के विशेष ज्ञान में कारण द्रव्य – वायु, आकाश और अग्नि।

षड्रस :– **(1) स्वादु** (2) अम्ल (3) लवण **(4) कटुक** (5) तिक्त (6) कषाय
- अष्टांग हृदयकार ने कटु रस के लिए **'ऊषण'** और लवण रस के लिए **'पटु'** शब्द का प्रयोग किया है।

दोष	रस	दोष	रस
वात प्रकोपक	कटु, तिक्त, कषाय	वातशामक	लवण, अम्ल, मधुर
पित्त प्रकोपक	कटु, अम्ल, लवण	पित्तशामक	तिक्त, मधुर, कषाय
कफ प्रकोपक	मधुर, अम्ल, लवण	कफशामक	कटु, तिक्त, कषाय

द्रव्य वर्गीकरण – 'किन्चित् दोषप्रशमनं किन्चित् धातुप्रदूषणम्। स्वस्थवृत्तौ मतं किन्चित् **त्रिविधं द्रव्य**मुच्यते।।
प्रभाव भेद से – 3 – (1) दोषप्रशमन (2) धातुप्रदूषण (3) स्वस्थहितकर।

उत्पत्ति भेद से – 3 –

1. **जांगम** – चरक ने जांगम द्रव्यों के मधु, **गोरस,** पित्त, वसा, मज्जा, रक्त, मांस, विड्, मूत्र, चर्म, रेत, अस्थि, स्नायु, श्रृंग, नख, खुर, केश, लोम और रोचन – **ये 19 ग्राह्य अंग बताये है।**

2. **औदभिद** – चरक ने औदभिद द्रव्यों के में मूल, त्वक्, सार, निर्यास, नाल, स्वरस, पल्लव, क्षार, **क्षीर,** फल, पुष्प, भस्म, तैल, कण्टक, पत्र, शुंग, कन्द और प्ररोह – **ये 18 ग्राह्य अंग बताये है।**
   औदभिद के भेद – 4 – वनस्पति, वानस्पत्य, वीरूध, औषध।
   फलः वनस्पतिः, पुष्पैः वानस्पत्यः फलैरपि। ओषध्यः फलपाकान्ताः, प्रतानैः वीरूधः स्मृताः।। – (च. सू. 1/73)

सुश्रुत – स्थावराश्चतुर्विधा वनस्पत्यो, वृक्षा, वीरूध, औषधय इति।	चरकानुसार
(1) वनस्पति – अपुष्पाः फलवन्तो वनस्पत्यः।	(1) वनस्पति – फलः वनस्पति।
(2) वृक्ष – पुष्पफलवन्तो वृक्षाः।	**(2) वानस्पत्य – पुष्पैः वानस्पत्यः फलैरपि।**
(3) वीरूध – प्रतानवत्यः स्तम्बिन्यश्च वीरूध।	(3) वीरूध – प्रतानैः वीरूधः स्मृता।
(4) औषध – फलपाकनिष्ठा औषधय इति।	(4) औषध – औषध्यः फलपाकान्ताः।

3. **पार्थिव** – स्वर्ण, समला **पंचलोहाः,** सिकता, सुधा, **मनःशिला, हरताल,** मणि, लवण, गैरिक और अंजन – पार्थिव द्रव्य है
   ग्राह्य अंग – (1) स्थावर – 8 – (सुश्रुत) (2) औदभिद् – 18, जांगम – 19 – (चरक)

द्रव्यों का वर्गीकरण – (कुल – 66 द्रव्य)

मूलिनी	फलिनी	महास्नेह	लवण	मूत्र	दुग्ध	शोधनवृक्ष
↓	↓	↓	↓	↓	↓	↓
(16)	(19)	(4)	(5)	(8)	(8)	(6)

–: 16. मूलिनी द्रव्य :–

वर्गीकरण	**नाम**
वमन हेतु – (3)	बिम्बी, शणपुष्पी, वचा (हैमवती)। – बिश्व
नस्य हेतु – (2)	श्वेत अपराजिता, ज्योतिष्मती। – श्वेत ज्योति
रेचन हेतु – (11) (वानर = 3 + 2 = 11)	**श्यामा, त्रिवृत्त,** सप्तला, **दन्ती (प्रत्यक्श्रेणी), द्रवन्ती** + हस्तिदन्ती, अजगन्धा, गवाक्षी + अधोगुड़ा, क्षीरिणी, विषाणिका (कर्कटश्रृंगी)।

–: 19 फलिनी द्रव्य :–

वर्गीकरण	**नाम**
वमन हेतु – (8)	षड्वामक (मदन, जीमूतक, इक्ष्वाकु, धार्मागव, कुटज, कृतवेधन), त्रपुष, हस्तिपर्णी।
नस्य हेतु – (1)	अपामार्ग (प्रत्यक्पुष्पी)।
रेचन हेतु – (10) (वानर = 8 + 1 (9) = 10)	आरग्वध, शंखिनी। **द्विविध क्लीतक (मुलेठी) – 1. आनूप 2. स्थलज।** द्विविध करंज – प्रकीर्या (लताकरंज), उदकीर्या (करंज)। विडंग, **कम्पिल्लक**, हरीतिकी, अन्तःकोटरपुष्पी।

नोट :– 1. सप्तला – मूलनी द्रव्य। (सप्तमूल) शंखिनी – फलिनी द्रव्य। (शंख जैसा फल)
2. हस्तिदन्ती – मूलनी द्रव्य। (दन्तमूल) हस्तिपर्णी – फलिनी द्रव्य। (फल के पास पत्ते)
3. प्रत्यक्श्रेणी – मूलनी द्रव्य। (मूलश्रेणी) प्रत्यक्पुष्पी – फलिनी द्रव्य। (फल के पास पुष्प)

महास्नेह – 4 – 'सर्पिस्तैलं वसा मज्जा **स्नेहो दिष्टश्चतुर्विधः।** पानाभ्यन्जनबस्त्यर्थ नस्यार्थ चैव योगतः।।

चतुर्विध स्नेह –. घृत, तैल, वसा और मज्जा – ये महास्नेह के **4 प्रकार** है।

गुणकर्म – स्नेहना जीवना बल्या वर्णोपचयवर्धनाः। एंव वातपित्तकफापहाः।

पंचलवण :– (1) सौवर्चल (2) सैन्धव (3) विड **(4) औद्भिद** (5) सामुद्र – **(च. सू. 1/90)**

(1) सैन्धव (2) सामुद्र (3) विड (4) सौवर्चल **(5) रोमक** – **(र. त. 2/3)**

गुण – स्निग्ध, उष्ण, तीक्ष्ण व अग्निदीपक। कर्म – अजीर्ण, आनाह, शूल, वातव्याधि, गुल्म और उदर में उपयोगी।

अष्ट मूत्र :– आवि मूत्र, अजा मूत्र, गोमूत्र, माहिष मूत्र, हस्ति मूत्र, उष्ट्र मूत्र, वाजि मूत्र और खर मूत्र। – ये अष्ट मूत्र है।

गाय, बकरी, भेड़, भैस का मूत्र – **(मादा) – लघु गुण** – गोऽजाविमहिषीणां तु स्त्रीणां मूत्रं प्रशस्यते। – भावप्रकाश
गदहे, ऊंट, हाथी, घोड़े का मूत्र – **(नर) – गुरू गुण** – खरोष्ट्रेभनराश्वानां पुंसां मूत्रं हितं स्मृतम्। – भावप्रकाश

मूत्रों के सामान्य गुण :– उष्णं तीक्ष्णमथोऽरूक्षं कटुकं लवणान्वितम्। (च. सू. 1/96)

✓ मूत्र में गुण में उष्ण, तीक्ष्ण, अरूक्ष, प्रधान रस कटु और लवण अनुरस वाला होता है।

प्रयोग रूप :– उत्सादन, आलेप, आस्थापन, विरेचन, स्वेदकर्म, उपनाह एवं परिषेक रूप में मूत्र का प्रयोग होता है।

सामान्य प्रयोग – आनाह, अगद, उदररोग, अर्शरोग, गुल्म, कुष्ठ और किलास में हितकारी ।

दीपनीयं विषघ्नं च क्रिमिघ्नं चोपदिश्यते। **पाण्डुरोग उपसृष्टानामुत्तमं शर्म चोत्यते।।**

श्लेष्माणं शमयेत्पीतं मारूतं चानुलोमयेत्। कर्षेत् पित्तमधोमागमित्यस्मिन् गुणसंग्रहः।।

दोषप्रभाव :– मूत्र पाण्डु में उत्तम आरोग्यदाता, कफशामक, वातानुलोमक और पित्तविरेचक होता है।

मूत्रों के गुणों में मतमतान्तर :–

1. पित्तविरेचक – (चरक) – कर्षेत् पित्तमधोमागमित्यस्मिन् गुणसंग्रहः। (च. सू. 1/100)
2. पित्तवर्धक – (वाग्भट्ट) – पित्तलं रूक्षोतीक्ष्णोष्णं लवणानुरसं कटु।
3. विषघ्न – (सुश्रुत), – मूत्रं मानुषं च विषापहम्। (सु. सू. 45/220)
   मूत्रं मानुषं तु विषापहम्। (अ. सं. सू.)
4. रसायन – (भावप्रकाश) – नरमूत्रं गरं हन्ति तद् विध सेवितम् रसायनम्।

मूत्र	**प्रधान रस**
गोमूत्र	समधुरं
अजा मूत्र	कषायमधुरं (कटु तिक्तान्वितं – सुश्रुत)
माहिष मूत्र	सक्षार
उष्ट्र मूत्र	**तिक्त**
वाजि मूत्र	**तिक्त, कटु**
आवि मूत्र	**तिक्त** (सक्षार तिक्त कटु – सुश्रुत)
हस्ति मूत्र	लवण (सतिक्त लवणं – सुश्रुत)
खर मूत्र	कटु रस

मूत्र	**प्रधान कर्म रोगघ्नता**
गोमूत्र	किंचित् दोषघ्न, कृमिकुष्ठनुत, कण्डू शामक, उदररोगे हितम्।
अजामूत्र	पथ्य, दोषान्नि हन्ति (त्रिदोषघ्न)।
महिष मूत्र	उदरघ्न, शोफ, अर्शनाशक + सर।
आविमूत्र	स्निग्ध एवं पित्त अवरोधी।
उष्ट्रमूत्र	श्वास, कास और अर्शनाशक
वाजिमूत्र	कुष्ठव्रणविषापहम्।
हस्ति मूत्र	हितं तु क्रिमिकुष्ठिनाम्, प्रशस्तं बद्धविण्मूत्र, विष, श्लेष्मामय, अर्श नाशक।
खर मूत्र	उन्माद, अपस्मार, ग्रहबाधा नाशक।

अष्ट दुग्ध – गाय, भैस, भेडी, बकरी, हथिनी, घोड़ी, ऊंटनी और स्त्री दुग्ध।

सामान्य गुण – 'प्रायशो मधुरं स्निग्धं शीतं स्तन्यं पयो मतम्। प्रीणनं बृंहणं वृष्यं मेध्यं बल्यं मनस्करम्।
जीवनीयं श्रमहरं श्वासकासनिबर्हणम्।। हन्ति शोणितपित्तं च सन्धानं विहतस्य च। (च.सू. 1/108)

रोगघ्नता – दुग्ध श्वास, कास, रक्तपित्त, भग्न, तृष्णा, और **क्षीणक्षत में श्रेष्ठं** है।

पाण्डुरोगेऽम्लपित्ते च शोषे गुल्मे तथोदरे। अतिसारे ज्वरे दाहे च श्वयथौ च विशेषतः। (च.सू. 1/111)

योनि, शुक्र दोष, मूत्ररोग, प्रदर, बिवन्ध, और वातपित्त रोगियों के लिए पथ्य होता है।

शोधन वृक्ष :– 6 – (1) **क्षीरत्रय** – दुग्ध उपयोगी – 3 द्रव्य बतलाए है। (अर्क, स्नुही, वट, – रस तरंगिणी)।

1. अर्क – (वमन, विरेचन दोनों)
2. स्नुही – (विरेचन)
3. अश्मन्तक – (वमन)

(2) **त्रिवल्कल** – त्वक् उपयोगी – 3 द्रव्य बतलाए है।

1. पूतीक (लताकरंज) – विरेचन कर्म।
2. तिल्वक (लोध्र) – विरेचन कर्म।
3. कृष्णगन्धा (शोभान्जन)– परिसर्प, शोथ, अर्श, दद्रु, विद्रधि, गण्ड, कुष्ठ और अलजी में।

1. **तत्वविद – 'योगविन्नारूपज्ञस्तासां तत्वविदुच्यते'। – (च. सू. 1/123)**
   जो वैद्य औषध के नाम एवं रूपों के साथ–साथ उन औषधों की सम्यक् योजना करने में समक्ष हो।

2. **भिषगुत्तमः – योगमासां तु यो विद्यात् देशकालोपपादितम्। पुरूषं पुरूषं वीक्ष्य स ज्ञेयो भिषगुत्तमः। (च. सू. 1/124)**
   जो वैद्य रोगी की विधिवत परीक्षा करके देश, काल आदि के विचार कर तदनुसार औषधों के योग को जानता है।

3. **यथा विषं यथा शस्त्रं यथाग्निरशनिर्यथा। तथौषधमविज्ञातं विज्ञातममृतं यथा।। (च. सू. 1/125)**
   अज्ञात औषध 'विष, शस्त्र, अग्नि या इन्द्र वज्र' के समान घातक होती है।
   जबकि विज्ञात औषध 'अमृत' के समान प्राणरक्षक होती है।

4. **योगादपि विषं तीक्ष्णमुत्तमं भेषजं भवेत। भेषजं चापि दुर्यक्तं तीक्ष्णं सम्पद्यते विषम्।। (च. सू. 1/127)**
   अत्यन्त तीक्ष्ण विष भी सम्यक् प्रयोग करने से 'उत्तम भेषज' बन जाता है।
   जबकि श्रेष्ठ औषध भी दुर्युक्त प्रयोग करने से 'तीक्ष्ण विष' बन जाता है।

5. **मूर्ख वैद्य द्वारा रोगी से धन लेने की निन्दा :–**
   जहरीले सांप का विष पीकर अपने प्राण गवाना, या उबाले हुये **ताम्र** का जल पी लेना या
   अग्नि में तपाये हुए लोहे की गोले खा जाना – ये सब अच्छा है

✓ **नतु श्रुतवतां वेषं बिभ्रता शरणागतात्। गृहीतमन्नं पानं वा वित्तं वा रोग पीडितात्। – (च. सू. 1/133)**
   किन्तु छदम्चर वैद्य का वेष बनाकर रोग से पीडित, शरण में आए हुए रोगी से अन्न, पान अथवा धन लेना
   कदापि ठीक नहीं है।
   (पुत्रवेदवैनं पालयेत आतुरं भिषक्। (सु. सू. 25/44) – वैद्य रोगी की पुत्र के समान चिकित्सादि द्वारा रक्षण करे)

6. **तदेव युक्तं भैषज्यं यदारोग्याय कल्पते।** स चैव भिषजां श्रेष्ठो रोगेभ्यो यः प्रमोचयेत्।। **(च. सू. 1/133)**

7. दीर्घजीवितीय अध्याय – में **कुल श्लोक की संख्या 141** है।

2. अपामार्गतण्डुलीय अध्याय – (अतः परिमार्जन द्रव्यों का वर्णन)

(दीर्घजीवतीय) दीर्घ जीवन के लिए शरीर के उत्तमांग शिर का स्वस्थ रहना अत्यन्त आवश्यक है। अतः आचार्य चरक ने श्रेष्ठ शिरोविरेचक – अपामार्ग से द्वितीय अध्याय का प्रारम्भ कर 'अपामार्ग तण्डुलीय' नाम रखा।

(1) शिरोविरेचन द्रव्य :– (25)

अपामार्गस्य बीजानि पिप्पलीः मरिचानि च। विडंगान्यथ शिग्रूणि सर्षपांस्तुम्बुरूणि।।
...क्रिमिव्याधावपस्मारे घ्राण नाशे प्रमोहके।। (च. सू. 2/3–6)

अपामार्ग, त्रिकटु, **हरिद्राद्वय, लवणद्वय,** विडंग, शिग्रु, सर्षप, **सुरसा**, हरेणुका, शिरीष बीज, लशुन, **ज्योतिष्मती।**

नोट :–

- ✓ त्रिकटु के सभी द्रव्य पिप्पली, मरिच, और नागर का वर्णन शिरो विरेचन द्रव्यों में किया है।
- ✓ चरक (च. वि. 8/151) और सुश्रुत (सु. सू. 39/6) दोनों ने **'वचा एवं ज्योतिष्मती'** को शिरोविरेचक द्रव्यों में रखा है।
- ✓ शिरोविरेचन द्रव्यों में **'मधुर एवं अम्लरस'** नहीं होता है। (च. वि. 8/151)

(2) वमनार्थ द्रव्य :– (10)

मदनं मधुकं निम्बं जीमूतं कृतवेधनम्। पिप्पली कुटज इक्ष्वाकु एला धामार्गवाणि च।। (च. सू. 2/7)

षड्वामक + मधुक, पिप्पली, निम्ब, एला – (षड्वामक मीठे PiNE में)।

(3) विरेचन द्रव्य :– (17)

त्रिवृतां त्रिफलां दन्तीं नीलिनी सप्तलां वचाम्। कम्पिल्लक गवाक्षी च क्षीरणीमदुकीर्यकाम्।।
पीलून्यारग्वधं द्राक्षां द्रवन्ती निचुलानि च। पक्वाशयेगते दोषे विरेकार्य प्रयोजयेत्।। (च. सू. 2/9–10)

नवविरचेन में से :– त्रिवृत्त, आरग्वध, सप्तला, दन्ती, द्रवन्ती। + त्रिफला।
अन्य विरेचक :– द्राक्षा, कम्पिल्लक, गवाक्षी, (इन्द्रायण), क्षीरिणी (स्वर्ण क्षीरी)।
पीलू, नीलिनी, उदयकीर्या, निचुल, वचा। (पीला, नीला, उसका, नया, बॉयफ्रेन्ड)

नोट :– सर्वप्रथम विरेचन के लिए – 'विरेक' शब्द का प्रयोग किया।

(4) आस्थापन/अनुवासन :–(29)

(1) 10. दशमूल द्रव्य।
(2) 5. पंचलवण।
(3) 4. चर्तुस्नेह।
(4) मदन, पलाश, पुर्ननवा, **गुडूची**।
(5) यव, **एरण्ड,** बला।
(6) कोल, कुलत्थ, कृत्तृण।

नोट :–

1. त्रिकटु – शिरोविरेचन।
2. त्रिफला – विरेचन।
3. दशमूल – आस्थापन/अनुवासन।

पिप्पली – शिरोविरेचन, वमन दोनों में वर्णन।
मदनफल – वमन, आस्थापन/अनुवासन दोनों में वर्णन।

पंचकर्म :–– पंच कर्माणि कुर्वीत मात्राकालौ विचारयन्। – (च. सू. 2/15)

- ✓ चरक संहिता में सर्वप्रथम **पंचकर्म शब्द** का उल्लेख यही पर आया है।

पंचकर्म से पूर्व स्वेदन, स्वेदनादि पूर्वकर्म सम्यक् रूप से करने निर्देश दिया है।

युक्ति का महत्व :– मात्रा कलाश्रया युक्तिः सिर्द्धियुक्तौ प्रतिष्ठिता। तिष्ठत्युपरि युक्तिज्ञो द्रव्यज्ञानवतां सदा।।

- ✓ औषध की सम्यक् योजना (युक्ति) – **''मात्रा और काल''** पर निर्भर करती है।
- ✓ युक्ति में सिद्धि (सफलता) स्थित है, द्रव्यज्ञान की रखने वाले वैद्य के स्थान पर 'युक्तिज्ञ' सदा श्रेष्ठ होता है।

अष्टाविशंति यवागू

चरक ने साध्य रोगों में प्रयोज्य 28 यवागू (22 यवागू + 6 पेया) का वर्णन किया है।

✓ **(यवागू में चावल के कण (तण्डुल) और जल का अनुपात 1 : 6 और पेया में 1 : 14 होता है – सुश्रुत)**

6 पेया :– (1) पाचनी एवं ग्रहिणी पेया (2) वातविकारनाशक पेया (3) मूत्रकृच्छ्रनाशिनी पेया। (4) पित्तश्लेष्मातिसार नाशक (5) रक्तातिसार नाशक (6) आमातिसार नाशक।

1. दीपनीय, शूलघ्नी यवागू	पिप्पली पिप्पलीमूल चव्यचित्रकनागरैः।
2. पाचनी एवं ग्राहिणी पेया	**दधित्थबिल्वचांगेरीतक्रदाडिमा** साधिता।
3. वातज विकारनाशक पेया	पन्चमूल (लघुपन्चमूल) साधित।
4. हिक्का, कास, श्वासनाशिनी	**दशमूल** साधित।
5. पित्तश्लेश्मातिसार नाशक	शाल**पर्णी**बलाबिल्वैः पृश्नि**पर्ण्या** च साधिता।
6. रक्तातिसारनाशक पेया	**पयस्यर्धोदके** च्छागे ह्रीबेरोत्पलनागरैः।
7. आमातिसारघ्नी पेया	दघात् **सातिविषां** पेयां सामे साम्लां सनागराम्।
8. मूत्रकृच्छ्रनाशिनी पेया	**श्वदंष्ट्रा**कण्टकारिभ्यां मूत्रकृच्छे सफाणिताम।
9. तृष्णाशामक यवागू	**मृद्वीका**सारिवालाजपिप्पली मधुनागरैः।
10. क्रिमिघ्नी यवागू	**विडंग**पिप्पलीमूल शिग्रुभिः मरिचेन च।तक्रसाधिता
11. विषघ्नी यवागू	विषघ्नी च **सोम**राजी विपाचिता।
12. कृशतानाशक यवागू	सिद्धा **वराह**निर्यूहे यवागूः बृहणी मता।
13. कृशताकारक यवागू	**गवेधुकानां** भृष्टानां कर्शनीया समाक्षिका।
14. स्नेहनार्थ यवागू	**सर्पिष्मती बहुतिला** स्नेहनी लवणान्विता
15. रूक्षणार्थ यवागू	**कुशा**मलकनिर्यूहे श्यामाकानां विरूक्षणी।
16. पक्वाशयशूलघ्नी	**यमके मदिरासिद्धा** पक्वाशयरूजापहा।
17. ग्राही यवागू	**जम्ब्वाम्रास्थि**–दधित्थाम्लबिल्वैः साङग्राहिकी मता।
18. रेचक यवागू	**शार्क**र्मासैः तिलमाषैः सिद्ध वर्चो निरस्यति।
19. भेदिनी यवागू	**क्षार**चित्रकहिङ्ग्वम्लवेतसैः भेदिनी।
20. वातानुलोमनी यवागू	**अभया**पिप्पलीमूलविश्वैः वातानुलोमनी।
21. घृतव्यापद नाशक	तक्रसिद्धा यवागूः।
22. तैलव्यापद नाशक	तक्र**पिण्याक** साधिता।
23. क्षुधानाशक नाशक	क्षुधं हन्यात् **अपामार्गक्षीर** गोधारसैः श्रृता
24. कण्ठरोग नाशक	कण्ठया यवानां यमके **पिप्ल्यामलकैः** श्रृता।
25. विषमज्वरघ्नी	**गव्यमांसरसैः** साम्ला विषमज्वरनाशिनी।
26. शिश्नपीडाशामक	**ताम्रचूडरसे** सिद्धा रेतोमार्गरूजापहा।
27. बाजीकरण यवागू	**समाष**विदला वृष्या घृतक्षीरोपसाधिता।
28. मदहर यवागू	**उपोदिका**दधिम्यां तु सिद्धा मदविनाशिनी

अष्टाविंशतिरित्येता **यवाग्वः परिकीर्तिताः**। पंचकर्माणि चाश्रित्य प्रोक्तो भैषज्यसंग्रहः।। (च. सू. 2/34)

चिकित्सक की अर्हताए :– (5) – (1) स्मृतिमान (2) हेतुज्ञ (3) युक्तिज्ञ (4) जितेन्द्रिय (5) प्रतिपत्तिमान्।

3. आरग्वधीय अध्याय – (बहिः परिमार्जन द्रव्यों का वर्णन)

✓ चरक ने सिद्धतम चूर्ण/लेप/प्रदेह की **संख्या – 32** बतलायी हैं।
✓ चरक ने बहिः परिमार्जन हेतु प्रयोज्य 32 लेपों में 1 **स्वेदहर प्रघर्ष** का वर्णन किया है।
✓ चरकोक्त आरग्वधीय अध्याय में कुल सूत्रों की संख्या – 30 है।
✓ **कुष्ठहर 6 सिद्धतम योग :–** षड् सिद्ध योगों (चूर्ण) में **गोपित्त (गोरोचन) की भावना** देते हैं।

कुल 32 लेपों में :–

(1) **15 – कुष्ठनाशक।**
(2) 4 – वातविकार नाशक।
(3) 3 – वातरक्त नाशक।
(4) 2 – शिरःशूल नाशक।
(5) 2 – दाह शामक।
(6) 1 – उदरशूलनाशक।
(7) 1 – पार्श्वशूलनाशक।
(8) 1 – शीतनाशक।
(9) 1 – विषघ्न लेप।
(10) 1 – स्वेदहर लेप।
(11) 1 – दुर्गन्धनाशक।

कुष्ठनाशक :– (1) – **मनःशिलाले** मरिचानि तैलमार्क पयः कुष्ठहरः प्रदेहः।
(2) – **तुत्थं** विडंग मरिचानि कुष्ठं लोध्रं च तद्वत् समनःशिलं स्यात्। **(च. सू. 3/12)**
(3) – **रसांजन** सप्रपुनाडबीजं युक्तं कपित्थस्य रसेन लेपः।
(4) – **करंजबीज** एडगजं सकुष्ठं गोमूत्रपिष्ठं च परः प्रदेहः। **(च. सू. 3/13)**

वातहर :– (1) – आनूपमत्स्यमिष **वेसवारैः** उष्णैः प्रदेहः पवनापहः स्यात।
(2) – **स्नेहैश्चतुभिः** दशमूलमिश्रैर्गन्धौषधैश्चानिलहः प्रदेहः। **(च. सू. 3/19)**
(3) – कुष्ठं शताहवां सवचां यवानां चूर्ण **सतैलाम्ल**मुन्ति वातें **(च. सू. 3/20)**

उदरशूल – (1) – **तक्रेण युक्तं** यवचूर्णमुष्णं सक्षारमर्ति जठरे निहन्यात्। **(च. सू. 3/20)**

वातरक्त – (1) – वाते सरक्तै सघृतं प्रदेहो **गोधूम** चूर्ण छगलीपयश्च। **(च. सू. 3/23)**

शिरःशूलहर– (1) – **नतोत्पलं चन्दन**कुष्ठयुक्तं शिरोरूजायां सघृतं प्रदेहः। **(च. सू. 3/23)**

विषघ्न लेप– (1) – **विषं शिरीषस्तु ससिन्धुवारः।** **(च. सू. 3/28)**

स्वेदहर – (1) – शिरीषलामज्जक **हेमलोध्रै** त्वग्दोषसंस्वेदहरः **प्रघर्षः।** **(च. सू. 3/29)**

दुर्गन्धनाशक –(1) – **पत्राम्बु**लोध्राभय चन्दनानि शरीरदौर्गन्ध्यहरः प्रदेहः। **(च. सू. 3/29)**

सुश्रुत – 3 – भेद – 1. प्रलेप 2. प्रदेह 3. आलेप ।

सुश्रुतानुसार आलेप के भेद	उपयोग	गुण
1. प्रलेप	– –	शीत, तनु, अविशोषी, विशोषी
2. प्रदेह	वात, कफज व्याधि में	उष्ण/शीत, बहल, अविशोषी।
3. **आलेप**	रक्त, पित्तज व्याधि में	आलेप दोनों की मध्य की स्थिति है।

4. षड्विरेचनशताश्रितीय अध्याय

वमन विरेचन योग :– इह खलु षड् विरेचनशतानि भवन्ति। (च. सू. 4/3) – आयुर्वेद शास्त्र में 600 विरेचन योग है।

वमन योग	–	**355**	**विरेचन योग**	–	**245**
1. मदनफल	–	133	1. श्यामा त्रिवृत्त	–	110
2. जीमूतक	–	**39**	2. चतुरंगुल	–	12
3. इक्ष्वाकु	–	45	3. तिल्वक	–	16
4. धामार्गव	–	60	4. स्नुही	–	20
5. वत्सक	–	18	5. सप्तला शंखिनी	–	**39**
6. कृतवेधन	–	60	6. दन्ती द्रवन्ती	–	48

विरेचन योगों के आश्रय :– 6 – षड् विरेचनाश्रया इति क्षीर मूलत्वक् पत्रपुष्पफलानि इति। (च. सू. 4/5)

(1) मूल (2) त्वक् (3) पत्र (4) पुष्प (5) फल **(6) क्षीर**

शिरोविरेचन द्रव्यों के आश्रय – 7 – मूल, त्वक्, पत्र, पुष्प, फल, **कन्द एवं निर्यास। (च. वि. 8/151)**

कषाय योनि – 5 – (1) मधुर कषाय, (2) अम्ल कषाय, (3) तिक्त कषाय, (4) कटु कषाय, (5) कषाय कषाय।

महाकषाय – 50, कषाय – 500।

–: पंचविध कषाय कल्पनाए :–

1. चरकानुसार – स्वरसः, कल्कः, श्रृतः, शीतः फाण्टः कषायश्चेति। **तेषां यथापूर्व बलाधिक्यम्**।।

अतः कषायकल्पना **व्याध्यातुरबलातुरबलापेक्षिणी।** पंच विध कषाय कल्पनाएं पूर्व के क्रम में बलवान होती है।

2. सुश्रुतानुसार :– क्षीर → स्वरस → कल्क → श्रृत → शीत → फाण्ट → **उत्तरोतर लघु।**

क्षीरं रसः कल्कमथो कषायः श्रृतश्च शीतश्च तथैव फाण्टम। कल्पाः षडेते खलु भेजानां **यथोत्तरं ते लघवः प्रदिष्टाः।**

3. वाग्भट्ट :– रसः कल्कः श्रृतः शीतः फाण्टश्चेति प्रकल्पना। **पंचधैवं कषायाणां पूर्व पूर्व बलाधिका।।**

–: चक्रपाणि के अनुसार कषाय कल्पनाए :–

कषाय कल्पना :– कषायाणां यथोक्त द्रव्याणां कल्पनमुपयोगार्थ संस्करणं कषायकल्पनम्।

(1) स्वरस :– यन्त्रनिष्पीडिताद् द्रव्याद् रसः स्वरस उच्यते।

(2) कल्क :– यः पिण्डो रसपिष्टानां स कल्कः परिकार्तितः।

(3) श्रृत :– वह्नौ तु क्वथितं द्रव्यं श्रृतमाहुः चिकित्सकाः।

(4) शीत :– द्रव्यादापोत्थितात्तोये तत्पुनर्निशि संस्थितात्। कषायो योऽभिनिर्याति स शीतः समुदाहृतः।।

(5) फाण्ट :– क्षिप्त्वोष्णतोये मृदितं तत् फाण्टं परिकीर्तितम्।

–: महाकषाय/दशेमानि :–

(1) जीवनीय वर्ग – 6 – जीवनीय, बृंहणीय, लेखनीय, भेदनीय, सन्धानीय, दीपनीय।

(2) तृप्तिघ्नादि वर्ग – 6 – तृप्तिघ्न, अर्शोघ्न, कुष्ठघ्न, कण्डूघ्न, क्रिमिघ्न, विषघ्न।

(3) बल्यादि वर्ग – 4 – बल्य, वर्ण्य, कण्ठय, हृद्य।

(4) स्तन्यजननादि – 4 – स्तन्यजनन, स्तन्यशोधन, शुक्रजनन, शुक्रशोधन।

(5) स्नेहोपगादि – 7 – स्नेहीपण, वमनोपग, विरचनोपग, आस्थापनोपग, अनुवासनोपग, शिरोविरेचनोपग।

(6) छर्दिनिग्रहणादि – 3 – छर्दिनिग्रहण, तृष्णानिग्रहण, हिक्कानिग्रहण।

(7) पुरीष संग्रहणीय – 5 – पुरीषसंग्रहणीय, पुरीषविरंजनीय, मूत्रसंग्रहणीय, मूत्रविरंजनीय, मूत्रविरेचनीय।

(8) कासहरादि वर्ग – 5 – कासहर, श्वासहर, ज्वरहर, शोथहर, श्रमहर।

(9) दाह प्रशमनादि – 5 – दाहप्रशमन, शीतप्रशमन, उदर्दप्रशमन, अंगमर्दप्रशमन, शूलप्रशमन।

(10) शोणिस्थापनादि – 5 – शोणितस्थापन, वेदनास्थापन, संज्ञास्थापन, प्रजास्थापन, वयःस्थापन।

(1) जीवनीय – जीवक, ऋषभक, मेदा, महामेदा, काकोली, क्षीरकाकोली, माषपर्णी, मुदग्पर्णी, जीवन्ती और मुलेठी।

(2) बृंहणीय – क्षीरविदारी, विदारीकन्द, ऋष्यगन्धा (विधारा) , + अश्वगंधा, काकोली, क्षीरकाकोली + श्वेतबला, पीतबला, राजक्षवक + **वनकपास (भारद्वाजी)।**

(3) बल्य – ऐन्द्री, **ऋषभी (केवांच), ऋष्यप्रोक्ता (माषपर्णी),** अश्वगंधा, शतावरी, पयस्या, बला, अतिबला, स्थिरा, रोहिणी।

(4) दीपनीय महाकषाय – **षडूषण +** भल्लातकास्थि, **अजमोदा,** अम्लवेतस, हिंगु। (षडूषण BAAH)

(5) शूलप्रशमन महाकषाय – **षडूषण +** अजगन्धा, **अजमोदा,** अजाजी तथा गण्डीर। (षडूषण GAAA)

(6) हृद्य – आम्र, आम्रातक, वृक्षाम्ल, अम्लवेतस, लकुच, करमर्द, बदर (बेर), कुवल (बडी बेर) + दाडिम, मातुलुंग।

(7) विषघ्न महाकषाय – मंजिष्ठा, पालिन्दी, कतक, हल्दी, चंदन, सुवहा, **सूक्ष्मैला, शिरीष, सिन्दुवार, श्लेष्मातक।**

(8) वमनोपग – मधु + मधुयष्ठि, **कोविदार (लाल कांचनार), कर्बुदार (श्वेत कांचनार)** + नीप, बिदुल, बिम्बी, + शणपुष्पी, सदापुष्पी, प्रत्यक्पुष्पा।

(9) उदर्दप्रशमन – तिन्दुक, प्रियाल + बदर, खदिर, कदर + शाल, सप्तपर्ण + **अर्जुन,** असन और अरिमेद।

(10) ज्वरहर महाकषाय – सारिवा, पाठा, मंजिष्ठा, **शर्करा, द्राक्षा, परूषक,** पीलु, हरड, बहेड़ा, आंवला।

(11) पुरीष संग्रहणीय – प्रियंगु, पद्मा, पद्मकेसर, समंका, लोध्र, कट्वंग, **आम्रास्थि,** धातकीपुष्प, **मोचरस,** अनन्ता।

(12) पुरीष विरंजनीय – जामुन, तिलकणा, मधूक, सेमल, शल्लकी, केवॉच, विदारीकन्द, नीलकमल, गन्धविजौरा, **भृष्टमृत्तिका।**

(13) मूत्र संग्रहणीय – वट, उदुम्बर, अश्वत्थ, कपीतन, प्लक्ष + भल्लातक + खदिर, अश्मन्तक, जामुन, आम्र।

(14) मूत्र विरंजनीय – **कमल, नीलकमल (उत्पल), सुगन्धित कमल, शतपत्र, पुण्डरीक, नलिन,** मुलेठी, प्रियंगु, कुमुद और धातकीपुष्प। (**कमल के भेदों** का वर्णन मूत्रविरंजनीय महाकषाय में आया है)

(15) मूत्र विरेचनीय – **कुश, कास, दर्भ, गुन्द्रा, इत्कटमूल,** वृक्षादनी, वसुक, वाशेर, पाषाणभेद, गोक्षुर।

(16) स्तन्यजनन – **कुश, कास, दर्भ, गुन्द्रा, इत्कटमूल,** शालि, षष्ठिक, कत्तृण, वीरण, इक्षुवालिका।

(17) स्तन्यशोधन – इन्द्रयव, गुडुची, सारिवा, कटुकी, मुस्तक, देवदारू, मूर्वा, शुण्ठी, पाठा, चिरायता।

(18) शुक्रजनन – जीवक, ऋषभक, काकोली, क्षीरकाकोली, माषपर्णी, मुद्गपर्णी, मेदा, **वृद्धरूहा, कुलिंग जटिला।**

(19) शुक्रशोधन – **कूठ, कट्फल, कोकिलाक्ष, काण्डेक्षु, कदम्बनिर्यास, खस,** ईख, एलवालुक, वसुक, समुद्रफेन।

(20) प्रजास्थापन – ऐन्द्री, **ब्राह्मी,** शतवीर्या, सहस्रवीर्या, अमोधा (पाटला), अव्यथा (गुडूची), अरिष्टा, शिवा (हरीतकी), वाट्यपुष्पी और विष्वक्सेनकान्ता।

(21) वयःस्थापन – अभया, **अमृता,** आमलकी, शतावरी, श्वेत अपराजिता, जीवन्ती, पुनर्नवा, स्थिरा, मुक्ता, मण्डूकपर्णी।

(22) शोणित स्थापन – रूधिर, मधु, मधुक, मृत्कपाल, **मोचरस, शर्करा,** प्रियंगु, लोध्र, धान का लाजा, गैरिक।

(23) शोथहर महाकषाय – दशमूल के द्रव्य। **(दशमूल – यह संज्ञा सर्वप्रथम सुश्रुत की दी हुयी है।)**

(24) हिक्कानिग्रहण – **शटी, पुष्करमूल,** वृहती, बदरबीज, वृक्षरूहा, कण्टकारी, दुरालभा अभया, पिप्पली, कर्कटश्रृंगी।

(25) श्वासहर – **शटी, पुष्करमूल,** अम्लवेतस, एला, हिंगु, अगरू, सुरसा, तामलकी, जीवन्ती और चण्डा।

(26) कुष्ठघ्न – खदिर, अभया, आमलकी, हरिद्रा, भल्लातक, सप्तपर्ण, **आरग्वध,** करवीर, विडंग और **जातिप्रवाल।**

(27) कण्डूठघ्न – चंदन, नलद, नक्तमाल, दारूहरिद्रा, कुटज, निम्ब, **कृतमाल,** सर्षप, मुलेठी और **नागरमोथा।**

(28) तृष्णानिग्रहण – शुण्ठी, धन्यवास, मुस्तक, पर्पटक, चंदन, किराततिक्त, **गुडूची,** ह्रीबेर, धान्यक, और पटोल।

(29) वेदना स्थापन – शाल, कायफल, कदम्ब, पद्मक, तुम्ब, मोचरस, शिरीष, जलवेंत एलुआ, और **अशोक।**

(30) विरेचनोपग – हरड, बहेडा, आवला, द्राक्षा, काश्मर्य, परूषक, **कुवल, बदर, कर्कन्धु** और पीलू।

- ✓ चरक ने जीवनीय से लेकर वयस्थापन तक – 50 महाकषाय का वर्णन किया है।
- ✓ चरक ने 50 महाकषायो का लक्षण और उदाहरण के रूप में वर्णन किया है।
- ✓ चरक ने दीपनीय महाकषाय का वर्णन किया है। किन्तु पाचनीय महाकषाय का वर्णन नहीं किया है।
- ✓ काकोली, क्षीरकाकोली – जीवनीय, बृंहणीय, शुक्रजनन, स्नेहोपग और अंगमर्दप्रशमन में।
- ✓ महाकषायों में मधुक (मुलेठी) शब्द सर्वाधिक 11 बार, पिप्पली 9 बार आया है।
- ✓ 50 महाकषायों में वर्णित कुल औषध द्रव्यो की संख्या 276 है।
- ✓ जातिप्रवाल का वर्णन कुष्ठघ्न महाकषाय में आया है।
- ✓ आरग्वध का वर्णन कुष्ठघ्न व कण्डूघ्न दोनों महाकषाय में आया है।
- ✓ अमृता/गुडूची का वर्णन तृष्णानिग्रहण व वयस्थापन दोनों महाकषाय में आया है।
- ✓ शर्करा का वर्णन ज्वरघ्न, शोणितस्थापन व दाहप्रशमन तीनों में आया है।
- ✓ मोचरस का वर्णन पुरीष संग्रहणीय, शोणितस्थापन व वेदनास्थापन तीनों में आया है।
- ✓ **कमल के भेदों** का वर्णन मूत्रविरंजनीय महाकषाय में आया है।
- ✓ **बेर के भेदों** का वर्णन विरेचनोपग महाकषाय में आया है।
- ✓ मूत्रविरंजनीय द्रव्य शीतवीर्य प्रधान होते है और मुख्यतः पित्तज प्रमेह नाशक होते है।
- ✓ चरक संहिता में वर्णित ''पुरीष संग्रहणीय'' महाकषाय के द्रव्य 'पक्व संग्राहक अर्थात स्तम्भन' है।
- ✓ **चरक संहिता में वर्णित तृप्तिघ्न महाकषाय को योगीनाथसेन ने ''अरोचकहर'' कहा हैं।**
- ✓ अर्जुन का वर्णन उदर्द प्रशमन महाकषाय में आया है न कि हृद्य महाकषाय में।
- ✓ अशोक का वर्णन वेदनास्थापन महाकषाय में आया है न कि शोणित स्थापन महाकषाय में।
- ✓ किराततिक्त का वर्णन स्तन्यशोधन महाकषाय में आया है न कि ज्वरघ्न महाकषाय में।

नोट :– न चाप्यतिसंक्षेपोऽल्पबुद्धीनां सामर्थ्यायोपकल्पते, तास्माद**नति संक्षेपेणानतिविस्तेण** चोपदिष्टाः। **(च. सू. 4/20)**

रसा लवणवर्ज्याश्च कषाया इति संज्ञिताः। तस्मात् पंचविधा योनिः कषायाणामुदाहृता। (च. सू. 4/24)

लवण रस को छोडकर शेष रसों का नाम कषाय है।

भिषग्वर :– तेषां कर्मसु बाह्येषु योगमाभ्यन्तरेषु च। संयोगं च प्रयोगं च यो वेद स भिषग्वरः। (च. सू. 4/29)

5. मात्राशितीय अध्याय

आहार मात्रा :– (1) मात्राशी स्यात्। **आहारमात्रा पुनः अग्निबलापेक्षिणी।**

मात्रापूर्वक भोजन करें, आहार की मात्रा जठराग्नि के बल की अपेक्षा करती है।

(2) गुरू आहार – पूर्णभोजन, आधीतृप्ति। (पृथ्वी, जल प्रधान)।

लघु आहार – कम भोजन, पूर्णतृप्ति। (वायु, अग्नि प्रधान)।

(3) **द्रव्यापेक्षया च त्रिभाग सौहित्यम् अर्धसौहित्यं वा गुरूणामुपदिश्यते।** – आहार मात्रा द्रव्य पर निर्भर है। गुरू द्रव्यों का आहार पूर्ण आहार मात्रा का 1/3 या 1/2 भाग लेने का उपदेश किया जाता है।

(4) **लघूनामपि च नाति सौहिव्यम् अग्नेः युक्त्यर्थम्।** – लघु आहार द्रव्यों का भी अति सौहित्य (अधिक मात्रा) जठराग्नि को ठीक नहीं रहने देती।

(5) **मात्रापूर्वक आहार :– बलवर्णसुखायुषा।**

निरन्तर वर्जनीय द्रव्य – वल्लूर (शुष्क मांस – चक्र.), शुष्क शाक, शालूक(कमल कन्द), बिस (कमल की नाल), कृश (दुबले–पतले) पशु का मांस, कूर्चिका, किलाट, सुअर, गाय और भैंस का मांस, **मछली, दही,** उड़द व **यवक (जई)** का लगातार सेवन नहीं करना चाहिए।

निरन्तर सेवनीय द्रव्य– षष्टिकात् शालि मुद्गांश्च सैन्धवामलके यवान्। आन्तरीक्षं पयः सर्पिः जांगल मधु चाभ्यसेत।

षष्टिक चावल, शालि चावल, मूंग, सैंधवलवण, आमलक, **यव,** अन्तरिक्ष जल, दूध, सर्पि, जांगल मांस और **मधु** । – इनका लगातार प्रयोग करना चाहिए।

स्वस्थवृत्त सम्बन्धी वर्णन

(1) अंजन प्रयोग :– सौवीरांजनं नित्य हितमक्ष्णोः प्रयोजयेत्। पन्चरात्रेऽष्टरात्रे वा स्रावणार्थे रसान्जनम्। (च. सू. 5/16)

सौवीरांजन (हितमक्ष्णोः) – नित्य प्रयोग। (सुश्रुत – स्रोत्रोंजन)

रसान्जन **(नेत्र स्रावणार्थे)** – 5वें या 8वें रात्रि में। (7 दिन में 1 बार–वाग्भट्ट)

चक्षुस्तेजोमयं तस्य विशेषाच्छ्लेष्मतो भयम् । ततः श्लेष्महरं कर्म हितं दृष्टेः प्रसादनम्।। (च. सू. 5/16)

1. तीक्ष्णांजन का प्रयोग दिन में नहीं करना चाहिए।
2. नेत्र स्रावणार्थ अंजन प्रयोग रात्रि में करना चाहिए।

(2) धूम्रपान :– प्रायोगिक धूमवर्ती की लम्बाई :–चरक – 8 अंगुल।

विदेह – 6 अंगुल। वाग्भट्ट – 12 अंगुल।

धूमवर्ति घटक द्रव्य – हरेणुका, प्रियंगु, वृहत् एला, केशर, नख, गुग्गुलु, सर्जरस, आदि 34 द्रव्य (च.सू. 5/24) निर्दिष्ट द्रव्यों को पीसकर सरकण्डे की सींक पर यव आकार लेप कर बनाते हैं। प्रमाण – अंगुष्ठप्रमाण मोटी।

लाभ :– धूम्रपान से वात, कफ का निर्हरण।

विधि :– एक आवृत्ति में 3 घूंट, कुल 3 आवृत्ति – कुल 9 आपान (घूंट) धूम्र पीना चाहिए।

धूम्रनेत्र का परिमाण :–

	चरक – 3		**(सुश्रुत – 5)**	**(वाग्भट्ट – 3)**
1.	प्रायोगिक	– 36 अंगुल	48 अंगुल	1. शमन – 40 अंगुल
2.	स्नैहिक	– 32 अंगुल	32 अंगुल	2. मृदु – 32 अंगुल
3.	विरैचनिक	– 24 अंगुल	24 अंगुल	3. तीक्ष्ण – 24 अंगुल
			16 अंगुल (4. कासघ्न, 5. वमनीय)	

धूम्रनेत्र :– ऋजु त्रिकोषाफलितं कोलास्थ्यग्रप्रमाणितम्। **(च. सू. 5/50)** (कोलास्थिमात्रछिद्रे– सुश्रुत)।

प्रायोगिक धूम्रपान के काल :– आचार्य चरक ने प्रायोगिक धूम्रपान के 8 काल बताए हैं।

(1) निद्रा के पश्चात् (2) दातुन के बाद (3) स्नान पश्चात् (4) भोजन पश्चात्।

(5) छींक के पश्चात् (6) वमन के बाद (7) नस्य के बाद (8) अंजन के पश्चात।

धूम्रपान के काल :–

सुश्रुत – 12 – 1. प्रायोगिक – 4 2. स्नैहिक – 5 3. वैरेचनिक – 3।

अष्टांग संग्रह– 24 – 1. प्रायोगिक – 8 2. स्नैहिक – 11 3. वैरेचनिक – 5।

धूम्रपान का दैनिक काल :–

1. प्रायोगिक धूम्र – 2 बार 2. स्नैहिक धूम्र – 1 बार 3. वैरेचनिक धूम्र :– 3 – 4 बार।

सम्यक धूम्रपान :– हृत्कण्ठेन्द्रियसंशुद्धिः लघुत्वं शिरसः शमः। यथेरितानां दोषाणां सम्यक् पीतस्य लक्षणम्। (च. सू. 5/37)

धूम्रपान विधि :– 1. शिर, नेत्र, नासिका रोगों में – नासिका से धूम्रपान।
2. कण्ठगत रोगों में – मुख से धूम्रपान।
3. धूम्रपान में धूम्र मुख से निकाले नहीं तो 'दृष्टीमण्डल' पर विपरीत प्रभाव होती है।
4. नासिका का एक छिद्र बंदकर धूम्र (3 बार) पीने के बाद मुख से निकालना चाहिए।

अति धूम्रपान के उपद्रव :–(1) बाधिर्य (2) अन्धत्व (3) मूकत्व (4) रक्तपित्त (5) शिरोभ्रम।

धूम्रपान का निषेध :–

वाग्भट्ट – 18 वर्ष से पूर्व निषिद्ध। शारंग्धर – 12 वर्ष से पूर्व और 80 वर्ष के बाद निषिद्ध।

(3) नस्य :– प्रावृट, शरद और बंसत ऋतुओं में जब आकाश में बादल न छाए हो नस्य का प्रयोग करना चाहिए।

नस्य से लाभ :–

(1) उर्ध्वजत्रुगत विकारों में सर्वश्रेष्ठ औषध है, नस्य औषध का प्रभाव '**श्रृंगाटक मर्म**' पर होता है।

(2) नस्य के प्रयोग से मन्यास्तम्भ, हनुस्तम्भ, शिरःशूल, अर्दित, अर्धावभेदक, पीनस, शिरःकम्प रोग शान्त हो जाते है।

(3) नस्य के प्रयोग से नेत्र, नासिका, कान की शक्ति नष्ट नहीं होती है, बाल सफेद/कपिल नहीं होते है अपितु अच्छी तरह बढ़कर लम्बे होते हैं।

अणुतैल का नस्य –

1. घटक द्रव्य :– चन्दनागुरूणी पत्रं दार्वीत्वङ्मधुकं वलाम्। (च. सू. 5/63)

2. निर्माण विधि :– सभी घटक द्रव्यों का **100 गुना माहेन्द्र जल में क्वाथ** करते हैं, तैल से 1/10 भाग शेष रहने तक पाक करते है। अन्त में 10वीं बार क्वाथ लेकर पकाने में **अजादुग्ध का प्रयोग** करते है।

3. मात्रा :– अस्य मात्रां प्रयुन्जीत तैलस्यार्धपलोन्मिताम्। (च. सू. 5/68) – अर्द्धपल = 2 तोला।

4. मात्राकाल :– स्निग्धस्विन्नोत्तमागंस्य पिचुना नावनैस्त्रिभिः। त्र्यहात्र्यहाश्च सप्ताहमेतत्कर्म समाचरेत। (च. सू. 5/69)

इस प्रकार प्रतिदिन 3–3 व तीन तीन दिन पर बार कुल 7 बार नस्य का सेवन करना चाहिए।

- **द्वारं हि शिरसो नासा तेन यद् व्याप्यहन्ति तान् – (च सि 9/88)**
- **नासा हि शिरसो द्वार – (अं. ह. सू. 20)**
- शारंग्धर के अनुसार 7 वर्ष से पूर्व नस्य कर्म निषिद्ध है।

(4) दन्तपवन :– आपोथिताग्रं द्वौ कालौ कषायकटुतिक्तकम्। भक्षयेत् दन्तपवनं दन्तमांसान्यबाधयन्। (च. सू. 5/71)

1. दन्तधावन काल – प्रतिदिन प्रातं–सायं दोनों समय।
2. दन्तधावन काष्ठरस – कटु, तिक्त, कषाय रस।
3. लाभ – **निहन्ति गन्धं वैरस्यं जिह्वादन्तास्यजं मलम्।** निष्कृष्य रूचिमाधत्ते सद्यो दन्तविशोधनम्। **(च. सू. 5/72)**
4. **वृक्ष** – 1. चरक – करंज, करवीर, अर्क, मालती, ककुभ (अर्जुन) एवं असन।
   2. अं. हृ – करंज, खदिर, अर्क, **वट,** अर्जुन।
   3. अं. सं – करंज, खदिर, सर्ज, **वट,** असन, करवीर, **अरिमेद, अपामार्ग,** मालती, ककुभ (अर्जुन)।
   4. सुश्रुत – करंज, खदिर, **मधूक, निम्ब।**

- अष्टांग संग्रहकार ने श्लेष्मातक, शिग्रु, शमी, शाल्मली, शण, तिल्वक, तिन्दुक, बिल्व, विभीतक, र्निगुण्डी, **पीलु,** पीपल, पलाश, पारिभद्र, अरिष्ट, **धव,** धन्व, कोविदार, इंगुर्दी, गुग्गुलु, मोचरस की दौतान का निषेध बताया है।

- **सुश्रुत – 'निम्बश्च तिक्ते श्रेष्ठ, कषाये खदिर। मधुको मधुरे श्रेष्ठ, करंज कटुके तथा।।**
- बकुल – दन्तदाढर्यकर, दन्तशोधन – तेजोवती, **लताकस्तूरी – मुखवैशद्यकर/मुखशोषहर**
- लम्बाई – कनिष्ठिका अंगुली सम स्थूल (मोटी), 12 अंगुल आयत (लम्बी) – सुश्रुत एवं वाग्भट्ट।

(5) जिह्वानिर्लेखन :– जिह्वा शलाका – स्वर्ण, रजत, ताम्र या ऋजु से निर्मित, अग्रभाग तीक्ष्ण न हो एवं वक्र हो।

- प्रमाण लम्बाई – 10 अंगुल (सुश्रुत)
- **जिह्वानिर्लेखन रौप्यं सौवर्ण वार्क्षमेव च। तन्मलापहरं शस्तं मृदु श्लक्षणं दशागुंलम्। – (सु. चि. 24/13)**

(6) मुख संगन्धि द्रव्य :– मुख में स्वच्छता एवं भोजन में रूचि हेतु और मुख को सुगन्धित रखने की इच्छा वालों को जायफल, **कटुक (लताकस्तूरी – चक्र.)**, पूगफल (सुपारी), लवंग, कंकोल, सूक्ष्मैला (छोटी इलायची) के **– फल** उत्तम ताम्बूल **पत्र** और कर्पूर **निर्यास** इन सबको मुख में धारण करना चाहिए।

- **लताकस्तूरी** – मुखवैशद्यकर (प्रियव्रत शर्मा)/**मुखशोषहर – लताकस्तूरिका तद्वन्मुखशोषहरा परम्** (अ.सं. 22/85)

(7) मुख में तैल गण्डूष :– हन्वोर्बलं स्वरबलं वदनोपचयः परः। (च. सू. 5/78)

- मुखवैरस्यदौर्गन्ध्यशोफजाड्यहरं सुखम्। **दन्तदाढ्र्यकर रूच्यं स्नेहगण्डूष धारणम्। (सु. चि. 24/14)**
- मुख संचार्यते या तु मात्रा स कवलः स्मृतः। **अ**संचार्या तु या मात्रा गण्डूषः स प्रकीर्तितः। **(सु. चि. 40/62)**
    - कवल – संचारी, गण्डूष – अंसचारी
- **कवल एवं गण्डूष के प्रकार** – 4 – (1) स्नैहिक (2) शोधन (3) शमन (4) रोपण – सुश्रुत, वाग्भट्ट।
- **गण्डूष एंव कवल धारण काल** :– जन्म से 5 वर्ष बाद (शारंर्गधर)।

(8) शिर में तैल :– शिरःशूल, खालित्य, पालित्य, केशपतन नाशक। केश–कृष्ण, दीर्घ, दृढ़मूल वाले हो जाते है।
इन्द्रियाणि प्रसीदन्ति सुत्वग्भवति चाननम्। निद्रालाभः सुख च स्यान्मूर्ध्नि तैल निषेवणात्।

(9) कर्ण तैलपूरण :– वातज कर्णरोग, मन्याहनुसंग्रह, उच्चै श्रुति, बाधिर्य आदि रोग नहीं होते हैं।

(10) तैल अभ्यंग :– वातनाशक, सुत्वक्, शरीर को व्यायाम क्लेश सहने में सक्षम बनाता है।

(11) पादाभ्यंग के गुण :– गृधसी, सिरा स्नायु संकोच आदि रोग होने की सम्भावना नहीं रहती है।

- **पादाभ्यंग – दृष्टिः प्रसादं – चरक, वाग्भट्ट, (चक्षुष्य – सु. चि. 24/70)**
- **पादत्रधारण – चक्षुष्य – चरक (छत्रधारणम् – चक्षुष्यं – सु. चि. 24/75)**
- पादप्रक्षालन – **चक्षुः प्रसादनं** बृष्यं रक्षोघ्नं प्रीतिवर्धनम् – सु. चि. 24/69

(12) शरीर परिमार्जन – **दौर्गन्ध्यं** गौरवं तन्द्रां कण्डू मलमरोचकम्। स्वेदबीभत्सतां हन्ति शरीर परिमार्जनम्।।
(13) स्नान – **पवित्रं** वृष्यमायुष्यं श्रमस्वेदमलापहम्। शरीरबलसन्धानं स्नानमोजस्करं परम्।
(14) स्वच्छ वस्त्र धारण – **काम्यं** यशस्यनामुष्यं अलक्ष्मीघ्न प्रहर्षणं। **श्रीमत्पारिषदं शस्तं निर्मलाम्बरधारणम्।।**
(15) गन्ध माल्य धारण – **वृष्यं** सौगन्धमायुष्यं काम्यं पुष्टिबलप्रदम्। सौमनस्यम लक्ष्मीघ्नं गन्धमाल्यनिषेवणम्।।
(16) रत्न आभूषण धारण – **धन्यं** मांगल्मायुष्यं श्रीमद्व्यसनसूदनम्। हर्षणं काम्यमोजस्यं रत्नाभरणधारणम्।।
(17) मलमार्गो की शुद्धि – **मेध्यं** पवित्रमायुष्ययं अलक्ष्मीकलिनाशनम्। पादयोर्मलमार्गाणां शौचाधानमभीक्ष्णशः।।
(18) क्षौरकर्म – **पौष्टिकं** वृष्यमायुष्यं शुचि रूपविराजनम्। केशश्मश्रुनखादीनां कल्पनम् संप्रधानम्।।
(19) पादत्रधारण – **चक्षुष्यं स्पर्शनहितम्** पादयोर्व्यसनापहम्। बल्यम् पराक्रमंसुखम् वृष्यं पादत्रधारणम् ।
(20) धर्मसम्मत जीविकोपदेश – आजीविका के साधन धर्म विरूद्ध नहीं होने चाहिए।

शरीररक्षोपदेश – नगरी नगरस्येव रथस्येव रथी सदा। स्वशरीरस्य मेधावी कृत्येष्ववहितो भवेत्।। (च सू 5/103)

6. तस्याशितीय अध्याय

आहार के प्रकार :– (4) – अशित, पीत, लीढ, खादित । – युक्तिपूर्वक सेवन से – **बलं वर्णश्च वर्धते।**

(1) संवत्सर (वर्ष) में छः ऋतु तथा दो अयन होते हैं।

(1) आग्नेय काल/आदान काल/उत्तरायण काल:– सूर्यबल प्रबल, प्राणिबल में ह्रास एंव वायु में रूक्षता होती है।

ऋतु		**रस**	**वायु**	**प्राणिबल**
1. शिशिर	–	तिक्त	अल्परूक्षता	श्रेष्ठ बल।
2. बंसत	–	कषाय	मध्यरूक्षता	मध्य बल।
3. ग्रीष्म	–	कटु	तीव्ररूक्षता	अल्प बल।

(2) सौम्य काल/विसर्गकाल/दक्षिणायन काल:– चन्द्रबल प्रबल, प्राणिबल मे वृद्धि एंव वायु में स्निग्धता होती है।

ऋतु		**रस**	**वायु**	**प्राणिबल**
4. वर्षा	–	अम्ल	अल्पस्निग्ध	अल्प बल।
5. शरद	–	लवण	मध्यस्निग्ध	मध्यम बल।
6. हेमन्त	–	मधुर	श्रेष्ठस्निग्ध	श्रेष्ठ बल।

आदावन्ते च दौर्बल्यं विसर्गादानयोर्नृणाम्। मध्ये मध्यबलं, त्वन्ते श्रेष्ठमग्रे विर्निर्दिशेत्। (च. सू. 6/8)

माह के नाम :–

चरकानुसार	सुश्रुत अनुसार	शारंर्ग्धर अनुसार
1. शिशिर – माद्य – फाल्गुन	तप – तपस्य	1. बंसत – कुम्भ – मीन।
2. बंसत – चैत्र – वैशाख	मधु – माधव	2. ग्रीष्म – मेष – वृषभ।
3. ग्रीष्म – ज्येष्ट – आषाढ़	शुचि – शक्र	3. प्रावृट् – मिथुन – कर्क।
4. वर्षा – श्रावण – भाद्रपद्र	नभ – नभस्य	4. वर्षा – सिंह – कन्या।
5. शरद – आश्विन – कार्तिक	ईष – ऊर्ज	5. शरद – वृश्चिक – तुला।
6. हेमन्त – अगहन – पौष	सह – सहस्य	6. हेमन्त – धुन – मकर।

ऋतुचर्या प्रारम्भ :– 1. चरक, सुश्रुत, वाग्भट्ट – हेमन्त, 2. नागार्जुन – बर्षा ऋतु 3. ऋग्वेद –शरद ऋतु।

1. प्रावृट् – ग्रीष्म एवं वर्षा ऋतु के मध्य। (शारंर्ग्धर वर्णित)।
2. श्रेष्ठमाह – माघ शीर्ष।
3. प्रदोष – रात्रि का आरम्भिक काल।
4. हंसोदक – चरक, वाग्भट्ट, काश्यप। (आचार्य सुश्रुत ने '**हंसोदक**' का वर्णन नहीं किया है।)
5. अंशुदक – भावप्रकाश।
6. ऋतुसंधि – वाग्भट्ट (कुल 14 दिन – गतऋतु का अंतिम संताह + नव ऋतु का प्रथम सप्ताह)
7. यमंदष्ट्रा – कार्तिक माह के अंतिम 8 दिन+अगहन माह के प्रारम्भ के 8 दिन यमंदष्ट्रा कहलाते है – शारंर्ग्धर

1. हेमन्त ऋतु

1. जठराग्नि एवं शरीर बल – उत्तम (श्रेष्ठ)।
2. औदक, आनूपमांस, अतिमेदस्वी पशु–पक्षियों का मांस, **विलेशय एवं प्रसह मांस** जाति के पशु–पक्षियों का मांस।
3. मदिरा, सीधु तथा मधु अनुपान के रूप में लेना चाहिए + उष्ण जल का सेवन करना चाहिए।
4. अभ्यंग, **उत्सादन, मूर्धा तैल, जेन्ताक स्वेद** तथा **उष्ण गर्भगृह** में निवास करना चाहिए।
4. मैथुन – सामर्थ्य एवं रूचि अनुसार कामिनी का आलिंगन करें।
5. अपथ्य – वातल एंव लघु आहार–विहार, **प्रवात,** प्रमिताहार और सत्तू (**उदमन्थ**)।

वर्जयेदन्नपानानि वातलानि लघूनि च। प्रवातं प्रमिताहारमुदमन्थं हिमागमे। – (च. सू. 1/18)

2. शिशिर ऋतु

1. हेमन्त शिशरौ तुल्यौ शिशिरेऽल्पं विशेषणम् – हेमन्त और शिशिर ये दो ऋतुचर्याऐ प्रायः समान होती है।
2. **निवातं उष्णं तु अधिकं शिशिरे गृहमाश्रयेत्।** शिशिर ऋत में शीतलता अधिक बढ जाती है।
3. अपथ्य – कटुतिक्तकषायाणि **वातलानि लघूनि च। वर्जयेदन्नपानानि** शिशिरे शीतलानि च। (च. सू. 1/21)

3. बंसत ऋतु

1. कफ का प्रकोप – वमन कर्म और मधु का सेवन।
2. शारभं, शाशक, ऐण मांस, लावक और कपिजंलम् (सफेद तीतर) का मांस – सेवनीय।
3. **व्यायाम, उर्द्धतन, धूम्र, कवलग्रह तथा अंजन** का प्रयोग करना चाहिए
4 **यवगोधूमभोजनः** एवं निर्गद साधु व माध्वीक मदिरा का पान।
5. मैथुन – वसन्तेऽनुभवेत्स्त्रीणां काननानां च यौवनम्।
6. **अपथ्य – गुर्वम्लस्निग्धमधुरं दिवास्वप्न च वर्जयेत्। (च. सू. 1/23)**

4. ग्रीष्म ऋतु

1. स्वादु शीत द्रवं स्निग्धपानं तदा हितम्। **(च. सू. 1/27)**
2. **घृतं, पयः सशाल्यन्नं भजन्** – घी, दूध के साथ शालिचावल का सेवन।
3 **जांगलान्मृगपक्षिणः मांस** एवं शीतं सशर्करं **मन्थ** (शर्करा युक्त शीतल सत्तू) का सेवन।
4 मैथुन का निषेध – ग्रीष्मकाले निषेवेत मैथुनाद्विरतो नरः।
5 अपथ्य – **मद्यमल्पं न वा पेयमथवा सुबहु उदकम्।** लवणाम्लकटूष्णानि व्यायामं चात्र वर्जयेत्। **(च. सू. 6/29)**

5. वर्षा ऋतु

1. सर्वदोष प्रकोपक ऋतु कहलाती है। वर्षा ऋतु में त्रिदोषघ्न एवं अग्निदीपक (संस्कारित) अन्न पान करें।
   आदानदुर्बले देहे पक्ता भवति दुर्बलः। स वर्षास्वनिलादीनां दूषणैर्बाध्यते पुनः। (च. सू. 6/33)
2. **प्रघर्ष, उद्धर्तन** और स्नान करके गन्ध माला आदि धारण करना चाहिए।
3. पुराणा **जांगलैर्मांसर्भोज्या** यूषैश्च संस्कृतैः।
4. अपथ्य – **उदमन्थ दिवास्वप्नवश्यायं नदीजलम्।** व्यायाममातपं चैव व्ययावं चात्र वर्जयेत्। **(च. सू. 6/35)**
   मैथुन – व्यायाम, आतप और व्यवाय (मैथुन) वर्जित है।
5. सेवनीय – मधु मिला हुआ माध्वीक अरिष्ट, माहेन्द्र जल, कौप, सारस का श्रृत शीतजल।
   मधु – **पानभोजनसंस्करान् प्रायः क्षौद्रान्वितान् भजेत् – (च. सू. 6/37)**
   बर्षा ऋतु में खाने पाने की सभी चीजों बनाते समय उनमें में मधु अवश्य मिलाकर देना चाहिए।

6. शरद ऋतु

1. पित्त प्रकोपक – पित्त शामक आहार–विहार, तिक्त सर्पिपान, विरेचन कर्म एवं रक्तमोक्षण।
2. लावा (बटेर), कपिन्जलान (गौरया), एण, उरभ्र (दुम्बा भेड), शरभ (बारहसिंगा) और शशक मांस का सेवन।
3. आहार – शालीन् सयवगोधूमान् सेव्यानाहु**र्घनात्यये। (च. सू. 6/43)**
4. विहार – शारदानि च माल्यानि वासांसि विमलानि च। शरत्काले प्रशस्यन्ते प्रदोषे चेन्दुरश्मयः।
5. **हंसोदक जल** –दिवा सूर्याशूसंतप्तं निशि चन्द्रांशुशीतलम्। कालेन पक्वं निर्दोषमगस्त्येनाविषीकृतम।
   हंसोदकमिति ख्यातं शारदं विमलं शुचि। स्नानपानावगाहेषु शस्यते तद्यथाऽमृतम्।। **(च. सू. 6/47)**
6 अपथ्य – आतपसेवन, वसा, तैल, **अवश्याय (ओस), औदक** और आनूप प्राणियों का मांस सेवन का निषेध हैं।
   क्षार दधि दिवास्वप्नं प्राग्वातं चात्र वर्जयेत्। **(च. सू. 6/45)**

ओकसात्म्य :– उपशेते यदौचित्यात् ओकः **सात्म्यं तदुच्यते। (च. सू. 6/49) (अभ्याससात्म्यं – गंगाधर रॉय)**

सात्म्य के प्रकार :– 4 – (1) ऋतुसात्म्य (2) ओकसात्म्य (3) देशसात्म्य (4) रोग सात्म्य।

7. न वेगान धारणीय अध्याय

अधारणीय वेग :—(13) —

न वेगान् धारयेद् धीमान्जातान् मूत्रपुरीषयोः। न रेतसो न वातस्य न च्छर्द्याः क्षवथोर्न च ।।

नोद्‌गारस्य न जृम्भाया न वेगान् क्षुत्पिपासयोः। न वाष्पस्य न निद्राया निःश्वासस्य श्रमेण च।। (च. सू. 7/4)

(13) — गुदा — 4 — मूत्र, पुरीष, रेतस, अपानवायु। नाक — 2 — क्षवथु, निः श्वास।

मुख — 5 — वमन, उदगार, जृम्भा, क्षुत, पिपासा। नेत्र — 2 — वाष्प, निद्रा।

वाग्भट्ट —(14) — वेगान्न धारयेत् वातविड्मूत्रक्षवतृट्क्षुधाम्। निद्राकास श्रम श्वास जृम्भाश्रुच्छर्दिरेतसाम्।। (अं.सं.सू. 5)

(उदगार के स्थान पर कास बताया है। वात — अधोवायु, उर्ध्ववायु 2 बतलाई है।)

वेगनिग्रह	वेगधारणजन्य रोग	उत्पन्न रोग चिकित्सा
1. मूत्र	वस्ति, मेहन में शूल, मूत्रकृच्छ्र, **शिरोरूजा,** वंक्षण में **आनाह, विनाम।** (अंगभंग — वाग्भट्ट)	**स्वेदन, अवगाहन, अभ्यंग,** त्रिविध वस्ति, **अवपीडक घृतपान।**
2. पुरीष	पक्वाशय शूल, वातवर्चोऽप्रवर्तनम्, **शिरः शूल आध्मान, पिण्डिकोद्वेष्टन मांसधातुगत ज्वर — सुश्रुत)**	**स्वेदन, अभ्यंग, अवगाहन,** वर्ति प्रयोग, बस्ति कर्म, **प्रमाथि अन्नपान**
3. शुक्र	मेढ्र, वृषणों में शूल, मूत्रावरोध (विबद्ध) **अंगमर्द, हदि व्यथा।** (अंगभंग — वाग्भट्ट)	**अभ्यंग, अवगाहन, चरणायुधामांस**, मदिरा, मैथुन, निरूहवस्ति
4. अधोवायु	**विण्मूत्रवात संग,** वेदना, क्लम, **आध्मान,** वातविकार।	**स्नेहन,** स्वेदन, गुद वर्ति **वातानुलोमक औषध** अन्नपान, वस्ति।
5. छर्दि	**कण्डू, कोठ, व्यंग, कुष्ठ, विसर्प,** हल्लास, शोथ, पाण्डु, ज्वर।	भुक्त्वा प्रच्छर्दनं, धूम्र, लंघन, **रक्तमोक्षण** रूक्षान्नपान, व्यायाम, **विरेक।**
6. क्षवथु	मन्यास्तम्भ, शिरःशूल, अर्दित, अर्धावभेदक, इन्द्रियदौबल्र्य	**ऊर्ध्वजत्रुगत अभ्यंग, स्वेद,** धूम्र नावननस्य, **वातघ्न चिकि. भोजनोत्तर घृत**
7. उदगार	हिक्का, श्वास, **कम्पन,** हृदय, उर क्रिया में विबंध।	हिक्का तुल्य औषध।
8. जृम्भा	विनाम, आक्षेप, संकोच, **कम्पन,** सुप्ति, **प्रवेपन।**	**वातघ्न** औषध।
9. क्षुधा	कार्श्य, दौर्बल्य, **वैवर्ण्य, अंगमर्द,** अरूचि, **भ्रम।** (अंगभंग—वाग्भट्ट)	स्निग्ध, उष्ण, लघु भोजनं।
10. पिपासा	कण्ठास्य शोष, **बाधिर्य,** श्रम, **साद, हदि व्यथा।**	शीत उपचार एवं तर्पण पान।
11. वाष्प	प्रतिश्याय, अक्षिरोग, **हृद्रोग,** अरूचि, **भ्रम।**	स्वप्न, **मद्यपान,** प्रिय कथा।
12. निद्रा	जृम्भा, अंगमर्द, तन्द्रा, अक्षिगौरव, **शिरोरोग।**	स्वप्न एवं संवाहन।
13. श्रमःनिश्वास	गुल्म, **हृद्रोग,** सम्मोह अर्थात मूर्च्छा।	विश्राम एवं **वातघ्न** क्रिया।

शिरोरूजा — मूत्रवेगनिग्रह। **शिरोरोग**— निद्रा वेगनिग्रह। **शिरः शूल** — पुरीष, क्षवथु वेगनिग्रह।

हृदय विबंध — उदगारवेगनिग्रह **हृद्रोग** — वाष्प, श्रमःनिश्वास। **हृदयव्यथा** — शुक्र, पिपासा वेगनिग्रह।

विनाम — मूत्र, जृम्भा **अंगमर्द** — क्षुधा, निद्रा, शुक्र। **अक्षिरोग** — वाष्प वेगनिग्रह।

—: धारणीय वेग — (18) :—

मन के धारणीय वेग (9) — लोभ, शोक, भय, क्रोध, अभिमान, निर्लज्जता, ईर्ष्या, अतिराग (कामवासना) एवं अभिध्या।

वाणी के धारणीय वेग (5) — परूष (कठोर वचन), अधिक मात्रा में बोलना, सूचक (चुगली), अनृत (झूल बोलना), और अकालयुक्तस्य (बिना अवसर की बात करना)।

शरीर के धारणीय वेग (4) –परपीड्या प्रवृत्ति (दूसरों को कष्ट पहुँचाना), परस्त्रीसंभोग, स्तेय (चोरी करना), हिंसा।

व्यायाम

परिभाषा :– **शरीर चेष्टा या चेष्टा स्थैर्यार्था बलवर्धिनी। देहव्यायाम संख्याता मात्रया तं समाचरेत्।। (च. सू. 7/31)**
शरीरायासजननं कर्म व्यायाम् **संज्ञितम्।** (सुश्रुत),
शरीरायासजननं कर्म व्यायाम **उच्यते।** (वाग्भट्ट)

व्यायाम मात्रा :– चरक – मात्रानुसार, सुश्रत – बलार्द्ध, वाग्भट्ट – शीतकाल, बसंत – अर्द्धशक्ति, अन्य ऋतु–मन्द।

व्यायाम लाभ :– लाघवं कर्मसामर्थ्य स्थैर्य दुःखसहिष्णुता। **दोषक्षयो**ऽग्निवृद्धिश्च व्यायामादुपजायते।। **(च. सू. 7/32)**
लाघवं कर्मसामर्थ्य दीप्तोऽग्नि**र्मेदसः क्षयः।** विभक्तघनगात्रत्वं व्यायामादुपजायते।। **(अ. सं. सू. 3/62)**

व्यायाम लक्षण – स्वेदागमः श्वासवृद्धिः गात्राणां लाघव तथा हृदयाद्युपरोधश्च इति व्यायामलक्षणम् – योगीन्द्र नाथसेन।
बलार्द्ध व्यायाम –हदि स्थानस्थितो वार्युयदा वक्त्रं प्रपद्यते। व्यायामं कुर्वतो जन्तोस्तद्बलार्द्धस्य लक्षणम्। **(सु. चि. 24/47)**
बलार्द्ध लक्षण :– कक्षाललाटनासासु हस्तपाददिषु। प्रस्वेदान्मुखशोषाश्च बलार्द्ध तद्विनिर्दिशेत् इति। – डल्हण

उपद्रव :– श्रमः क्लमः क्षयस्तृष्णा **रक्तपित्त प्रतामकः।** अतिव्यायामतः **कासो ज्वरश्छर्दिश्च** जायते। **(च.सू. 7/33)**

चंक्रमण :– (सुश्रुत) – यह कृश एवं दुर्बल के लिए लघु व्यायाम होता है।
लाभ – (1) आयुर्वधक (2) बलवर्धक (3) मेधावर्धक (4) अग्निवर्धक (5) इन्द्रिय चैतन्यकर है।

अतिमात्रा निषेधः– व्यायाम हास्य भाष्य अध्व ग्राम्यधर्म प्रजागरान्। नोचितानपि सेवेत बुद्धिमान् अतिमात्रया।
अन्यथा – गज सिंह इवार्षन् साहसा स विनश्यति।

व्यायाम के अयोग्य :– रक्तपित्त, कृश, शोष, श्वास, कास, उरःक्षत रोगी, बालक वृद्ध, भोजन एंव व्यावाय पश्चात् पिपासित्, क्षुधित – व्यायाम न करे।

प्रादांशिक क्रम :– अहितकर आहार के क्रमशः त्याग और हितकर आहार का क्रमपूर्वक सेवन करना।

एकान्तर (1 दिन)	द्वयन्तर (2–3)	त्र्यन्तर (4,5,6)	7 दिन
1 पथ्य	2 पथ्य	3 पथ्य	4 पथ्य
3 अपथ्य	2 अपथ्य	1 अपथ्य	–

पादांशिक क्रम से लाभ :– 1. क्रमे**णा**पचिता दोषाः – पुनः प्रादुर्भाव नहीं होते हैं।
2. क्रमे**णो**पचिता गुणाः – अप्रकम्य (सुस्थिर) हो जाते हैं।

शारीरिक प्रकृति :– समपित्तानिलकफाः केचिद्गर्भादि मानवाः।

(1) वात प्रकृति – प्रकृति के विपरीत गुण वाले आहार विहार का सेवन।
(2) पित्त प्रकृति – (विपरीत गुणस्तेषां स्वस्थवृत्तेः विधिः हितः।)
(3) कफ प्रकृति – (विपरीत गुणस्तेषां स्वस्थवृत्तेः विधिः हितः।)
(4) सम प्रकृति – सर्वरसाभ्यास करे। (सभी रसों का उपयोग हितकर है)

सदातुराः – वातलाद्याः सदातुराः। (च.सू. 7/40) (वातिकाद्याः सदाऽऽतुराः – काश्यप लेह्याध्याय)

मलायन :– (1) अधोभाग –2– गुदा, मूत्रमार्ग। (2) शिरोभाग –7– नेत्र–2, कर्ण–2, नासा–2, मुख।

दोषों का निर्हरणकाल :– माधव प्रथमे मासि नभस्य प्रथमे पुनः। सहस्य प्रथमे चैव हारयेत् दोषसन्चयम्।।

दोष	**कर्म**	**निर्हरण काल**	**(चरकोक्त माह)**
वात	वस्ति	**श्रावण**	**नभ** – नभस्य
पित्त	विरेचन	**अगहन**	**सहा** – सहस्य
कफ	वमन	**चैत्र**	**मधु** – माधव

निज रोग प्रतिषेधक उपाय :–हेतु विपरीत, व्याधि विपरीत तथा हेतु व्याधि विपरीतकारी औषध, अन्न एवं विहार से साध्य रोगों की चिकित्सा करना, **पंचकर्म** का क्रमिक प्रयोग तदन्तर **रसायन बाजीकरण का प्रयोग।**

आगन्तुक रोग प्रतिषेध उपाय :– प्रज्ञापराध का परित्याग, देश–काल का ज्ञान, **स्वस्थवृत्त** पालन और आप्तोपदेश का ज्ञान, **सत्संग,** सहचर्य एवं असत्संग का परित्याग।

दधि सेवन विधि :– (1) रात्रि में एवं गर्म करके दधि नहीं खाना चाहिए।
(2) घृत/शर्करा/मुदगयूष/मधु/ऑवले – को बिना मिलाए दहीं न खाये।

अन्यथा उपद्रव– ज्वर, रक्तपित्त + कुष्ठ, विसर्प + पाण्डु, उग्र कामला+ भ्रम रोग रोग होने की संभावना रहती है

8. इन्द्रियोपक्रमणीय अध्याय

मन के पर्याय :– अतीन्द्रिय, सत्व एवं चेत – **अतीन्द्रियं पुनर्मनः सत्वसंज्ञकं चेत इत्याहुरेके (च. सू. 8/4)**
मन सभी इन्द्रियों की चेष्टाओं का प्रधान कारण है। – **चेष्टाप्रत्ययभूतम् इन्द्रियाणाम्। (च. सू. 8/4)**
कर्म – **मनः पुरः सराणीन्द्रियाण्यर्थग्रहण समर्थानि भवन्ति।** (च. सू. 8/7)

इन्द्रिय पंच पंचक

पंच इन्द्रिय	पंच इन्द्रिय द्रव्य	अधिष्ठान	इन्द्रियार्थ	पंचेन्द्रिय बुद्धि
1. श्रोत्र	ख (आकाश)	कर्ण	शब्द	श्रोत्र बुद्धि
2. स्पर्शन	वायु	त्वचा	स्पर्श	स्पर्शन बुद्धि
3. चक्षु	ज्योति	**अक्षि**	रूप	चक्षु बुद्धि
4. रसन	जल	जिह्वा	रस	रसन् बुद्धि
5. घ्राण	भू	नासिका	गन्ध	घ्राण बुद्धि

पंचेन्द्रिय बुद्धि के प्रकार – 2 – (1) क्षणिका (2) निश्चयात्मिका।

1. मन व आत्मा, मन के विषय तथा बुद्धि – आध्यात्म द्रव्य गुण संग्रह है।
   (मनो मनोंऽर्थो बुद्धिरात्मा चेत्यध्यात्मद्रव्यगुणसंग्रहः। – च. सू. 8/13)
   कर्म – शुभाशुभप्रवृत्तिनिवृतिहेतुश्च, द्रव्याश्रितं च कर्म यदुच्यते क्रियेति।
2. मन का अर्थ – मन का अर्थ (विषय) चिन्त्य है। **(मनसस्तु चिन्त्यमर्थः। च. सू. 8/16)**
   मन के विषय :–(5) – चिन्त्यं विचार्यम् ऊह्यं च ध्येयं संकल्पमेव च। (च शा 1/20)
3. मानसिक विकृतियां – मन के अर्थ व इन्द्रियार्थ का अयोग/अतियोग/मिथ्यायोग।

इन्द्रियों का भौतिकत्व :– (1) अंहकारिक – सांख्य, सुश्रुत। (2) भौतिक – न्याय, वैशेषिक, वेदान्त, चरक।

सदवृत वर्णन :– सदवृत्त का पालन करने से मनुष्य एक साथ दो लाभ प्राप्त करता है।
अर्थद्वय प्राप्ति :– आरोग्य एवं इन्द्रियविजय।

(1) **त्रिः पक्षस्य केशश्मश्रुलोमनखान् संहारयेत्।** (पक्ष में 3 बार बाल कटवाएं)
(2) प्राक् श्रमाद् व्यायामवर्जी स्यात्। (थकने से पहले ही व्यायाम करना बंद कर दें)
(3) न उच्चै हसेत् (जोर से न हंसे)
(4) न नखान वादयेत (नखों को न बजावें)
(5) रत्न, घृत, पूज्यदेवगण, मंगल पदार्थ और उत्तम पुष्पों के स्पर्श बिना घर से न निकले।
(6) पूर्वाभिभाषी – किसी के मिलने पर उसके बोलने से पहले ही कुशल क्षेम पूछे।
(7) चरकानुसार **उत्तर दिशा** में मुख करके भोजन करना चाहिए।
(8) **न स्त्रियमवजानीय, नातिविश्रम्भयेत्, न गुह्यमनुश्रावयेत्।**
स्त्री का अपमान न करें, स्त्री का अधिक विश्वास न करें, गुप्त वात न बतायें और उसे पूर्ण अधिकार न दें।

सत्तु सेवन विधि :– रात में/भोजन के पश्चात्/अधिक मात्रा में/जलपान पश्चात/दिन में 2 बार सत्तु न खाएं।
इस प्रकार कर्तव्य और अकर्तव्य सदवृत्त, आहार, मलोत्सर्ग, स्त्री, मैथुन, पूज्यजन, अध्ययन, सामाजिक कर्तव्य, मानसिक कर्तव्य तथा हवन संबंधी सदवृत्त का वर्णन किया गया है।

9. खुड्डाक चतुष्पाद

'खुड्डाक':– 'खुड्डाक' शब्द 'अल्प' का बोधक है। यह चतुष्पाद का संक्षेप में परिचय देने वाला अध्याय है।

रोग/आरोग्य : – विकारो धातुवैषम्यं, साम्यं प्रकृतिरूच्यते। सुखसंज्ञकमारोग्यं, विकारों दुःखमेव च।। (च.सू. 9/4)

- **रोगस्तु दोषवैषम्यं दोषसाम्यमरोगता। - (अ. हृ. सू. 1/19)**

चिकित्सा :– चतुर्णा भिषगादीनां शस्तानां धातुवैकृते। प्रवृत्तिः धातुसाम्यार्था चिकित्सेत्यभिधीयते।। (च.सू. 9/5)

चिकित्सा के चतुष्पाद :– भिषग्द्रव्याण्युपस्थाता रोगी पादचतुष्टयम्। गुणवत् कारणं ज्ञेयं विकारव्युपशान्तये।।

1. भिषक के गुण	2. औषध के गुण	3. उपास्थाता के गुण	4. रोगी के गुण
(1) श्रुते पर्यवदातत्वं	(1) बहुता	(1) उपचारज्ञता	(1) स्मृतिः
(2) बहुशो दृष्टकर्मता	(2) योग्यत्वं	(2) दाक्ष्यं	(2) निर्देशकारित्व
(3) दाक्ष्यं	(3) अनेकविधकल्पना	(3) अनुरागश्च	(3) अभीरूत्वम्
(4) शौचम्	(4) संपत्	(4) शौचम्	(4) ज्ञापकत्वम्

वैद्य की प्रधानता :– कारणं षोडशगुणं सिद्धौ पादचतुष्टयम्। **विज्ञाता शासिता** योक्ता प्रधानं भिषगत्र तु। (च.सू. 9/10)

(1) चिकित्सा के चतुष्पाद में वैद्य **विज्ञाता एवं शासिता** होने से प्रधान है – (चरक)

प्राणाभिसर वैद्य लक्षण– (4) – तस्मात् शास्त्रऽर्थ विज्ञाने प्रवृतौ कर्मदर्शने। भिषक् चतुष्टये युक्तः प्राणाभिसर उच्यते।

(1) शास्त्र ज्ञान में (2) शास्त्र अर्थ के समझने में (3) प्रत्यक्ष कर्म (4) प्रत्यज्ञ दर्शन में – प्रवृत्ति वाला प्राणाभिसर वैद्य कहलाता है।

(प्राणाचार्य :– शीलवान् मतिमान् युक्तो द्विजातिः शास्त्रपारगः। प्राणिभिर्गुरूवत्पूज्यः प्राणाचार्यः स हि स्मृतः। च. चि.1/4/51)

राजार्ह वैद्य ज्ञान :– (4) – हेतो लिंगे प्रशमने रोगाणामपुनर्भवे। ज्ञानं चतुर्विधं यस्य स राजार्हो भिषक्तम्।।

(1) रोगों के हेतु (2) रोगों के लक्षण (3) रोगों का प्रशमन उपाय (4) रोग को पुनः न होने देने का उपाय – इन चारों बातों का ज्ञानी हो।

वैद्य के गुण :– (6) विद्या वितर्की विज्ञानं स्मृतिः तत्परता क्रिया। यस्यैते षड्गुणास्तस्य न साध्यमति वर्तते।

(1) विधा (2) वितर्क (3) विज्ञान (4) स्मृति (5) तत्परता और (6) चिकित्सा क्रिया में संलग्नता। – ये छः गुण रहते हैं तो उसकी चिकित्सा से जो साध्य रोग है वे अश्यमेव ठीक हो जाते हैं।

उपमा :– शास्त्रं ज्योतिः प्रकाशनार्थ दर्शनं बुद्धिरात्मनः। शास्त्र – ज्योति शास्त्र बुद्धि – नेत्र।

विषयों को प्रकाशित करने के लिए शास्त्र एक ज्योति है और अपनी बुद्धि ही नेत्र है।

वैद्य की 4 वृत्तियां :– मैत्री कारूण्यमार्तेषु शक्ये प्रीतिरूपेक्षणम्। प्रकृतिस्थेषु भूतेषु वैद्यवृत्तिः चतुर्विधा।। (च.सू. 9/26)

(1) मैत्री – प्राणीमात्र से मित्रता।
(2) कारूण्य – रोगी पर दया।
(3) शक्ये प्रीति – साध्य रोगों में प्रेमपूर्वक चिकित्सा।
(4) उपेक्षा – असाध्य रोग/रोगी के प्रति उपेक्षा।

प्रकृतिस्थ – मरण के समीप गया हुआ – चक्रपाणि।

शस्त्रं शास्त्राणि सलिलं गुणदोष प्रवृतये। पात्रापेक्षीण्यतः प्रज्ञां चिकित्सार्थ विशोधयेत्।। (च.सू. 9/20)

शस्त्रं, शास्त्राणि, सलिलं अपने में गुण या दोष उत्पन्न करने के लिए पात्र की अपेक्षा करते हैं। वे जैसे पात्र में जाते हैं उसके अनुसार ही गुण या दोष ग्रहण कर लेते हैं।

10. महाचतुष्पाद अध्याय

चतुष्पाद :– चतुष्पादं षोडशकलां भेषजमिति भिषजो भाषन्ते। षोड्शकला से युक्त चतुष्पाद को 'भेषज' कहते हैं।

नोट :– इस अध्याय में चतुष्पाद की सफलता में **'मैत्रेय की शंका'** और आत्रेय द्वारा सन्देह– निवारण का वर्णन है।

रोग के भेद :– सुख साध्यं मतं साध्यं कृच्छ्रसाध्यमथापि च। द्विविधं चाप्यसाध्यं स्याद्याप्यं यच्चानुपक्रमम्।।

(1) साध्य :– 2 – 1. सुख साध्य 2. कृच्छ्रसाध्य। **(2) असाध्य :–** 1. याप्य 2. अनुपक्रम।

साध्य के पुनः 3 भेद होते है। – 1. अल्प उपाय साध्य 2. मध्य उपाय साध्य 3. उत्कृष्ट उपाय साध्य

- **विकल्पो न त्वसाध्यानां नियतानां विकल्पना।** जो रोग निश्चित रूप से असाध्य हैं उनका कोई भेद नहीं होता हैं।

1. सुखसाध्य रोग

(1) **हेतवः पूर्वरूपाणि रूपाण्यल्पानि** – रोग के हेतु, पूर्वरूप और लक्षण अल्प मात्रा में हो।
(2) **न च तुल्य गुणों दूष्यो न दोषः प्रकृति भवेत्** –(1) रोगोत्पादक दोष, दूष्य और रोगी की प्रकृति समान न हो।
(3) **न च काल गुणस्तुल्यो** – दोष के गुण और काल (ऋतु) के गुण समान न हो
(4) **न देशो दुरूपक्रमः** – देश चिकित्सा करने में रूकावट उत्पन्न करने वाला न हो।
(5) **गतिः एका नवत्वं च** – रोग एक मार्ग वाला और नवीन हो।
(6) **रोगस्य उपद्रवो न च** – रोग किसी भी प्रकार के उपद्रव से रहित हो।
(7) **दोषश्चैकः समुत्पत्तौ** – रोग की उत्पत्ति का कारण एक ही दोष हो।
(8) **देहः सर्वोषधक्षमः** – रोगी की देह सर्व प्रकार की औषधों के सेवन में समक्ष हो
(9) **चतुष्पादोपपत्तिश्च सुखसाध्यस्य लक्षणम्** – चिकित्सा के चतुष्पाद गुणसम्पन्न हो।

2. कृच्छ्र साध्य रोग

(1) **निमित्तपूर्वरूपाणां रूपाणां मध्यमे बले** – हेतु, पूर्वरूप, रूप – मध्यम बल वाले हो
(2) **काल प्रकृति दूष्याणां सामान्येऽन्यतमस्यच** – काल, प्रकृति, दूष्य– इनमें से कोई 1 रोगोत्पादक दोष के समान गुण वाला हो।
(3) **गर्भिणीवृद्ध बालानां नाव्युपद्रवपीडितम** – रोगी गर्भिणी, बालक या वृद्ध हो, उपद्रव अधिक हो।
(4) **शस्त्रक्षाराग्नि कृत्यानां अनंव कृच्छ्रदेशम्** – शस्त्रधार, अग्निकर्म साध्य, पुरातन, मर्माश्रित हो।
(5) **द्विपथं नातिकालं वा** – रोग दो मार्गों में हो, अल्प पुरातन हो, दो दोषों से उत्पन्न हो।
(6) **नातिपूर्ण चतुष्पदम्** – चिकित्सा के चतुष्पाद पूर्ण न हो।
(7) **कृच्छ्रसाध्यं द्विदोषजम्** – जो दो दोष से उत्पन्न हुआ हो।

3. याप्य रोग

(1) **शेषत्वाद् आयुषों याप्यम्** – आयु शेष रहने से रोगी जीवित रहता है।
(2) **पथ्य सेवया लब्धाल्पसुखं** – पथ्य आहार विहार के सेवन से थोड़ा लाभ होता है।
(3) **अल्पेन हेतुना आशुप्रवर्तकम्** – पुनः अल्प कारण से ही शीघ्र उग्र हो जाए याप्य है।
(4) **गम्भीरं बहु धातुस्थं** – जो रोग गम्भीर धातुगत हो, कई धातुओं में फैला हो।
(5) **मर्मसन्धिसमाश्रितम्** – मर्म और संधि प्रदेशों में हुआ हो।
(6) **नित्यानुशायिन रोगं** – जो नित्य ही बार बार दौरे के रूप में आता है।
(7) **रोगं दीर्घकालम् अवस्थितम्** – जो दीर्घकाल से चला आ रहा हो।
(8) **विद्याद् द्विदोषजं** – जो दो दोष से उत्पन्न हुआ हो – याप्य है।

4. अनुपक्रम (प्रत्याख्येय) रोग

(1) **तद्वत प्रत्याख्येयं त्रिदोषजम्**– जो रोग तीनों दोषों से उत्पन्न हुआ हो।
(2) **क्रियापथम् अतिक्रान्तं** – चिकित्सा की सीमा लांघ गया हो।
(3) **सर्वमार्गानुसारिणम्** – सभी मार्गो में व्याप्त हो गया हो।
(4) **औत्सुक्यं, अरति** – उत्सुकता (जीवन की रक्षा होगी/नहीं) बैचनी हो।
(5) **संमोहकरम्, इन्द्रियनाशनम्** – मूर्च्छा उत्पन्न होती हो, इन्द्रियों की शक्ति क्षीण हो गई।
(6) **दुर्बलस्य सुसंवृद्धं व्याधिं** – दुर्बल रोगी हो और रोग खूब बढ़ा हुआ हो।
(7) **सारिष्टमेव च** – जिस रोग में अरिष्ट के लक्षण उत्पन्न हो गये हो।

- **नहि भेषज साध्यानां व्याधीनां भेषजकारणं भवति।** – औषध साध्य व्याधियों में औषध का प्रयोग व्यर्थ नहीं होता है।

सुखसाध्य रोग के अपवाद :– ज्वरे तुल्यर्तु दोषत्वं प्रमेहे तुल्यदृष्यता। रक्तगुल्मे पुराणत्वं सुखासाध्यस्य लक्षणं।
(1) ज्वर – प्राकृत ज्वर शरद, बंसन्त में – सुखसाध्य। वर्षा ऋतु में– कष्टसाध्य।
(2) गुल्म – रक्तगुल्म (पुराना हो तब) – सुखसाध्य
(3) प्रमेह में – कफज प्रेमह (तुल्य दोष–दूष्य)– सुखसाध्य
पित्तज प्रमेह (अतुल्य दोष'–दूष्य) – याप्य।

11. त्रिऐषणीय अध्याय

त्रिऐषणाएं :– त्रि अर्थात 3 + एषणा अर्थात तीव्र इच्छा।
(1) प्राणैषणा – स्वस्थस्य स्वस्थवृत्तानुवृत्तिः आतुरस्य च विकारप्रशमयेऽप्रमादः।
(2) धनैषणा – 4 उपाय – कृषि, पाशुपालन, वाणिज्य, राजसेवा।
(3) परलोकैषणा – पुनर्जन्म में आस्था रखकर सर्वजन हितकारी कार्य व सदवृत्त का पालन करें।
(**1. प्राणैषणा 2. धनैषणा 3. धर्मेषणा – भेल**)।
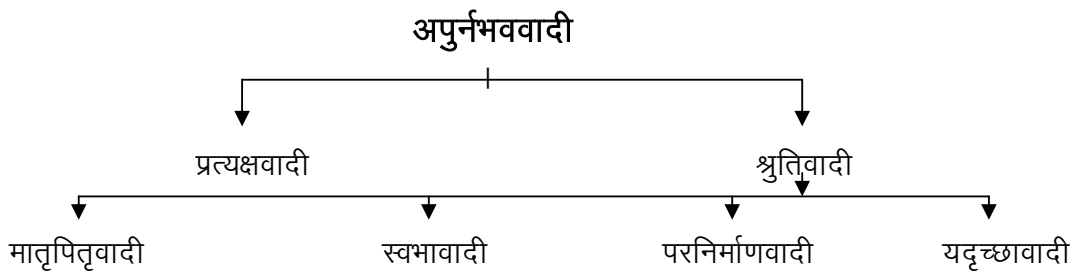
(1) प्रत्यक्षवादी :– चार्वाक आदि प्रत्यक्ष न होने से पुनर्जन्म नहीं मानते हैं नास्तिक है।
खण्डन – प्रत्यक्ष ज्ञान साधन इन्द्रियां स्वयं प्रत्यक्ष गम्य नहीं है।

प्रत्यक्ष प्रमाण में बाधक :– 8 कारण

(1) अतिसामीप्य (3) अतिसूक्ष्म (5) इन्द्रिय दौर्बल्य (7) समानाभिहार।
(2) अतिदूर (4) आवरण (6) अनवस्थित मन (8) अभिभव।

(2) मातृपितृवादी :– कुछ लोग माता पिता को जन्म का कारण मानते हैं।
खण्डन – आत्मा जैसे सूक्ष्म द्रव्य का अवयव (छोटा अंश) नहीं होता। आत्मा तो र्निवयव है।

(3) स्वभाववादी :– कुछ लोग स्वभाव को जन्म के प्रति कारण मानते हैं।
पंचमहाभूत और आत्मा इनके अपने लक्षण (अग्नि में उष्णता आदि) स्वाभाविक जानना चाहिए किन्तु इनके संयोग ओर वियोग में कर्म ही कारण है।

(4) परनिर्माणवादी :– कुछ लोग पर (अर्थात् ईश्वर) निर्माण को जन्म का कारण मानते हैं।
खण्डन – जो अनादि चेतना धातु है उसका दूसरे निर्माण नहीं हो सकता।

(5) यदृच्छावादी :– कुछ लोगों का मत है कि यों ही जगत की उत्पत्ति हो जाती है कोई कारण नहीं है।
खण्डन – यदृच्छावादी प्रमाण, परीक्षा, कर्ता, कारण, देव, ऋर्षि, सिद्ध, कर्म, कर्मफल, और आत्मा को नहीं मानता है। इसलिए ये **सबसे घोर नास्तिक** है, इस नास्तिक मत को मानना सब पापों से बड़ा पाप है।

चतुर्विध परीक्षाएँ

द्विविधमेव खलु सर्व सच्चासच्च, तस्य चतुर्विद्या परीक्षा – आप्तोपदेशः प्रत्यक्षं, अनमानं, युक्तिश्चेति।।

1. आप्तोपदेश :– रजस्तमोभ्यां निर्मुक्ताः तपोज्ञान बलेन ये। येषां त्रिकालममलं ज्ञानमव्याहतं सदा।।

आप्ताः शिष्टा बिबुद्वास्ते तेषां वाक्यमसंशयम्। सत्यं, वक्ष्यन्ति ते कस्मादसत्यं नीरजस्तमाः। (च.सू. 11/8)

आप्तपुरूषों के वाक्यों के आप्तोपदेश प्रमाण माना जाता है।

आप्त लक्षण :– तप, ज्ञान बल से जो रज औ तम से सर्वथा मुक्त हो गए हो जिन्हें तीनों कालों का यथार्थ तथा बाधारहित ज्ञान हो वे **आप्त/शिष्ट/विबुद्ध** है। इन आप्त पुरूषों के वचन संशयरहित और सत्य होते हैं वे रज और तम से मुक्त है तो फिर असत्य क्यों कहेंगे।

(1) आप्ति – विषयों का साक्षात्कार **(2) आप्त** – जो आप्ति द्वारा कर्म करें।

आप्तोपदेश/एतिह्य/आगम प्रमाण को न्याय वर्तिकार ने शब्द प्रमाण माना है।

2. प्रत्यक्ष :– आत्मेन्द्रियमनोर्थानां सन्निकर्षात् प्रवर्तते। यक्ता तदात्वे या बुद्धिः प्रत्यक्ष सा निरूच्यते। (च.सू. 11/19)

आत्मा + इन्द्रिय + मन + विषय–इन चारों के संयोग से तत्काल जो निश्यचात्मक ज्ञान होता है उसे प्रत्यक्ष कहते हैं

3. अनुमान :– प्रत्यक्षपूर्व त्रिविधं त्रिकालं चानुमीयते। वह्निनिगूढो धूमेन मैथुनं गर्भदर्शनात्।।

एवं व्यवस्यन्त्यतीतं बीजात्फलमनागतम्। दृष्टवा बीजात्फलं जातमिहैव सदृशं बुधाः।। (च.सू. 11/20)

प्रत्यक्ष ज्ञान हो जाने के बाद उसके ही आधार पर तीन प्रकार का तथा तीनों कालों का अनुमान किया जाता है। जैसे – धूम देखकर छिपी हुई है। (वर्तमानकालिक) अग्नि को अनुमान से जान लिया जाता है। गर्भ को देखकर (भूतकाल में) स्त्री का पुरूष से सहवास होना जाना जाता है। इसी प्रकार बीज को देखकर (इसी प्रकार बीज को देखकर भविष्य में उत्पन्न होने वाले) अनागत फल का अनुमान कर लिया जाता है यही अनुमान प्रमाण है।

4. युक्ति :–(1). जल कर्षण बीजः ऋतुसंयोगात् शस्य संभव। युक्तिः षड्धातु संयोगाद् गर्भणां संभवस्तथा।।

मन्थ मन्थन मन्थान संयोगादग्नि संभवः। युक्ति युक्ता चतुष्यादसंपद व्याधिनिर्वहणी।।

1. जिस प्रकार – जल, कर्षित भूमि, बीज, ऋतु – वृक्ष उत्पत्ति।
   उसी प्रकार – पंचमहाभूत और आत्मा के संयोग – शिशु (गर्भ) उत्पत्ति –– युक्ति है।
2. जिस प्रकार – मन्थ, मन्थन और मन्थान – अग्नि निर्माण।
   उसी प्रकार – स्वगुण सम्पन्न चिकित्सा के चतुष्पाद – व्याधिनाश। –– युक्ति है।

(2.) बुद्धि पश्यति या भावान् बहुकारणयोगजान्। युक्तिस्त्रिकाला या ज्ञेया त्रिवर्गः साध्यते यया।।

अनेक कारणों के संयोग से उत्पन्न हुए अविज्ञात भावों (विषयों) को विज्ञात विषयों के कार्य कारणभाव के अनुसार जो बुद्धि देखती है अर्थात् ज्ञान कराती है उसे युक्ति कहते हैं। **त्रिवर्ग – धर्म, अर्थ और काम।** सिद्धि में युक्ति साधक है।

पुर्नजन्म सिद्धि :– आचार्य चरक ने इन्हीं चतुर्विध प्रमाणों द्वारा सिद्ध किया है कि पुर्नजन्म होता है।

आचार्य चरक ने प्रत्यक्ष से पुनर्जन्म सिद्धि में 13 उदाहरण दिये हैं।

अष्टत्रिक वर्णन – कृष्णात्रेय

1. **त्रिउपस्तम्भ :–** आहार, स्वप्न, ब्रह्मचर्य। (**त्रिस्तम्भ :–** वात, पित्त, कफ)
   त्रय उपस्तम्भा इति – आहारः स्वप्नो बह्मचर्यमिति। (च. सू. 11/33)

2. **त्रिविध बल :– सहज**, कालज, युक्तिकृत।
   1. सहज – शरीर और सत्व का स्वाभाविक बल।
   2. कालज – ऋतु अनुसार आदान–विसर्ग काल में बल, आयुनुसार बाल, युवा, वृद्ध में बल।
   3. युक्तिकृत – पौष्टिक आहार, व्यायाम, रसायन, बाजीकरण योगों से प्राप्त बल।

3. त्रिविध आयतन हेतु :– असात्यमेन्यिार्थ संयोग, कर्म, काल।

त्रिविध विकल्प – (1) अतियोग (2) अयोग (3) मिथ्यायोग।

त्रिविध कर्म – (1) कायिक कर्म (2) वाचिक कर्म (3) मानस कर्म।

प्रज्ञापराध :– त्रिविध विकल्प + त्रिविध कर्म। **इति त्रिविधं विकल्पं त्रिविधमेव कर्म प्रज्ञापराध इति व्यवस्येत्।**

स्पर्शनेन्द्रिय का व्याप्कत्व :– तत्रैकं स्पर्शनमिन्द्रियाणां इन्द्रियव्यापकं चेतः समवायि। (च.सू. 11/38)
स्पर्शेन्द्रिय सभी इन्द्रियों में व्याप्त रहती है

4. त्रिविध रोग :– निज, आगन्तुज और मानस।

1. निज – तत्र निजः शरीदोषसमुत्थः।
2. आगन्तुज – आगन्तुः भूतविष वाप्वग्नि सम्प्रहारादि समुत्थः।
3. मानस – मानसः पुनरिष्टस्य लाभाल्लाभाच्चनिष्टस्योपजायते।

5. त्रिविध रोगमार्ग :– शाखा, कोष्ठ, मर्मास्थि संधि।

1. **शाखा** – तत्र शाखा रक्तदयो धातवस्त्वक् च, **स बाह्यरोग मार्गः।**
2. **कोष्ठ** – कोष्ठः पुर्नरूच्यते महास्त्रोत शरीर मध्यं महानिम्नमामपक्वाशयश्चेति पर्यायशब्दैस्तन्त्रे **स रोगमार्ग आभ्यंतरः।**
3. **अस्थिसंधिमर्म** – मर्माणि पुर्नः वस्तिहृदयमूर्धादीनि अस्थिसन्ध्योऽस्थिसेयोगास्तत्रोपनिबद्धाश्च स्नायु कण्डरा **स मध्यम रोगमार्गः।**

1. शाखा आश्रित – 14 – गलगण्ड, पिडका, अलजी, अपची, अधिमांस, चर्मकील, मषक, कुष्ठ, व्यंग आदि + विद्रधि, अर्श, विसर्प, शोथ, गुल्म।

2. कोष्ठ आश्रित – 16 –ज्वर, अतिसार, वमन + अलसक, विसूचिका + श्वास, कास, हिक्का + आनाह, उदररोग, प्लीहा + विद्रधि, अर्श, विसर्प ,शोथ, गुल्म।

3. अस्थिसंधिमर्माश्रित – 11 – पक्षवध, पक्षग्रह + अपतानक, अर्दित + शोष, राजयक्ष्मा + अस्थिसंधि शूल, गुदभ्रंश, + हृदय, वस्ति, शिर के रोग।

6. त्रिविध औषध :– दैवव्यपाश्रय, युक्तिव्यपाश्रय, सत्वाजय।

1. **दैवव्यापाश्रय** – मन्त्रौषधि मणिमंगलबल्युपहार होमनियम प्रायश्चित उपवास स्वस्त्ययन प्राणिपात गमनादि।
2. **युक्तिव्यपाश्रय** – पुनराहार औषधद्रव्याणां योजना।
3. **सत्वावजय** – पुनः अहितेभ्योऽर्थेभ्यो मनोनिग्रहः।

अन्य त्रिविध औषध :–

1. **अन्तः परिर्माजन** – जो औषध शरीर के अंदर प्रवेश कर दूषित आहार जन्य रोगों का नाश करें।
2. **बहिः परिर्माजन** – शरीर की त्वचा का आश्रय लेकर रोगनाश। अभ्यंग, स्वेद, प्रदेह, परिषेक, उन्मर्दन।
3. **शस्त्रप्रणिधान** – इसमें अष्टविध(1)छेदन (2) भेदन (3) व्यधन (4) लेखन (5).दारण (6)उत्पादन (7) प्रच्छान (8) सीवन शस्त्रकर्म, क्षारकर्म, अग्निकर्म और जलौका का प्रयोग कर रोगों को दूर किया जाता है।

7. त्रिविध वैद्य :– छद्मचर, सिद्धसाधित और जीविताभिसर।

(1) छद्मर वैद्य :– वैद्यभाण्डौषधैः पुस्तैः पल्लवैरवलोकनैः। लभन्ते ये भिषक् शब्दमज्ञास्ते प्रतिरूपकाः।।
वैद्यों के समान औषध निर्माण यंत्रो, पुस्तक और **(पल्लव ग्राही)** उपकरणों आदि बाह्य आडम्बरों के प्रयोग से रोगी को देखने वाले, ऐसे अपठित व्यक्ति, जो ठगने के लिए वैद्यों की वेशभूषा धारण करते हैं वे छद्मचर वैद्य होते हैं।

(2) सिद्धसाधित वैद्य – श्री यशोज्ञानसिद्धानां व्यपदेशादतद्विधाः। वैद्यशब्द लभन्ते येज्ञेयास्ते सिद्धसाधिताः।।
जो स्वयं पढे लिखे नहीं है और न ही शास्त्र ज्ञान, व्यावहारिक ज्ञान सम्पन्न है, किन्तु धनी, यशस्वी, विद्धान वैद्यों के साथ अपना सम्बन्ध बताकर या स्वयं वही बनकर वैद्य नाम से प्रसिद्धि प्राप्त कर लेते हैं वे सिद्धसाधित वैद्य हैं

(3) जीविताभिसर :– प्रयोग ज्ञान विज्ञान सिद्धि सिद्धाः सुखप्रदाः। जीविताभिसरास्ते स्युः।

12. वातकलाकलीय अध्याय

तद्विध सम्भाषा परिषद् :– 8 आचार्यो द्वारा वात संबंधी 8 प्रश्न। **वातकलाकलीय** :– वात + कला + अकलीय।

1. कला – गुण (वात का 16वां भाग) **2. अकला** – दोष (कला का भी सूक्ष्मतम भाग)

(वात संबंधी अष्ट प्रश्न – उत्तर)

(1) **कुश** :– वात के 6 गुण बताये। **'रूक्ष लघु शीत दारूण खरविशदाः षडिमे वातगुणा भवन्ति' । (कुश)**
(दीर्घजीवितीय अध्याय में वात के 7 गुण बताये यहां सूक्ष्म, चल के स्थान दारूण गुण बताया है।)

वात के गुण :– 7 – रूक्षः शीतो लघुः सूक्ष्मश्चलोऽथ विशदः खरः। (च.सू. 1/59)

(2) **कुमार शिरा भारद्वाज** :– 'वात के प्रकोपक कारण' बतलाए।
वात के समान गुणवर्धक वाले आहार–विहार, कर्म करने से वात प्रकोपित होता है।

(3) **वाह्लीक ऋर्षि काकांयन** :– 'वात के शमन कारण' बताए।
वात के रूक्षादि गुणों के विपरीत प्रकृति वाले द्रव्यों एवं कर्माभ्यास से वातशमन होता है।

(4) **वडिश** :– 'असंघात एवं अनावस्थित वात के प्रकोप एवं शमन की प्रक्रिया' बतायी।
(1) रूक्ष लघु शीतदारूण खर विशद और सुषिर उत्पादक पदार्थ – वात का प्रकोपक।
(2) स्निग्ध गुरूष्णश्लक्षण मृदुपिच्छिल और लंघन कारक पदार्थ – वात प्रशमनानि।

(5) **वार्योविद** :– 'प्राकृत शरीर चर वायु के कर्मो का वर्णन'।
वायु के 4 प्रकार के कर्म :– (1) कुपित शरीर चर (2) कुपित लोक चर।
(3) अकुपित शरीर चर (4) अकुपित लोक चर।

प्राकृत (अकुपित) शरीरचर वायु के कर्म :–

'वायुस्तन्त्रयन्त्रधर, प्राणोदानसमानव्यानापानात्मा, **प्रर्वतकश्चेष्टामुच्चावचानां, सर्वेन्द्रियाणामुद्योजकः, नियन्ता प्रणेता च मनसः,** (मन का नियत्रंण कर्ता – वायु, मन का निग्रह कर्ता – स्वयं मन) सर्वेन्द्रियार्थानामभिवोढा, **सर्वशरीरव्यूहकरः,** सन्धाकरः शरीरस्य................. ....कर्ता गर्भाकृतीनाम्, **आयुषोऽनुवृत्ति प्रत्ययभूतो भवत्य कुपितः।** (तन्त्र = शरीर, यंत्र = शरीरायव)

(6) **मरिच** :– 'पित्त संबंधी वर्णन' किया। **'अग्निरेव शरीरे पित्तान्गर्तः कुपिताकुपितः शुभाशुभानि करोतिः'।**
पक्ति–अपक्ति, दर्शन–अर्दशन, प्राकृत–विकृत वर्ण, शौर्य–भय, क्रोध–हर्ष, मोह–प्रसाद आदि अनेक प्रकार के द्वन्द्व प्राकृतिक पित्त की स्थिति का ही परिणाम है।

(7) **काप्य** :– 'कफ संबंधी वर्णन' किया। **'सोम एवं शरीरे श्लेष्मान्तर्गतः कुपिताकुयितः शुभाशुभानि करोति'।**
दृढ़ता–शैथिल्य, स्थूलता–कृशता, उत्साह–आलस्य, वृषता–क्लीवता, **ज्ञान–अज्ञान,** बुद्धि–मोह तथा अन्य भी द्वन्द्वों को कफ उत्पन्न करता है।

(8) **आत्रेय** :– **'त्रिदोष सम्बन्धी निर्णयात्मक मत'** एवं उसका सर्वसमर्थन। अतः में सभी के मत अनुसार आत्रेय ने अपने विचार व्यक्त किए कि वात पित्त ये तीनों ही सम (प्राकृत) स्थिति में रहते हैं तब – आरोग्य व दीर्घायु की प्राप्ति होती है विषमास्था में रोग एवं मृत्युकारण है।आश्रेय के मत का सभी ने समर्थन किया।

वायु के पर्याय – मृत्यु, यम, नियन्ता, प्रजापति, अदिति, **विश्वकर्मा, विश्वरूपा,** सर्वग, भगवान्, सूक्ष्म, **अव्यय, विभु,** विष्णु।

- आचार्य काश्यप ने अन्न को 'प्रजापति' की संज्ञा दी है।
- आचार्य चरकानुसार अव्यय, विभु, विश्वकर्मा और विश्वरूपा वायु और आत्मा दोनों के पर्याय है।
- आचार्य सुश्रुत ने वायु, काल और जठराग्नि इन सभी को 'भगवान्' शब्द से सम्बोधित किया है।

13. स्नेहाध्याय

अग्निवेश के स्नेह विषयक **'25 प्रश्नों'** का वर्णन हुआ है।

(1) स्नेह की योनियां :– (1) स्थावर – तिल आदि का स्नेह (2) जांगम – दूध, दही, मांस, घृत, वसा मज्जा, स्नेह।

1. तिल तैल – शरीर के बलार्थ और स्नेहन हेतु **2. एरण्ड तैल** – विरेचन हेतु – अग्र/सर्वश्रेष्ठ द्रव्य है।

(2) स्नेह के भेद :– चतुर्विध स्नेह – घृत, तैल, वसा मज्जा।

घृत (उत्तम) – संस्कारों से दूसरों के गुणों का अनुवर्तन करने वाला।

स्नेह	गुणकर्म	प्रयोज्य ऋतु
घृत	घृतं **पित्तानिलहरं** रसशुक्रौजसां हितम्। **निर्वापणं** मृदुकरं, स्वरवर्ण प्रसादनम्।	शरद
तैल	**मारूतघ्नं** न च श्लेष्मवर्धन **बलवर्धनम्। त्वच्यं** उष्णं स्थिरकरं तैल **योनिविशोधमन्।**	प्रावृट
वसा	विद्ध, **भग्न, भ्रष्टयोनि,** कर्णशूल, शिरोरूजि। पौरूषोपचये, **स्नेहार्थ व्यायामसेवी।**	माधव (वैशाख)
मज्जा	बल,शुक्र,रस,श्लेष्म,मेदो,मज्जा, विवर्धनः। मज्जा **विशेषतोऽस्थ्नां च बलकृत** स्नेहने हितः।	माधव (वैशाख)

(4) स्नेह प्रयोग काल :– अत्यन्त शीत और अत्यंत उष्ण काल में सर्वथा स्नेह का सेवन नहीं करना चाहिए

1. वातपित्ताधिक एवं उष्णकाल में – **रात्रि में स्नेहपान**
2. कफाधिक एवं शीतकाल में – **दिन में स्नेहपान**

- वातपित्ताधिक एवं उष्णकाल में – **दिन में स्नेहपान** से मूर्च्छा, पिपासा, उन्माद व कामला रोग हो सकते है।
- कफाधिक एवं शीतकाल में – **रात्रि में स्नेहपान** से अन्यथा आनाह, अरूचि, शूल व पाण्डु रोग हो सकते है।

(5) स्नेहपान का अनुपान :– 'जलमुष्णं घृत पेयं, यूषस्तैलेऽनुशस्यते।वसामज्जोस्तु मण्डः स्यात्सर्वेषूष्णमथाम्बु वा।।

(1) घृत – उष्ण जल (3) वसा, मज्जा – मण्ड।

(2) तैल – यूष (4) अथवा सबके बाद – उष्ण जल।

(6) स्नेह की प्रविचारणाये :– (24) – चरक (काश्यप – 20)

(1) रस	(5) मासं	(9) दूध	(13) खण्ड	(17) भक्ष्य	(21) नस्य
(2) ओदन	(6) सूप	(10) दही	(14) काम्बलिक	(18) अभ्यांजन	(22) गण्डूष
(3) विलेपी	(7) शाक	(11) मद्य	(15) तिलकल्क	(19) कर्णतैल	(23) वस्ति
(4) यवागू	(8) यूष	(12) लेह	(16) सत्तू	(20) अक्षितर्पण	(24) उत्तरवस्ति

1. प्रविचारणा :– स्नेह को भोज्य पदार्थों के साथ लेना। **2. 'अच्छपान'** – केवल स्नेहपान (प्रथम कल्पना)।

अच्छपेयस्तु यः स्नेहो न तामाहुर्विचारणाम्। स्नेहस्य य भिषग्दृष्टः कल्पः प्राथमकल्पिकः। (च. सू 13/26)

रसों के संयोग से 64 प्रविचारणाएं :– 64 – (चरक एवं वाग्भट्ट) – 1) रसों के संयोग से –63 (2) अच्छपान – 1।

स्नेह की मात्रा	पाचन काल	रोग	अवस्था
1. ह्रस्व मात्रा	अर्ध दिन (6 घंटे में) पच जाये। (2 याम/प्रहर – वाग्भट्ट)	**ज्वर, कास, अतिसार,**	मंदाग्नि, रिक्तकोष्ठी, बालक, वृद्ध, सुकुमार, अवर बल।
2. मध्यम मात्रा	1 दिन (12 घंटे में) पच जाये। (4 याम/प्रहर – वाग्भट्ट)	**'क्षुद्रकुष्ठ' कुष्ठ, प्रमेह, वातरक्त में,**	मृदुकोष्ठ, मध्यम – अग्नि बल, शरीरबल।
3. उत्तम मात्रा	1अहोरात्र (24 घंटे में) पच जाये (8 याम/प्रहर – वाग्भट्ट)	**सर्पदंष्ट्र, विसर्प, उन्माद, गुल्म, मूत्रकृच्छ्र, बिबन्ध**	तीक्ष्णाग्नि, शरीर बल– श्रेष्ठ। नित्यप्रभूतस्नेहसेवी, क्षुत्पिपासासहा नर

(**मदबिभ्रंशा :–** सुखपूर्वक स्नेहन एवं शोधन के लिए प्रयुक्त स्नेह की मध्यम मात्रा)

ह्रस्वयसी मात्रा – स्नेह परीक्षार्थ ह्रस्व में भी कम मात्रा जो 2 याम से भी कम समय में जीर्ण हो जाए। – (वाग्भट्ट)

स्नेह	गुणकर्म
1. घृत	वातपित्त प्रकृति, वातपित्तज रोग, **क्षतक्षीण,** दाह,शस्त्र,विष,अग्नि–हत रोगी, सौकुमार्य बल–वर्ण,स्वर प्रसादन **चक्षुःकामा, आयुःप्रकर्षकामा, पुष्टिकामाः, प्रजाकामाः,** दीप्ति, ओज, स्मृति, मेधा, अग्नि, बुद्धि, इन्द्रियबल –हेतु
2. तैल	प्रवृद्ध श्लेष्ममेद, **स्थौल्य,** वातप्रकृति, वातव्याधि, '**कृमिकोष्णं, क्रूरकोष्ठ, नाडीव्रण में।** (शरीर में – बल, तनुत्व, लघुता, दृढ़ता हेतु) (त्वचा में स्निग्ध श्लक्षणता हेतु)।
3. वसा	वातातसहा, रूक्षा, भाराध्वकर्शिता, संशुष्क रेतोरूधिरा, कफमेदक्षया, **महत् अग्निबल, वसासात्म्य अस्थि–सन्धि–सिरा–स्नायु–मर्मकोष्ठ महारूजः,** स्रोत्रोवृत्त बलवान वायु प्रकोप में।
4. मज्जा	दीप्ताग्नि, **क्लेशसहा, घस्मरा,** सदास्नेहसेविनः वातार्ता, **क्रूरकोष्ठा।**

अच्छ स्नेह प्रहर्ष काल :– (1) मृदुकोष्ठी में – 3 दिन तक। (2) क्रूर कोष्ठी में – 7 दिन तक।

स्नेहन योग्य :– स्वेद्याः शोद्ययिताव्याश्च रूक्षा वातविकारिणः। व्यायाममद्य स्त्रीनित्याः स्नेहयाः स्युर्ये च चिन्तकाः।

जिनको स्वेदन/शोधन कराना हो, रूक्ष, वातव्याधि से पीड़ित रोगी, नित्य व्यायाम, मद्य, स्त्रीप्रसंग का सेवी एंव चिन्ताशील व्यक्तियों को स्नेहन करें।

स्नेहन आयोग्य :– उरूस्तम्भ, आमवात, उत्सन्न कफमेद वाले रोग, मन्दाग्नि, गर्भिणी, **तालुशोष, तृष्णा,** मूर्च्छा के रोगी, अन्नद्वेषी, छर्दि, उदररोग, आमदोष, विषाक्त रोगी, दुर्बल, क्षीण एवं जिन्हें नस्य, वस्ति दी गई हो– स्नेहन अयोग्य है।

अस्निग्ध :– ग्रंथित, रूक्ष – पुरीष, प्रतिलोम – वायु, मंद – अग्नि, रूक्ष, खर – शरीर।

सम्यक् स्निग्ध :– वर्च – स्निग्ध, असंहतम्, वातुलोमन, दीप्ताग्नि, शरीर में मार्दव, स्निग्धता।

अतिस्निग्ध :– पाण्डुता, गौरव, कफज, जाड्य, **पुरीषस्याविपक्वता,** तन्द्रा अरूचि उत्क्लेश स्यात् अतिस्निग्ध लक्षणम्।

स्नेहपान से पूर्व भोजन :– स्नेहपान से 1 दिन पूर्व – द्रव, उष्ण अनभिष्यन्दी, नीति स्निग्ध – ऐसा भोजन करे।

(1) संशोधन हेतु – रात्रि भोजन जीर्णोपरान्त – मध्यम मात्रा।
(2) संशमन हेतु – भोजन के समय भूख लगने पर – प्रधान मात्रा।

(1) साम पित्त में – केवल घृतपान (अच्छपान) का निषेध है।
(2) निराम पित्त में – केवल घृतपान (अच्छपान) कराना चाहिए।

मृदुकोष्ठ :– उदीर्णपित्तऽल्पकफा ग्रहणी मन्दमारूता। मृदुकोष्ठस्य तस्मात् स सुविरेच्यो नरः स्मृतः। (च.सू. 13/71)
जिसकी ग्रहणी कला में पित्त – प्रबल, कफ – न्यून एवं वात – मंद रहती है 'वह मृदु कोष्ठ' व्यक्ति है। उसका सूखपूर्वक विरेचन होता है। विरेच्य द्रव्य – गुड, दूध, इक्षुरस, मस्तु, कर्शरा, काश्मर्य, त्रिफला, द्राक्षारस।

स्नेह व्यापद :– (19 उपद्रव) – तन्द्रा, उत्क्लेश, आनाह, ज्वर, स्तम्भ, विसंज्ञता, कुष्ठ, कण्डू, पाण्डू, अर्श, शोथ, अरूचि, उदररोग, ग्रहणी, उदरशूल, स्तैमित्य, तृष्णा, जिह्वास्तभ और आमदोष।

चिकित्सा – 1. वमन, स्वेदन, कालप्रतीक्षणम, शरीर, व्याधि, बलानुसार संस्रन का प्रयोग करे।
2. रूक्षान्नपान, तक्रारिष्ट, त्रिफला एवं मूलों का प्रयोग।

1. वमनार्थ स्नेह – स्नेह पान के **'1 दिन बाद'** द्रव, उष्ण, मांसरस और भात खिलाकर वमन कराना चाहिए।
2. विरेचनार्थ स्नेह – स्नेहपान के **'3 दिन बाद'** विरेचन कराये हैं। (**प्रस्कंदन – विरेचन का पर्याय है**)

सघः स्नेहन विधि :– पांचप्रसृतिकी पेया + दूध में बना उदड़ मिश्रित भात + घृत इसका सेवन करने से शीघ्र ही स्नेहन हो जाता है। (**पांच प्रसृतिकी पेया – घृत, तैल, वसा, मज्जा और तण्डुल – प्रत्येक 1 प्रसृत**)

सलवण स्नेह :–लवण मिश्रित सभी स्नेहों से शीघ्र ही स्नेहन होता है (लवण– अभिष्यन्दी, अरूक्ष, सूक्ष्म, उष्ण व्यवायी)

विचारणा योग्य – स्नेह द्वेषी, स्नेहनित्या, मृदुकोष्ठी, क्लेशसहा, नित्यमद्यसेवी व्यक्तियों के लिए।

14. स्वेदाध्याय

स्वेदन :– स्वेदसाध्याः प्रशाम्यन्ति गदा वातकफात्मकाः। स्वेदन से वात, कफज, विकार दूर हो जाते हैं।

स्वेदन के भेद :– (1) महान – रोग बलवान (2) मध्यम – रोग मध्यम (3) दुर्बल – रोग अल्प।

(1) स्निग्ध स्वेद – V रोगों में। (2) रूक्ष स्वेद – K रोगों में। (3) स्निग्धरूक्ष स्वेद – VK रोगों में।

(1) आमाशय में कुपित वात → (1) रूक्ष स्वेद (2) स्निग्ध स्वेद।

(2) पक्वाशय में कुपित कफ → (1) स्निग्ध स्वेद (2) रूक्ष स्वेद।

षट् स्वेदसंग्रह/3 द्वन्द्वज भेद :– (1) साग्नि, निराग्नि, (2) एकांग, सर्वांग, (3) स्निग्ध, रूक्ष।

(1) वृषण, हृदय, नेत्र में – स्वेदन निषेध है आवश्यक होने पर 'मृदु स्वेद' कराए। (आचार्य वाग्भट्ट – स्वल्प स्वेद)

(2) वंक्षण में – 'मध्यम स्वेद' कराते हैं (वाग्भट्ट – अल्प स्वेद)

सम्यक स्वेदन :– (1) शीत'–शूल की शान्ति (2) स्तम्भता, गौरवता का निग्रह (3) स्वेद आना (4) शरीर का मार्दव।

स्वेद का अतियोग :–(1) पित्त प्रकोप, तृष्णा, दाह, मूर्च्छा (2) शरीर सदन (3) स्वेदांग (4) अतिदौर्बल्यता।

चिकित्सा – (चरक संहिता) ग्रीष्म ऋतु चर्या में वर्णित – 'मधुर, स्निग्ध एवं शीतल आहार विहार।

(शीतोपचार चिकित्सा – सुश्रुत, शारर्ग्धर विसर्प रोग की चिकित्सा – काश्यप, स्तम्भन चिकित्सा – वाग्भट्ट)

स्वेदन अयोग्य :– कषाय रस सेवी, पित्तविकार, रक्तपित्त, **वातरक्त, कामला, प्रमेह, मधुमेह, अतिसार, उदररोग,** नित्यमद्य सेवी, क्षार, अग्निदग्ध, गुदपाक, गुद्रभ्रंश, गर्भिणी, विर्षात्त, नष्टसंज्ञा और तिमिर रोगी स्वेदन अयोग्य है।

स्वेदन योग्य :– प्रतिश्याय, कास, श्वास, हिक्का, स्वरभेद, आमदोष, शीतदोष, विबन्ध, मूत्राघात, मूत्रकृच्छ्र शिरःशूल, गृधसी, स्तम्भ, संकोच, खल्ली, वातकण्टक इत्यादि **समस्त वातकफज विकारों में।**

उपनाह बंधन :– रात्रि में बंधा उपनाह दिन में खोल देना चाहिए और दिन में बंधा हो तो रात में खोल देना चाहिए। शीतकला में अधिक समय तक पुलिस बंधी रह सकती है।

त्रयोदश साग्नि स्वेद

साग्नि स्वेद :– चरक – 13 भेद, काश्यप – 8 भेद, सुश्रुत, वाग्भट्ट – 4 भेद (ताप, उष्म, द्रव्य, उपनाह)।

अष्टांग संग्रहकार ने उष्म स्वेद के अतंगर्त 8 साग्नि स्वेदों का वर्णन किया है ? (अ. सू. 26/7)

संकरः प्रस्तरो नाडी परिषेकोऽवगाहनम्। जेन्ताकोऽश्मघनः कर्षू कुटी भू कुम्भिकैव च। कूपो होलाक इत्येते स्वेदयन्ति त्रयोदशः।

1.संकर 2.प्रस्तर 3.नाडी 4.परिषेक 5.अवगाहन 6.जेन्ताक 7.अश्मघन 8.कूर्ष 9.कुटी 10.भू 11.कुम्भी 12.कूप 13.होलाक।

(1) संकर – इसके अंतर्गत **'पिण्ड स्वेद'** आता है।

(2) प्रस्तर – गर्म गर्म कृशरा/वेशवार को मनुष्य लंबाई तुल्य चौकी पर फैला देते हैं उस पर रेशमी वस्त्र/एरण्ड पत्र बिछाकर, तैल स्नेहित मनुष्य को सुलाकर कम्बल उड़ा देने स्वेदन हो जाता है।

(3) नाडी – 1. आकृति – **'गंजाग्रहस्त संस्थानया'** – हाथी की सूंड की तरह उतार चढ़ाव वाली।

2. लंबाई – 1 व्याम या 1/2 व्याम + मूलभाग 1/4 मोटा + अग्रभाग 1/8 मोटा

3. स्वरूप – **'द्विस्त्रिर्वा विनामितया' 2/3 भागों में टेढ़ी घुमावदार बनी है।**

(4) परिषेक – वातहर या वातश्लेष्महर द्रव्यों के क्वाथ का फव्बारा।

(5) अवगाहन– वातनाशक द्रव्यों के क्वाथ,तैल,घृत, मांसरस/उष्णजल से भरे टब में बैठाकर स्वेदन।
(मात्रा – 4 मुहूर्त – भावप्रकाश)

(6) जेन्ताक – (1) हेमन्त ऋतु में।
(2) कूटागार (गोलाकार उष्ण गर्भगृह) वनबाए। – **लं x चौ x ऊ = 16 x 16 x 16 अरत्नि।**
(3) जलाशय के दक्षिण/पश्चिम में 8 अरत्नि दूरी पर।

(7) कर्षू स्वेद – चारपाई के विस्तर के नीचे गढ्ढे में घूम्ररहित अंगारों की अग्नि से।

(8) कुटी स्वेद – छोटी वृत्ताकार कुटी जिसमें 'झरोखा न हो' **हन्सतिका की अग्नि** से।

(9) कूर्प स्वेद – चारपाई की लंबाई से दुगना गहरा कुआं में निर्धूम अग्नि द्वारा।

(निराग्नि स्वेद) (चरक – 10, सुश्रुत – 7)

'व्यायाम उष्णसदनं गुरूप्रवारणं क्षुधा।'बहुपानं भय क्रोधावुपनाहाहवातपाः।। स्वेदयन्ति दशैतानि नरमग्निगुणादृते।

(1) व्यायाम (2) उष्णगृह (4) भारी वस्त्र (4) आतप (5) आहव

(6) क्रोध **(7) भय (8) भूख (9) बहु मद्यपान (10) उपनाह।**

उपनाह स्वेद – चरक – निराग्नि सुश्रुत – साग्नि। अंष्टाग हृदय (साग्नि, निराग्नि दोनों)

सुश्रुतानुसार निरिग्न स्वेद :– (7) – व्यायाम, निवात, गुरूप्रावरण, आतप, मल्लयुद्ध, क्रोध, **अध्व।**

''त्रयोदशविधः स्वेदो बिना दशाविधोऽग्निा। संग्रहेण च षट् स्वेदाः स्वेदाध्याये निदर्शिताः।।'' (च. सू. 14/70)

15. उपकल्पनीयमध्याय

(1) संशोधन औषध संग्रह :– संशोधन चिकित्सा से पूर्व संशोधन के समस्त परिणामों के अपेक्षा अनुसार औषध संग्रह कर लेना चाहिए। दोष, औषध, देश, काल, बल, शरीर, आहार, सात्म्य, सत्व, प्रकृति और वय इनकी अवस्थाएं सूक्ष्म होती है। चिन्तन से परे है – 'अग्निवेश' उपर्युक्त **11 बिन्दु** चिकित्सा में सफलता हेतु अत्यंत विचारणीय है।

(2) संशोधन से पूर्व – **संशोधन से पूर्व 'स्नेहन, स्वेदन' आदि पूर्वकर्म कर लें।**

वमन कर्म :– अभिमन्त्रित मदनफल कषाय की एक मात्रा मधु, मुलेठी, सैंधव और फाणित मिलाकर पीने को देवें।

(व्यवहार की दृष्टि से मदनफल चूर्ण की वमनार्थ मात्रा = 3–6 माशा, वमनार्थ क्वाथ की मात्रा = 4 –8 तोला)

वमन द्रव्य पिलाने के **'1 मुर्हूत तक प्रतीक्षा'** करें उसके बाद यदि –

– स्वेद का प्रादूर्भाव होने पर – दोषों का विलयन होना।

– लोम हर्ष होने पर – दोषों का अपने स्थान से प्रचलित होना।

– कुक्षि में अध्यमान – दोषों का कुक्षि में पहुचंना।

– हल्लास तथा आस्य स्रावण – दोषों का उर्ध्व मुखी होना।

1. जानु समान ऊंचे विस्तर पर बिठाएं एंव सहायक/मित्रगण पीठ के नीचे से ऊपर को गले, नाभि दबाएं।
2. नखकर्तित दो अंगुलियों से कण्ठ के भीतर स्पर्श कराते हुए वमन करने को प्रेरित करिए।

वमन के अयोग :– वमन के वेगों का किसी कारणवश बाहर न निकला, अथवा केवल औषध की प्रवृत्ति होना, वायु की गति प्रतिलोम हो जाना या वेगों का विभ्रंश और बिबन्ध होना – ये अयोग के लक्षण है।

सम्यक वमन के लक्षण :– क्रमशः कफ → पित्त → वायु का निकलना एंव वमन के वेगों का स्वयं रूक जाना

वमन के अतियोग :– फेनिलरक्त चन्द्रिकोपगमनम्' इति अतियोगलक्षणानि।– झागदार रक्त निकलना एवं उसमें चमकती रक्त चन्द्रिकाएं दिखना। – इसे वमन का अतियोग जानना चाहिए।

वमन पश्चात् :–रोगी के हाथ–पैर, मुख साफ करके **'मुर्हूतभर'** आराम कर स्नैहिक, प्रायोगिक या वैरेचनिक 'धूम्रपान' कराये।

वमन के पश्चात् संसर्जन क्रम – क्रमशः **यवागू,** विलेपी, **ओदन + यूष, मांस रस** का सेवन कराए।

(1) प्रधान शुद्धि – 7 दिन 12. अन्नकाल

(2) मध्य शुद्धि – 5 दिन 8. अन्नकाल

(3) अल्प शुद्धि – 3 दिन 4. अन्नकाल

वमन के अतियोग तथा अयोग से उपद्रव :– (चरक – 10, वाग्भट्ट– 12, सुश्रुत – 15)

आध्मान, परिकर्तिका, परिस्राव, हृदयोपसरण, अंगग्रह, **जीवादान, विभ्रंश स्तम्भ**, क्लम, उपद्रव। **(च. सू. 15/13)**

विरेचन विधि :– त्रिवृत्त कल्क का **1 अक्ष मात्रा** जल अथवा किसी द्रव में घोलकर पिलाये।

अतियोग – मांस और मेद के धोवन के समान काला रक्त निकलना।

संशोधन से लाभ :– मलापह रोगहरं बलवर्णप्रसादनम्। पीत्वा संशोधन सम्यगायुषा युज्यते चिरम्। **(च. सू. 15/22)**

16. चिकित्सा प्राभृतीय अध्याय

चिकित्सा प्राभृत :– चिकित्सा में प्रयुक्त होने वाली सभी सामग्रियों तथा उपकरणों से युक्त।

सम्यक् विरेचन के लक्षण :–

दौर्बल्यं लाघवं ग्लानिर्व्याधिनामणुता रूचिः। **हृद्वर्णशुद्धिः** क्षुत्तृष्णा काले वेगप्रवर्तनम्।

बुद्धीन्द्रियमनःशुद्धि मारूतस्यानुलोमता। सम्यकविरिक्तिलिंगानि कायाग्नेश्चानुवर्तनम्।। **(च. सू. 16/6)**

अविरिक्त के लक्षण :–

ष्ठीवन हृदयाशुद्धिरूत्क्लेशः श्लेष्मपित्तयोः। आध्मानमरूचिश्छर्दिर**दौर्बल्यलाघवम्।**

जंघोरू सदनं तन्द्रा स्तैमित्यं पीनसागमः। **लक्षणान्य विरिक्तानां मारूतस्य च निग्रह। (च. सू. 16/8)**

विरेचन के अतियोग के लक्षण :–

विट्पित्तश्लेष्मवातानामागतानां यथाक्रमम्। परं स्रवति **यद्रक्तं मेदोमांसोदकोपमम्।**

निःश्लेष्मपित्तमुदकं शोणित कृष्णमेव वा। तृप्यतो मारूतार्तस्य सोऽतियोगः प्रमुह्यतः।। **(च. सू. 16/10)**

1. क्रमशः **विट्→ पित्त→ श्लेष्म→ वात** के आ जाने के बाद '**मेदोमांसोदकोपम्**' रक्त (मेद,मांस, धोवन सम) आता है।
2. निःश्लेष्म पित्तमुदकं – बिना कफ, पित्त के जल निकलता है/'**शोणित कृष्णमेव**' – काला रक्त निकलता हो।
3. अधिक तृष्णा, वातव्यथा, प्रमुह्यत = मूर्च्छा आने लगती है।

वमन के अतियोग के लक्षण :– विरेचन के अतियोग के सम लक्षण **+ उर्ध्वगत वातरोग, वाक्ग्रह।**

संशोधन से लाभ :– (1) विशुद्ध कोष्ठ (2) कायाग्नि – वर्धते (3) व्याधि का उपशमन (4) स्वस्थता बनी रहती है (5) इन्द्रिय, मन, बुद्धि, वर्ण – प्रसादति (6) शरीर बल, पुष्टि, वृषता में वृद्धि (7) जरा कृच्छ्रेण लभते (10) चिर जीवनम्।

संशोधन चिकित्सा की श्रेष्ठता :– संशोधन चिकित्सा संशमन चिकित्सा से श्रेष्ठ होती है।

''दोषाः कदाचित् कुप्यन्ति जिता लंघनपाचनैः। जिताः संशोधनैर्ये तु न तेषां पुनरूद्भवः।'' (च. सू. 16/20)

वमन विरेचन अतियोग चिकित्सा :– अतियोगानुवद्धानां सर्पिःपानं प्रशस्यते + तैलं मधुरकैः सिद्धं अथवाऽप्यनुवासनम्।। सर्पिपान, मधुरौषध सिद्ध तैल का पान अथवा अनुवासन वस्ति देनी चाहिए।

वमन विरेचन अयोग चिकित्सा :– यस्य त्वयोगस्तं स्निग्धं पुनः संशोधयेत् नरम्। – स्नेहन करके पुनः संशोधन दे।

–: स्वभावोपरमवाद :–

पर्याय :– कारण निरपेक्ष विनाश – (चक्रपाणि)। **(स्वभावोपरमवाद बौद्धों का मत है।)**

'स्वभावात् विनाशकारणनिरपेक्षात् उपरमो विनाशः स्वभावोपरमः।' – चक्रपाणि।

इसके अनुसार – भाव पदार्थों की उत्पत्ति में कारण होता है। परन्तु उनके नाश में कारण नहीं होता है।

''जायन्ते हेतु वैषम्याद् विषमा देहधातवः। हेतु साम्यात् समास्तेषां स्वभावोपरमः सदा।।'' (च. सू. 16/27) **(jam-07)**

देह की धातुऐं अपने उत्पादक कारणों की विषमता से विषम हो जाती है, यदि उनके उत्पादक कारण सम रहते हैं, तो भी सम रहती है। – इन धातुओं का स्वभाव से अपने आप प्रतिक्षण विनाश होता रहता है।

''प्रवृत्तिहेतुर्भावानां न निरोधेऽस्ति कारणम्। केचित्तत्रापि मन्यन्ते हेतुं हेतोरवर्तनम्।।'' (च. सू. 16/28)

–: चिकित्सा :–

चिकित्सा :–याभिः क्रियाभिः जायन्ते शरीरे धातवः समाः। सा चिकित्सा विकारणां कर्म तत् भिषजां मतम्। (च.सू. 16/34)

जिन क्रियाओं के द्वारा शरीर के धातु सम हो जाते हैं वही क्रिया रोगों की चिकित्सा कहलाती है। अतः धातुओं को सम करना ही वैद्य का कर्म है।

उद्देश्य :– (1) शरीर में समधातुओं का अनुबन्ध बनाए रखना। (2) धातुओं को सम करना।

17. कियन्तः शिरसीयाध्याय

शिरोरोग के निदान :– वेगसंधारण, दिवास्वप्न, रात्रिजागरण, अवश्याय, प्राग्वात, उच्च भाष्य, अतिमैथुन, शीतरम्बुसेवनात्।
शिर :– प्राणाः प्राणभृतां यत्राश्रिताः सर्वेन्द्रियाणि च। यदुत्तमांगमगांनां शिरस्तदभिद्यीयते। (च. सू. 17/3)
उत्तमांग :– चरक शिर को प्राणियों के प्राण एवं इन्द्रियों का आश्रय कहा है एंव शिर को उत्तमांग की संज्ञा दी है।

शिरोरोग :– 5– वातज, पित्तज, कफज, सन्निपातज और कृमिज। – चरक।

- **(माधव, सुश्रुत, भाव प्रकाश एवं योग रत्नाकर – 11)**
- **(अष्टांग संग्रह** – 9, **अष्टांग हृदय– 19** = 10 शिरोरोग + 9 शिरकपाल के रोग)

1. वातज शिरोरोग – निस्तुद्येते भृशं शंखौ घाटा संभिद्यते तथा। स**भ्रूमध्य ललाटं च तपतीवातिवेदनाम्।**
   - (**शीतमारूतसंस्पर्शात्** – शीतपित्त और वातज शिरोरोग दोनों का निदान है)

2. पित्तज शिरोरोग – दह्यते रूच्यते तेन शिरः शीतं सुषूयते। दह्येते चक्षुषी **तृष्णा भ्रमः** स्वेदश्च जायते।।
   - (**क्षार तथा मद्य का अधिक सेवन एंव क्रोध** – पित्तज शिरोरोग का निदान है)
   -

3. कफज शिरोरोग – शिरो मन्दरूजं तेन **सुप्त स्तिमितभारिकम्**। भवत्युत्पद्यते **तन्द्रा**ऽऽलस्यमरोचकम्।
   - (**आस्यासुखैः स्वप्नसुखैर्गुरूस्निग्धातिभौजनैः** – कफज शिरोरोग का निदान है)
   - (**आस्यासुखं स्वप्नसुखं दधीनि ग्राम्यौदकानूपरसाः पयांसि** – प्रमेह का निदान है)

4. त्रिदोज शिरोरोग – वाताच्छूलं भ्रमः कम्पः पित्ताद्दाहो मदस्तृषा। कफाद्गुरूत्वं **तन्द्रा** च शिरोरोगे त्रिदोषजे।

5. कृमिज शिरोरोग – **व्यधच्छेदरूजा कण्डू शोफ दौर्गन्ध्यदुःखितम्। (च. सू. 17/19)**

हृद्रोग :– 5 वातज, पित्तज, कफज, सन्निपातज और कृमिज। – चरक।

- सुश्रुत – 4 – सन्निपातज हृदय रोग नहीं माना है।

1. वातज हृद्रोग – वेपथुर्वेष्टनं स्तम्भः प्रमोहः शून्यता **दरः।** हृदि वातातुरे रूपं जीर्णे चात्यर्थवेदना।
   - **(दर = हृदय में दरदर या मरमर ध्वनि की प्रतीति होना)**

2. पित्तज हृद्रोग – हृद् दाह, वक्रे तिक्तता, तिक्तोम्लोद्गर।
3. कफज हृद्रोग – हृदयं कफहृद्रोगे **सुप्तं स्तिमितभारिकम्।** तन्द्रारूचिपरीतस्य **भवत्यश्मावृत्तं यथा।**
   - **(श्लेष्मणा हृदयं स्तब्धं भारिकं साश्मगर्भवत्**। – अ. हृदय)
   - **अचिन्तन** कफज हृद्रोग का कारण है।

4. कृमिज हृद्रोग – **तुद्यमानं स हृदय सूचीभिरिव मन्यते।** छिद्यमानं यथा शस्त्रैर्जातकण्डूं महारूजम्।
5. त्रिदोज हृद्रोग – हृदरोगः कष्टदः **कष्टसाध्य** उक्तो महर्षिभिः।

दोषमान विकल्पज रोग – 62 – वात, पित्त और कफ इनमें क्षय, स्थान, वृद्धि आदि मान विकल्प से – 62 व्याधियां।

सन्निपातज	– 13	25 घटने पर – क्षीण दोष होने पर।
संसर्ग	– 9	25 बढ़ने पर – वृद्ध दोष होने पर।
पृथक्	– 3	12 त्रिदोष में युगपत वृद्धि तथा क्षय से।

क्षय के भेद :– चरक – 18, सुश्रुत– 2, शांरग्धर – 5, हारीत – 10।
18 प्रकार के क्षय :– दोष क्षय– 3, धातु क्षय– 7, मल क्षय – 7 (पंचेन्द्रिय मलायतन, मूत्र, पुरीष क्षय) ओज क्षय–1।

धातुक्षय	चरकानुसार
1. रस	घट्टते सहते, शब्दं न उच्चै, **द्रवति** शूल्यते। **हृदयं ताम्यति**, स्वल्पचेष्टास्यापि रसक्षये।
2. रक्त	परूषा स्फिुटिता म्लाना त्वग् रूक्षा रक्तसंक्षये।
3. मांस	मांसक्षये विशेषेण **स्फिग्ग्रीवोदर शुष्कता।**
4. मेद	**संधिस्फुटन**, ग्लानि, नेत्रों में आलस्य, उदर का तनु होना।
5. अस्थि	**अस्थितोद,** केशलोमनखश्मश्रुद्विज – प्रपतनं, **श्रम, संधिशैथिल्य।**
6. मज्जा	अस्थियां – शीर्ण, दुर्बल, लघु + **प्रततं वातरोगीणि।**
7. शुक्र	दौर्बल्यं **मुखशोषश्च** पाण्डुत्वं सदनं श्रमः। **क्लैव्यं** शुक्रविसर्गश्च क्षीण शुक्रस्य लक्षणम्।
8. मूत्र	मूत्रक्षये मूत्रकृच्छं मूत्रवैवर्ण्यमेव च। **पिपासा** बाधते चास्य **मुखं च परिशुष्यति। – चरक।**
9. पुरीष	शरीर में रूक्षता वृद्धि, वात की कुक्षि में पीड़ा करते हुए तियर्क, उर्ध्वगति ।
10 मलायन क्षय	मलायनानि, चान्याति शून्यानि च लघूनि च। विशुष्काणि च लक्ष्यन्ते यथास्वं मल संक्षये।

नोट :– (1) संधि स्फुटन – मेदक्षय। (4) मुखशोष – शुक्रक्षय।
(2) संधि शैथिल्य – अस्तिक्षय। (5) मुख परिशुष्यं – मूत्रक्षय।
(3) अस्थि सौशीर्य – मज्जाक्षय। (6) पिपासा – मूत्रक्षय।
(7) प्रततंवातरोगीणि – मज्जाक्षय। (8) हृदयं ताम्यति – रसक्षय।

''ओज''

हृदयस्थ ओज लक्षण :– हृदि तिष्ठति यच्छुद्धं **रक्तमीषत्सपीतकम्।** ओजः शरीरे संख्यातं **तन्नाशान्ना विनश्यति। (17/74)**

ओज का स्थान – हृदय, **हृदयस्थ ओज का वर्ण –** रक्तमीषत्सपीतकम्।

गर्भावस्था में ओज :– प्रथमं जायते ह्योजः शरीरेऽस्मिन् शरीरिणाम्। सर्पिवर्ण मधुरसं लाजगन्धि प्रजायते। (च. सू. 17/75)

गर्भस्थ शरीर में सर्वप्रथम ओज की उत्पत्ति होती है। वर्ण – सर्पिवर्ण, रस – मधुरस, गन्ध – लाजगन्धि।

ओजक्षय :– ''**विभेति दुर्बलोऽभीक्ष्णं ध्यायति व्यधितेन्द्रियः। दुश्छायो दुर्मना रूक्षः क्षामश्चैव ओजसःक्षये।।**''

मनुष्य भयभीत रहता है, दुर्बल हो जाता है, सदैव चिन्तित और ध्यान मग्न रहता है, इन्द्रियां व्यथित रहती है, क्रान्ति मलिन, मन उदास रहता है और शरीर रूक्ष एंव कृश हो जाता है।

ओजक्षय के कारण : –

(1) व्यायमोऽनशनं चिन्ता रूक्षाल्प प्रमिताशनम्। (2) वातातप सेवन, भय, शोक, रूक्ष मद्यपान, प्रजागरण।
(3) कफ, रक्त, शुक्र और मलों का अधिक मात्रा में निकलना। (4) काल एंव भूतोपघात (जीवाणु संक्रमण)।

ओज के गुण :– गुरू शीतं मृदु स्निग्ध बहलं मधुरं स्थिरम्। प्रसन्नं पिच्छिलं श्लक्ष्णमोजो दशगुणं स्मृतम्। (च. चि. 24)

''मधुमेह का निदान एंव सम्प्राप्ति''

निदान :– (1) गुरू, स्निग्ध, अम्ल, लवण पदार्थ – अतिमात्रा में सेवन। (2) नवान्न पानं, निद्रा, **आस्यासुख,**
(3) व्यायाम, चिन्ता, संशोधन (पंचकर्म) – न करना।

सम्प्राप्ति :– उपयुक्त कारणों से शरीर में कफ, पित्त, मेद तथा मांस अत्यधिक बंढ जाते है। इनके बढ़ने से वायु की गति रूक जाती है और कुपित वायु ओज को लेकर मूत्राशय में प्रवेश कर जाती है तब **कष्टकर** मधुमेह रोग की उत्पत्ति होती है।

''प्रमेह पिडिका''

मधुमेह की उपेक्षा करने से शरीर के **मांसल प्रदेशों, मर्म स्थानों तथा संधियों में** सप्त दारूण प्रमेह पिडिकाऐ होती है।

1. चरक – 7 :– 1. शराविका 2. कच्छपिका 3. जालिनी **– कच्छ्रसाध्य। – (ह्यातिबलाः प्रभूत श्लेष्ममेदसः)।**
4. सर्षपी 5. अलजी 6 विनता 7. विद्रधि **– साध्य।** – **(पित्त प्रधान/ पित्तोल्वणा)।**

2. काश्यप – 8 :– चरकोक्त – 7 + अरूंषिका।

3. भोज – 9 :– चरकोक्त 7 + '**कुलत्थिका**', पुत्रिणी, विदारिका। (– मसूरिका, विनता नहीं मानी है।)

4. सुश्रुत, वाग्भट्ट – 10 :– चरकोक्त 7 + 'मसूरिका' पुत्रिणी, विदारिका।

प्रमेह पिडिका	**लक्षण (चरक सूत्र अ. 17/82–90)**
1. शराविका	**अन्तोन्नता मध्यनिम्ना श्यावा क्लेदरूगान्विता।** शराविका स्यात् पिडका **शरावाकृति**संस्थिता।।
2. कच्छपिका	**अवगाढार्ति निस्तोदा, महावास्तुपरिग्रहा।** श्लक्षणा कच्छ्रपृष्ठाभा पिडका कच्छपी मता।
3. जालिनी	स्तब्धा शिराजालवती स्निग्धस्रावा महाशया। रूजानिस्तोदबहुला सूक्ष्माछिद्रा च जालिनी।।
4. सर्षपिका	**पिडका नातिमहती, क्षिप्रपाका महारूजा।** सर्षपी सर्षपाभाभिः पिडकाभिश्चिता भवेत्।।
5. अलजी	**दहति** त्वचमुत्थाने **तृष्णामोहज्वरप्रदा। विसर्पत्यनिशं,** दुःखात् दहत्यग्निरिवालजी।।
6. विनता	**अवगाढ़रूजा,** क्लेदा, **पृष्ठ/उदर पर उत्पन्न। महती विनता नीला पिडका** विनता मता।
7. विद्रधि	2 प्रकार की होती है (1) बाह्य (2) आभ्यंतर।

"विद्रधि"

निरूक्ति :– दुष्टरक्तातिमात्रात्वात् स वै शीघ्रं विदह्यते। ततः शीघ्र विदाहित्वाद् विद्रधिः इत्यभिधीयते।। (च. सू. 17/95)
दुष्ट रक्त की अतिमात्रा होने से यह शीघ्र विदाहयुक्त हो जाती है। इसलिये इसे विद्रधि कहते हैं।
चरक ने विद्रधि के **2 भेद** माने है। (सुश्रुत – 6)

1. बाह्य विद्रधि :– (3 स्थान) – त्वक, मांस, स्नायु में उत्पन्न होती है।– कण्डाराभा महारूजा।
2. आभ्यतर विद्रधि :–(9 स्थान) – हृदय, वस्ति, नाभि, यकृत, प्लीहा, क्लोम वृक्क, कुक्षि, वंक्षण। (सुश्रुत–10– गुदा)।

बाह्य विद्रधि – 5	**लक्षण**
1. वातज	व्यधच्छेद **भ्रमनाह** शब्दस्फुरणसर्पणैः वातिकी।
2. पित्तज	पैत्तिकी तृष्णादाहमोह **मदज्वरै।**
3. कफज	**जृम्भा,** उत्क्लेश, अरूचि, स्तम्भ, शीतकैः श्लैष्मिकी।
4. त्रिदोषज	सर्वासु च **महच्छूलं** विद्रधीषूपजायते। – अत्यंत कष्टकारी, मिश्रित लक्षण।
5. पंचमान विद्रधि	1. तप्तैः शस्त्रैः यथा मथ्येत् – अग्नितप्त शस्त्र से मंथा जा रहा है। 2. उल्मुकैरिव दह्यते – उन्मुक (लुकारी) से स्पर्श कर जलाया गया हो। **3. व्यम्लतां याता वृश्चिकैरिव दश्यते।** – बहुत से विच्छू एक साथ काट दें।

विद्रधि –	**दोषानुसार स्राव**
1. वातज	तनु, रूक्ष, अरूण, श्याष, फेनिल स्राव।
2. पित्तज	**तिल, माष, कुलत्थोद सन्निभं (क्वाथ) स्राव।**
3. कफज	श्वेत, पिच्छिलं, बहलं, बहु स्राव।

"अन्तर्विद्रधियों का सापेक्ष निदान"		
	चरकानुसार – 9 स्थान	**सुश्रुतानुसार – 10** स्थान
1. हृदय	हृद्घट्टन, तमक, प्रमोह, कास, श्वास	संर्वागग्रह, तीव्र हृदि शूल।
2. नाभि	हिक्का	हिक्का, आटोप।
3. यकृत	श्वास	श्वास, तृष्णा।
4. प्लीहा	उच्छ्वासोपरोध (श्वासावरोध)	उच्छ्वासावरोध (श्वासावरोध)
5. क्लोम	पिपासा, मुखशोष, गलग्रह	पिपासा।
6. कुक्षि	कुक्षिपार्श्वान्तर शूल, अंसशूल	मारूत कोपनम्।
7. वंक्षण	सक्थिसाद	तीव्र कटिपृष्ठग्रह।
8. वस्ति	कच्छ्र, पूतिमूत्रवर्चस्त्वं	मल–मूत्र त्याग में कष्ट, दुर्गन्ध (पूति)।
9. वृक्क	पृष्ठकटिग्रह	पार्श्व संकोच।
10. गुदा		वातनिरोध, कच्छ्र, अल्पमूत्रता।

विद्रधि स्राव मार्ग :– 1. नाभि के ऊपरी भाग में होने वाली विद्रधि का स्राव – मुख मार्ग से।
2. नाभि के नीचे के भाग में होने वाली विद्रधि का स्राव – गुद मार्ग से।
3. नाभि के मध्य भाग में होने वाली विद्रधि का स्राव – मुख, गुदामार्ग से

विद्रधि असाध्यता :– त्रिमर्मस्थली (हृदय, वस्ति, नाभि), परिपक्व, त्रिदोषज विद्रधि। **चिकित्सा – गुल्मवत।**

बिना प्रमेह की पिडकाएं – मेद के दुष्ट होने पर पर बिना प्रमेह के भी पिडकाएं होती है।
स्थानानुसार असाध्यता – मर्म स्वंसे गुदे पाण्योः स्तनसंधिषु पादयोः। जायन्ते यस्य पिडकाः स प्रमेही न जीवति।।
उपद्रव – (1) तृट्श्वास **(2) मांस संकोथ** (3) मोह, हिक्का, मद, ज्वरा (4) विसर्प, मर्म संरोधा।

–: दोषों की कुल 11 गतियां :–

त्रिविधा गति :– (1) अधः (2) उर्ध्व (3) तिर्यक
(1) कोष्ठ (2) शाखा (3) मर्मास्थि संधि
(1) स्थान (2) क्षय (3) वृद्धि

- **ज्वर एवं मंदाग्नि – दोषों की तिर्यकगति से उत्पन्न होते हैं।**

द्विविधा गति :– 1. प्राकृत गति 2. वैकृत गति।

- **क्रियाशरीर में दोषों की गतियॉ – 9 मानी जाती है।**
- **आशयापकर्ष दोषों की गतियॉ – 10 होती है।**

ऋतुनुसार गति :– **चयप्रकोपप्रशमाः पित्तादीनां यथाक्रमम्। भवन्त्येकैकशः षट्सु कालेष्वभ्रागमादिषु।। (च. सू. 17/114)**
पित्त, कफ और वायु इन तीन दोषों का क्रम से संचय, प्रकोप एवं प्रशम वर्षा, शरद, हेमन्त, बंसत, ग्रीष्म और प्रावृट् में एक एक का होता रहता है।

(1) प्राकृतास्तु बलं श्लेष्मा विकृतो मल उच्यते। स चैवोजः स्मृतः काये स च पाप्मोपदिश्यते।। (च. सू. 17/117)
प्राकृत कफ = बल/ओज विकृत कफ = मल/पाप्मा।

(2) सर्वा हि चेष्टा वातेन स प्राणः प्राणिनां स्मृतः। (च. सू. 17/118)

18. त्रिशोथीय अध्याय

शोथ के भेद :– 3 – त्रयः शोथा भवन्ति वातपित्तश्लेष्मनिमित्ताः, ते पुर्नः द्विविधा निजागन्तु भेदेन्। (च. सू. 18/3)
1. त्रिविध शोथ – वातज, पित्तज, कफज शोथ। 2. द्विविध शोथ – निज, आगन्तुज शोथ ।
चरक ने शोथ के भेद 1 (उत्सेध भेद से), 2 (निज, आगन्तुज भेद से), 3, 4, 7, और 8 (दोषानुसार) बताए हैं।

त्रिविध शोथ :– **चरक** – एकांग, सर्वांग और अर्द्धागं।

- **माधव** – उर्ध्वगत, मध्यगत और अधोगत।
- **वाग्भट्ट** – पृथु, उन्नत और ग्रंथित।

शोथ	**दोषानुसार लक्षण**
वातज	पीडितान्युन्नमन्त्याशु वातशोथं – जो दबाने पर शीघ्र पुनः उठ जाता है। **शोथो नक्तं प्रणश्यति।** – रात्रि में नष्ट हो जावें। **(दिवावली) वातिक – सर्षपकल्कावलिप्त।** **स्नेहोष्णमर्दनाभ्यां च प्रणश्येत् स च वातिकः।** – स्नेहन, स्वेदन एंव मर्दन से नष्ट हो जावें।
पित्तज	पिपासा, ज्वर, दाह और स्वेद से युक्त शोथ।, **'पूर्व मध्यात् प्रशूयते।'**– जो शरीर मध्य से आरम्भ हो **तनुत्वकं चातिसारी च पित्तशोथः स उच्यते।** – अतिसार युक्त। **पैत्तिक – कपिलताम्र रोमा।**
कफज	शीतल, स्थिर, कण्डूयुक्त, **कफज शोथ – निशावली।** **निपीडतो नोन्नमति श्वयथु** – शोथ दबाने पर शीघ्र नहीं उठता है एंव शोथ रात्रि में बढ़ जाता है।

शोथ के उपद्रव :– चरक – (7) – ज्वर, अरूचि, तृष्णा + वमन, अतिसार, दौबर्ल्य + श्वास।
सुश्रुत – (9) – चरकोक्त 7 उपद्रव + कास तथा हिक्का।

साध्यासाध्यता :–

1. पुरूष के लिए– जो शोथ पैर से उत्पन्न होकर सम्पूर्ण शरीर में फैल जाये – वह कष्टसाध्य है।
2. स्त्री के लिए – जो शोथ मुख से उत्पन्न होकर सम्पूर्ण शरीर में फैल जाये – वह कष्टसाध्य है।
3. पुरूष/स्त्री – जो शोथ गुह्य स्थान से उत्पन्न होकर सम्पूर्ण शरीर फैल जाये – वह कष्टसाध्य है।
4 ज्वर, अरूचि, तृष्णा, वमन, अतिसार, दौबर्ल्य, श्वास आदि उपद्रवों से युक्त शोथ कष्टसाध्य होता है।

''एकदेशीय शोथ''

शोध	दोष	स्थानीय लक्षण
1. उपजिह्विका	K	प्रकुपित कफ **जिह्वा मूल में** स्थित होकर शोथ उत्पन्न करें
2. गलशुण्डिका	K	प्रकुपित कफ **काकल प्रदेश (तालुमूल) में** रूककर शीघ्र शोथ।
3. गलग्रह	K	कुपित कफ **गले के अन्तः भाग में** शोथ उत्पन्न करें। (आशु संजनयेच्छोथं)
4. गलगण्ड	K	कुपित कफ **गले बाह्य भाग में** संचित होकर मंद शोथ (शनैः संजनयेच्छोथं)।
5. विसर्प	P+ R	यस्य पित्त प्रकुपितं सरक्तं त्वचि। शोथं सरागं जनयेद् **विसर्पस्तस्य** जायते।
6. पिडिका	P+ R	यस्य पित्त प्रकुपितं त्वचि **रक्तऽवतिष्ठते।** शोथं सरागं जनयेद् पिडिका जायते।(स्थिर शोथ)
7.तिलका,8.पिप्लव, 9.व्यंग,10.नीलिका	P	यस्य पित्त प्रकुपितं शोणितं प्राप्य **शुष्यति।** प्रकुपित पित्त का रक्त में जाकर सूख जाना। **(सुश्रुत – पिप्लु = जतुमणि) (श्यामलं मण्डलं व्यंग वक्त्रादन्यत्र नीलिका – वाग्भट्ट)**
11. शंखक	P	पित्तं प्रकुपित शंखयोवतिष्ठते। **श्वयथुः शंखको नाम** दारूणस्तस्य जायते।।
12. कर्णमूलशोथ	P	पित्तं प्रकुपितं कर्णमूलेऽवतिष्ते। **ज्वरान्ते** दुर्जयोऽन्ताय शोधस्तस्योपजावते।।
13. प्लीहा वृद्धि	V	कुपित वायु प्लीहा को हटाकर **वामपार्श्व** में वेदना।
14. गुल्म	V	कुपित वायु गुल्मस्थान में आश्रय लेकर शूल और शोथ को उत्पन्न कर देती है।
15. वृद्धि रोग	V	कुपित वायु शोथ, शूल युक्त वायु का वंक्षण से → वृषणों में संचलन।
16. उदररोग	V	कुपित वायु शरीर में ''**त्वङ्मांसान्तर आश्रित**'' होकर कुक्षि में शोथ।
17. आनाह	V	प्रकुपित वायु कुक्षि में आश्रित होकर स्थित रहे।
18. उत्सेध	V	अर्बुद, अधिमांस में उत्सेध युक्त शोथ रहता है।
19. रोहिणी	T	प्रकुपित त्रिदोष एक ही समय में **जिह्वामूल में** अवस्थित होकर विदाह, वेदना युक्त भंयकर शोथ उत्पन्न करते है। इस रोग का नाम रोहिणी है (3 दिन में मृत्यु) **त्रिरात्रं परमं तस्य जन्तोः भवति जीवितम्। कुशलेन त्वनुक्रान्तः क्षिप्रं संपद्यते सुखी**

व्याधि के भेद :– 2 – **(1). साध्य** – 1. मृदु (सुखसाध्य) 2. दारूण (कृच्छ्रसाध्य)
(2). असाध्य – 1. मृदु (याप्य) 2. दारूण (प्रत्याख्येय)

- **त एवापरिसंख्येया भिद्यमाना भवनि हि। रूजावर्णसमुत्थानस्थानसंस्थाननामभिः। (च.सू. 18/42)**
  यही चतुर्विध रोग रूजा, वर्ण, निदान, स्थान और लक्षण एवं नाम भेद से असंख्य होते हैं।
- **'न हि सर्वविकाराणां नामतोऽस्ति ध्रुवा स्थितिः।** – सभी रोगों का नाम निश्चित करना (नामकरण) सम्भव नहीं है।

दोष	प्राकृत कर्म
1. वात	उत्साहोच्छ्वासनिःश्वासचेष्टा धातुगतिः समा। समो मोक्षो गतिमतां वायोःकर्माविकारजम्। (च.सू. 18/49)
2. पित्त	दर्शनं पक्तिरूष्मा च क्षुत्तृष्णा देहमार्दवम्। प्रभा प्रसादो **मेधा** च पित्त कर्माविकारजम्।। (च. सू. 18/50)
3. कफ	स्नेहो बन्धः स्थिरत्वं च गौरव वृषता बलम्। **क्षमा** धृतिरलोभश्च कफकर्माविकारजम्।। (च. सू. 18/51)

19. अष्टौदरीय अध्याय

सामान्यज रोग	संख्या –48	नाम
1. भेद वाले रोग	3	उरुस्तम्भ, सन्यास, महागद
2. भेद वाले रोग	8	ज्वर, अर्श, व्रण, आयाम, गृधसी, वातरक्त, आमदोष, कामला
3. भेद वाले रोग	3	शोथ, रक्तपित्त, किलास
4. भेद वाले रोग	10	नेत्ररोग, कर्णरोग, मुखरोग, प्रतिश्याय, मद, मूर्च्छा, शोष, क्लैव्य, ग्रहणी, अपस्मार।
5. भेद वाले रोग	12	श्वास,कांस,हिक्का, तृष्णा,छर्दिअरूचि, गुल्म, प्लीहदोष, पाण्डु, हृद्रोग, शिरोरोग, उन्माद
6. भेद वाले रोग	2	अतिसार, उदावर्त
7. भेद वाले रोग	3	कुष्ठ, विसर्प, प्रमेहपिडिका
8. भेद वाले रोग	4	उदरोग, मूत्राघात, क्षीरदोष, शुक्रदोष
20 भेद वाले रोग	3	प्रमेह, योनिव्यापद, कृमिरोग

1. उदरोग – 8	V,P,K,S, प्लीहोदर, बद्धोदर, छिद्रोदर, दकोदर।	(सुश्रुत – 8)
2. मूत्राघात – 8	**V,P,K,S अश्मरीजन्य, शर्कराजन्य, रक्तजन्य, शुक्रदोष।**	**(सुश्रुत – 12)**
3. क्षीरदोष – 8	वैवर्ण्य, वैगन्ध्य, वैरस्य, पैच्छिल्य, फेनसंघात, रौक्ष्य, गौरव, स्नेह।	(सुश्रुत – 11)
4. शुक्रदोष – 8	तनु, शुष्क, फेनिल, श्वेत, पूति, पिच्छिल, रक्तादि युक्त, अवसादि।	(सुश्रुत – 11)

5. कुष्ठ – 7	कपाल, औदुम्बर, मंडल, ऋष्यजिहवा, पुडरीक, सिध्म, काकणक।	(सुश्रुत – 7)
6.प्रमेहपिडिका–7	शराविका, कच्छपिका, जालिनी, सर्षपी, अलजी, विनता, विद्रधि।	(सुश्रुत – 10)
7. विसर्प – 7	वतज, पित्तज, कफज, सन्निपातज, आग्नेय, ग्रन्थि, कदर्म।	(सुश्रुत – 5)

8. अतिसार – 6	**वतज, पित्तज, कफज, सन्निपातज, भयज, शोकज।**	**(सुश्रुत – 6)**
9. उदावर्त – 6	वात, मूत्र, पुरीष, शुक्र, **छर्दि, क्षवथु निरोधजन्य।**	(सुश्रुत – 13)

1. श्वास – 5	महा, उर्ध्व, छिन्न, तमक और क्षुद्र श्वास।	(सुश्रुत – 5)
2. कास – 5	वातज, पित्तज, कफज, क्षतज, और क्षयज।	(सुश्रुत – 5)
3. हिक्का – 5	महती, गम्भीरा, व्यपेता, क्षुद्रा, अन्नजा।	(सुश्रुत – 5)
4. तृष्णा – 5	वातज, पित्तज, आमज, क्षयज, उपसर्गज।	(सुश्रुत – 7)
5. छर्दि – 5	वातज, पित्तज, कफज, सन्निपातज द्विष्टार्थ संयोगज।	(सुश्रुत – 5)
6. अरोचक – 5	वातज, पित्तज, कफज, सन्निपातज, द्वेषजन्य।	(सुश्रुत – 5)
7. गुल्म – 5	V,P,K,S रक्तज।	(सुश्रुत – 5)
8. प्लीहदोष – 5	**V,P,K,S रक्तज।**	
9. पाण्डु – 5	V,P,K,S मृद्विका भक्षण जन्य।	(सुश्रुत– 4)
10. हृदय – 5	V,P,K,S कृमिज।	(सुश्रुत– 4)
11. शिर – 5	V,P,K,S कृमिज।	(सुश्रुत – 11)
12. उन्माद – 5	V,P,K,S आगन्तुज।	(सुश्रुत – 6)

1. अपस्मार – 4	वातज, पित्तज, कफज, सन्निपातज (V,P,K,S,)। (सुश्रुत – 4)
2. नेत्ररोग – 4	वातज, पित्तज, कफज, सन्निपातज (V,P,K,S,)। (सुश्रुत – 76)
3. प्रतिश्याय – 4	वातज, पित्तज, कफज, सन्निपातज (V,P,K,S,)। (सुश्रुत – 5)
4. कर्णरोग – 4	वातज, पित्तज, कफज, सन्निपातज (V,P,K,S,)। (सुश्रुत – 28)
5. ग्रहणी – 4	**वातज, पित्तज, कफज, सन्निपातज (V,P,K,S,)। (सुश्रुत – 4)**
6. मुखरोग – 4	वातज, पित्तज, कफज, सन्निपातज (V,P,K,S,)। (सुश्रुत – 65)
7. मद – 4	वातज, पित्तज, कफज, सन्निपातज (V,P,K,S,)। (सुश्रुत – 4)
8. मूर्च्छा – 4	वातज, पित्तज, कफज, सन्निपातज (V,P,K,S,)। (सुश्रुत – 4)
9. शोष – 4	साहसजन्य, वेगसंधारणजन्य, धातुक्षयजन्य, विषमाशनजन्य। (सुश्रुत – 4)
10. क्लैब्य – 4	**बीजोपघात्, ध्वजभंग, जराजन्य, शुक्रक्षयजन्य। (सुश्रुत – 6)**

1. शोथ – 3	वातज, पित्तज, कफज। (सुश्रुत – 6)
2. किलास – 3	ताम्रवर्ण, रक्तवर्ण, श्वेतवर्ण।
3. रक्तपित्त – 3	अधोग, उर्ध्वग, उभयमार्गज। (सुश्रुत – 7)

1. ज्वर – 2	(1) शीत आहारविहार जन्य (2) उष्ण आहारविहार जन्य। (सुश्रुत– 6)
2. आम – 2	(1) अलसक (2) विसूचिका (सुश्रुत – 3)
3. अर्श – 2	(1) शुष्कार्श (2) आर्द्र अर्श। (सुश्रुत – 6)
4. व्रण – 2	(1) निज (2) आगन्तुज।
5. आयाम – 2	(1) बहिरायाम (2) अन्तरायाम।
6. कामला – 2	(1) कोष्ठाश्रयी (2) शाखाश्रयी।
7. वातरक्त – 2	(1) गम्भीर (2) उत्तान।
8. गृधसी – 2	(1) वातज (2) वात कफज।

1. उरूस्तंभ –1	एक ऊरूस्तम्भ इति **आमत्रिदोषसमुत्थः।**
2. सन्यास – 1	एक सन्यास इति त्रिदोषात्मको **मनःशरीराधिष्ठानः।**
3. अतत्वाभिनिवेश – 1	एको **'महागद'** इति अतत्वाभिनिवेशः। **(महाव्याधि = हलीमक – चरक)**

कृमिरोग – 20	**नाम** (चरक, वाग्भट्ट – MPRK – 2567 सुश्रुत – MPRK – 0776)
1. बर्हिमलज	यूका, पिप्पलिका।
2. शोणितज	केशाद्, लोमाद, लोमद्वीप, सौरस, औदुम्बर, जन्तुमाता।
3. कफज	अन्त्राद्, उदराद्, हृदयाद, चरू, दर्भपुष्प, सुगन्ध, महागुद
4. पुरीषज	ककेरूक, मकेरूक, लेलिह, सौसुराद, सशुलक।

प्रमेह भेद – सुश्रुत, चरक, वाग्भट्ट – 20।
योनिव्यापद के भेद – सुश्रुत, चरक, माधव, वाग्भट्ट – 20। (चरक ने रक्तजा योनिव्यापद को 'रक्तयोनि व्यापद' कहा है।)

'सर्व एवं निजा विकारा नान्यत्र वातपित्तफेभ्यो निर्वर्तन्ते'' – (च. सू. 19/5)
सभी 'निजविकार' बिना वात, पित्त, कफ के नहीं उत्पन्न होते है जैसे –पक्षी दिन भर उड़ता रहे किंतु अपनी छाया से दूर नहीं जा सकता है, उसी प्रकार अपनी धातुवैषम्यता से उत्पन्न होने वाले रोग वात, पित्त, कफ से परे नहीं जा सकते है

- **दोषा एव हि सर्वेषां रोगाणामेककारणम् – (अष्टांग हृदय सू. 12)**

20. महारोगाध्याय

रोग भेद :– चरक ने रोग का **1 भेद** (रूक् सामान्यात् होने से), **2 प्रकृति भेद** से (निज, आगन्तुज भेद से), 2 अधिष्ठान भेद से (मनः शरीर विशेषात्) और 4 दोषानुसार (V, P, K, आगन्तुज) भेद बताए हैं।

रोग असंख्य :– विकाराः पुनरापरिसंख्येयाः प्रकृत्यधिष्ठान लिंगायतन विकल्पविशेषापरिसंख्येयत्वात्।

रोगों के हेतु :– (1) आगन्तुक रोग – नखदशन, पतन, अभिचार, अभिशाप, अभिषंग, अभिधात आदि।
(2) निज रोग – वात, पित्त तथा कफ का विषम होना।
(3) दोनों के कारण – **(1) असात्मेन्द्रियार्थ संयोग (2) प्रज्ञापराध (3) परिणाम।**

दोष	मुख्य स्थान	अन्य स्थान
1. वात	चरक – पक्वाशय सुश्रुत – श्रोणिगुदा, वाग्भट्ट – पक्वाधान	वस्तिःपुरीषाधानं कटिःसक्थिनी पादावस्थीनि पक्वाशयश्च वातस्थानानि तत्रापि **पक्वाशयो विशेषेण वातस्थानं।**
2. पित्त	चरक – आमाशय सुश्रुत – पक्वामाशय मध्य, वाग्भट्ट – नाभि	स्वेदो रसो लसीका रूधिरम् आमाशयश्च पित्तस्थानानि, तत्रापि **आमाशयो विशेषण पित्तस्थानम्।**
3. कफ	चरक – उरः प्रदेश सुश्रुत – आमाशय, वाग्भट्ट – मध्य, उर्ध्वप्रदेश	उरः शिरो ग्रीवा पर्वाण्यमाशयो मेदश्च श्लेष्म स्थानानि, तत्रापि **उरो विशेषेण श्लेष्मस्थानम्।**

–: नानात्मज विकार :–

1. वातज 80 विकार – नखभेद, **विपादिका,** गुदभ्रंश, **हृन्मोह, हृद्द्रव,** ग्रीवास्तम्भ, मुखशोष, कर्णशूल, अर्दित, वाधिर्य, **भ्रम,** विषाद, अस्वप्नश्चन्, **तम और तिमिर** आदि सभी वातज नानात्मज विकारों में आते हैं।

1. नखभेद	21. विड्भेद	41. **दन्तभेद**	61. शिरोरूक्
2. विपादिका	**22. उदावर्त**	42. दन्तशैथिल्य	62. केशभूमिस्फुटन
3. पादशूल	23. खज्ज	43. मूकत्व	**63. अर्दित**
4. पादभ्रंश	24. कुब्जत्व	44. वाक्यसंग	64. एकांग रोग
5. पादसुप्तता	25. वामनत्व	45. कषायास्यता	65. सर्वांग रोग
6. वातखुड्डता	26. त्रिकपृष्ठग्रह	46. मुखशोष	66. आक्षेपक
7. गुल्फग्रह	27. पार्श्वावमर्द	47. अरसज्ञता	**67. दण्डक**
8. पिण्डिकोद्वेष्टन	28. उदरावेष्ट	48. घ्राणनाश	68. तम
9. गृधसी	29. हृन्मोह	49. कर्णशूल	69. भ्रम
10. जानुभेद	30. **हृद्द्रव**	50. अशब्दश्रवण	70. वेपथु
11. जानुविश्लेष	31. वक्षोद्घर्ष	51. **उच्चैश्रुति**	71. जृम्भा
12. ऊरूस्तम्भ	32. वक्षोपरोध	52. बार्धिय	**72. हिक्का**
13. **ऊरूसाद**	33. वक्षतोद	53. वर्त्मस्तम्भ	**73. विषाद**
14. पांगुल्य	34. बाहुशोष	54. वर्त्मसंकोच	74. अतिप्रलाप
15. गुदभ्रंश	35. **मन्यास्तम्भ**	**55. तिमिर**	75. रौक्ष्य
16. गुदार्ति	36. ग्रीवास्तम्भ	56. अक्षिशूल	76. पारूष्य
17. वृषणाक्षेप	37. कण्ठोद्ध्वंस	57. **अक्षिव्युदास**	77. श्यावभाषता
18. शेफःस्तम्भ	38. हनुभेद	58. भ्रव्युदास	78. अरूणभाषता
19. वंक्षणानाह	39. ओष्टभेद	59. शंखभेद	79. अस्वप्न
20. श्रोणिभेद	40. अक्षिभेद	60. ललाटभेद	80. अनवस्थितचित्तत्व

✓ वातज नानात्मज विकार– 'उरूस्तंम्भ, ग्रधसी, हिक्का तथा उदावर्त' ये सामान्यज और नानात्मज दोनों विकारों में आते है।

2. पित्तज :– 40 विकार – **ओष, प्लोष, दाह, दवथु, धूमक**, अम्लक, विदाह, अर्न्तदाह, अंसदाह, ऊष्माधिक्य, **तमः प्रवेश, मांसक्लेद,** नीलिका, अतृप्ति, आस्यविपाक, **रक्तकोठ** एंव **जीवादान** आदि पित्तज नानात्मज विकारों में आते हैं।

1. ओष – सम्पूर्ण शरीर में स्वेद एंव बेचैनी के साथ तीव्र दाह।
2. प्लोष – शरीर के किसी अंग में स्वेदरहित, अग्निदाह सम अल्प जलन।
3. दवथु – इन्द्रियों में जलन
4. धूमक – मुख से धूम निकलते हुए की तरह प्रतीत होना

✓ पित्तज नानात्मज विकार – ''रक्तपित्त और कामला'' सामान्यज और नानात्मज दोनों विकारों में आते है।

1. ओष	11. अतिस्वेद	21. रक्तपित्त	31. **तृष्णाधिक्य**
2. प्लोष	**12. अंगगन्ध**	**22. रक्तमण्डल**	**32. अतृप्ति**
3. दाह	13. **अंगावदारण**	23. हरितत्व	33. आस्यविपाक
4. दवथु	14. शोणितक्लेद	24. हारिद्रत्व	34. गलपाक
5. धूमक	15. मांसक्लेद	25. नीलिका	35. अक्षिपाक
6. अम्लक	16. त्वग्दाह	26. कक्षा	36. गुदपाक
7. विदाह	17. **त्वगवदरण**	27. कामला	37. मेढ्रपाक
8. अर्न्तदाह	18. चर्मदलन	28. तिक्तास्यता	38. जीवादान
9. अंसदाह	19. रक्तकोठ	29. लोहितगन्धास्यता	39. तमःप्रवेशश्च
10. ऊष्माधिक्य	20. रक्तविस्फोट	30. **पूतिमुखता**	40. हरितहारिद्रनेत्रमूत्रवर्चस्त्व

3. कफज :– 20 विकार –

1. तृप्ति	11. आलस्य	21. बलासक	31. अतिस्थौल्य
2. तन्द्रा	12. मुखमाधुर्य	**22. अपक्ति**	32. शीताग्निता
3. **निद्राधिक्य**	13. मुखस्राव	23. हृदयोकण्ठोलेप	33. **उदर्द**
4. स्तैमित्य	14. श्लेष्मोदि्गरण	24. धमनीप्रतिचय,	34. श्वेतावभासता
5. गुरूगात्रता	15. मलस्याधिक्य	25. **गलगण्ड**	35. श्वेत मूत्रनेत्रवर्चस्त्वं

4. **10 रक्तज :– 10 विकार** – रक्तमण्डलता, रक्तनेत्रत्वं, रक्तमूत्रता, रक्तनिष्ठीवन, रक्तपिटिकादर्शन, औष्ण्यं, पूतिगन्धित्वं, पीडा, कोथ और पाक। – ये 10 रक्तज विकार ''शार्ग्धर'' ने बतलाये है।

–: वात के गुण–कर्म :–

1. आत्म रूप – रौक्ष्यं शैत्यं लाघवं वैशद्यं गतिः अमूर्तत्वमनवस्थितत्वं चेति वायोरात्मरूपाणि।

2. कर्म – संस्र, भ्रंस, व्यास, **संग,** भेद, साद, हर्ष, तर्ष, कम्प, वर्त, चाल, तोद, व्यथा, चेष्टा, खर, परूष, विशद्, सुषिर, अरूण वर्ण, कषायरस, विरसमुखत्व, शोष, स्तंभन, खज्जता।

–: पित्त के गुण–कर्म :–

1. औष्ठयंतैक्ष्ण्यं द्रवत्वनतिस्नेहो वर्णश्च शुक्लारूणवर्जो गन्धश्च विस्रे रसौ च कटुकाअम्लौ सरत्वं च पित्तस्यात्मरूपाणि।

2. कर्म – दाह, उष्णता, पाक, स्वेद, क्लेद, कोथ, **कण्डू,** स्राव, राग, तथा अपने जैसी गन्ध, वर्ण व रस उत्पन्न करना।

–: कफ के गुण–कर्म :–

1. आत्मरूप – स्नेह, शैत्यं, शौक्ल्य, गौरव, माधुर्य, स्थैर्य, पैच्छियं, मात्स्न्यानि श्लेष्म आत्मरूपाणि।

2. कर्म – श्वेतता, शैत्य, **कण्डू,** स्थैर्य, गौरव ,स्नेहो, सुप्ति, क्लेद, उपदेह, बन्ध, माधैर्य, चिरकारित्व।

चिकित्सा पूर्व रोगपरीक्षा :– रोगमादौ परीक्षयेत ततोऽनन्तरमौषधम् । ततः कर्म भिषक् पश्चात् ज्ञानपूर्व समाचरेत्।।

21. अष्टौनिन्दितीय अध्याय

अष्टनिन्दित पुरूष :– (1) अतिदीर्घ (3) अतिलोमा (5) अतिकृष्ण (7) अतिस्थूल
(2) अतिह्रस्व (4) अलोमा (6) अतिगौर (8) अतिकृश।

काश्यप ने दशविध निन्दित बालक :– अष्टनिन्दित + 9. अतिमृदु 10. अतिकठिन।

अतिस्थूलता के कारण –

(1) अतिसम्पूरणात् (2) गुरू,मधुर,शीत,स्निग्धोपयेग (3) अव्यायाम (4) अव्यवाय
(5) दिवास्वप्न (6) नित्यहर्ष (7) अचिंतन (8) बीज स्वभाव।

अतिस्थूलता के लक्षण –मेदोमांसातिवृद्धत्वात् चलस्फिग् उदर स्तनः। अयथोपचयोत्साहो नरोऽतिस्थूल उच्यते।।

अतिस्थूलताजन्य दोष :– 8

(1) आयुह्रास (2) निरूत्साही (3) कृच्छ्रव्यवायता (4) दौर्बल्य (5) दौर्गन्ध्य (6) स्वेदाबाध (7) अतिक्षुत (8) अति पिपासा।

अतिकृशता के कारण :–

(1) रूक्षान्नपान (2) लंघन (3) प्रतिमाशन (4) शरीर, मन, वाणी क्रियातियोग (5) शोक (6) वेगनिद्राविनिग्रह
(7) रूक्षद्रव्यो का उद्वर्तन (8) स्नानात्यांभ्यास (9) वातप्रकृति (10) जरावस्था (11) विकारानुशय (12) क्रोध

अतिकृशता के दोष :–

1. व्यायाम 2. अतिसौहित्य 3. क्षुत 4. पिपासा 5.औषध 6.रोग 7. अतिशीतोष्ण 8. मैथुन को सहन नहीं कर सकता।
(1) कास (2) श्वास (3) क्षय (4) गुल्म (5) प्लीहा (6) उदर (7) अर्श (8) ग्रहणी – प्रायः हो जाया करते हैं

अतिकृशता के लक्षण –शुष्कस्फिगुदरग्रीवो धमनीजालसंततः। त्वगस्थिशेषोऽतिकृश स्थूलपर्वा नरोमतः। (च.सू. 21/11)

अतिस्थूल और अतिकृश इनकी चिकित्सा क्रमशः **कर्षण और वृंहण** के द्वारा करनी चाहिए।

स्थूल और कृश में श्रेष्ठता :– 'अतिकृश स्थूल से श्रेष्ठ होता है।'

1. **स्थौल्यकार्श्ये वरं कार्श्य समोपकरणौ हि तौ। यद्युभौ व्याधिरागच्छेत् स्थूलमेवातिपीडयेत।। (च.सू. 21/17)**
2. **कार्श्यमेव वरं स्थौल्याद् न हि स्थूलस्य भेषजम्। (अ .ह्र. 14/31)**

समसंहनन पुरूष का लक्षण :– (सुश्रुत – स्वस्थ पुरूष का लक्षण।)

संममांस प्रमाणस्तु समसंहननों नरः। दृढेन्द्रियों विकारणां न बलेनाभियूयते।
क्षुत्पिपासातपसहः शीतव्यायामसंसहः। समपक्वा समज्वरः सममांसचयोमताः।। (च.सू. 21/18 – 19)

चिकित्सा :– (1) अतिस्थूलता चिकित्सा – कर्षण– गुरू, अवतर्पण द्रव्य। **(गुरू चातर्पणं चेष्टं स्थूलानां कर्षणं प्रति)**
(2) अतिकृशता चिकित्सा – वृंहण – लघु, संतर्पण द्रव्य। **(कृशानां बृंहणार्थ च लघु संतर्पणं च यत्)**

चिकित्सासूत्रः–(1) स्थूलता चर्तुसूत्र – (1) प्रजागरं (2) व्यवायं (3) व्यायाम (4) चिन्ता।
(2) कृशता त्रिसूत्र – (1) अचिन्ता (2) अतिनिद्रा (3) पौष्टिक आहार।

अतिस्थूल चिकित्सा	अतिकृश चिकित्सा
1. वातनाशक, श्लेष्म मेद अपहरण अन्नपान	1. अनिद्रा, सुशय्या, मनसंतुष्टि, शांतिमय वातावरण
2. **रूक्ष, उष्ण तथा तीक्ष्ण बस्तियों का प्रयोग**	2. हर्ष, प्रिय, व्यक्ति एवं वस्तुओं का दर्शन
3. गुडूची, मुस्तक + त्रिफला का सेवन	3. **चिन्ता, व्यवाय, व्यायाम विराम।**
4. **तक्रारिष्ट एवं मधुशर्बत का प्रयोग।**	4. नवान्न, नवमद्य, ग्राम्य, आनूप, औदक मांसरस
5. विड्ंग+शुण्ठी+यवक्षार + **तीक्ष्ण लोहभस्म**, मधु	5. दूध+दधि+घी + शालि + उड़द + गेहूं + गुड़ पदार्थ
6. **यवामलक चूर्ण – उत्तम पथ्य।**	6. **स्निग्ध मधुर बस्तियां**, तैलाभ्यंग, उबटन लगाना।
7. बिल्वादि वृहत पंचमूल क्वाथ + मधु	7. स्नान, सुगन्ध, माला, वस्त्र आभूषण धारण।
8. **अग्निमंथ स्वरस से शिलाजीत का सेवन**	8. यथा **उचित संशोधन, रसायन बाजीकरण का प्रयोग।**

"निद्रा"

निद्रा की उत्पत्ति :– यदा तु मनसि क्लन्ति कर्मात्मानः क्लमान्विताः। विषयेभ्यो निवर्तन्ते तदा स्वपिति मानवः।।

मन के साथ इन्द्रियों का अपने विषयों से निवृत्त होना ही निद्रा है।

आहार, निद्रा और ब्रह्मचर्य – ये त्रि उपस्तम्भ है। **त्रय उपस्तम्भा इत्याहारः स्वप्नो बह्मचर्यमिति। (च. सू. 11/33)**

सम्यक निद्राश्रित :– सुख–दुख, पुष्टि–कार्श्य, बलाबलम्, वृषता–क्लीवता, ज्ञान–अज्ञान, जीवन–मृत्यु।

अति/अकाल/अनिद्रा का परिमाण :– आरोग्य (सुख) और आयुनाश।

दिवास्वप्न के योग्य – (1) गीताध्ययनमद्यस्त्रीकर्ममाराध्वकर्षिता (2) अजीर्णिनः (3) क्षताःक्षीणा (4) वृद्धाबालास्तथाऽबलाः। (5) तृष्णातिसारशूलार्ताः (4) हिक्का –श्वास रोगी (6) कृशाः (8) पतितभिहत (9) यानप्रजागरैः क्रोधशोकभय क्लान्ताः।

(सुश्रुतानुसार दिवास्वप्न का विधान– दिवास्वप्नश्च तृट् शूल हिक्का जीर्णातिसारिणाम् – सु. शा. 4/47)

दिवास्वप्न हेतु ऋतु :– ग्रीष्म ऋतु को छोड़कर अन्य ऋतु में दिवास्वप्न से **कफपित्त का प्रकोप** होता है।

(सुश्रुतानुसार ग्रीष्म ऋतु को छोड़कर अन्य ऋतु में दिवास्वप्न से **त्रिदोष का प्रकोप** होता है।)

दिवास्वप्न का निषेध :– मेदस्विनः स्नेहनित्याः श्लेमलाः श्लेष्मरोगिणः। दूषीविर्षातश्च दिवा न शयीरन् कदाचन।।

(कण्ठरोगी – वाग्भट्ट)।

दिवास्वप्नजन्य विकार :– हलीमक, शिरःशूल, स्तैमित्यं, गुरूगात्रता। अंगमर्द, अग्निनाश, प्रलेपोहृदयस्य च। कास, कोठ कण्डू, व पिडका– उत्पत्ति, स्मृतिबुद्धिप्रमोह, शोफ, पीनस, अर्द्धावभेदक, इन्द्रियार्थ विकार।

रात्रि जागरण हितकारी – कफ मेदो विषार्यानां राजौ जागरणं हितम्। (सु. शा. 4/42)

(1) रात्रौ जागरण रूक्षं – (2) स्निग्धं प्रस्वपनं दिवा।

(3) अरूक्षं अनभिष्यन्दि – त्वासीनं प्रचलायितम्।। (च.सू. 21/50)

देहवृत्तौ यथाऽऽहारस्तथा स्वप्नः सुखो मतः। स्वप्नाहारसमुत्थे च स्थौल्यकार्श्ये विशेषतः। (च.सू. 21/51)

स्थौल्य और कार्श्य विशेषतः आहार एवं स्पप्न पर निर्भर है।

स्थौल्य एवं कार्श्य – **रस निमित्तमेव स्थौल्यं कार्श्य च। (सु. सू. 15/32)**

निद्रानाश की चिकित्सा :– अभ्यंग, उत्सादन, स्नान, मनोनुकूल शब्दगंध, संवाहन, नेत्रतर्पण, शिर एंव वदन में लेप, शाल्यन्न, ग्राम्यानूपोदक मांसरस, दूध, घी, मद्य और मानसिक सुख।

निद्रानिवारक उपाय :– कायविरेचन, शिरोविरेचन, वमन, चिन्ता, क्रोध, भय, व्यायाम, धूम्रपान करना, **रक्तमोक्षण,** उपवास, असुखशय्या, सत्वगुण की अधिकता, तमो गुण पर विजय तथा उदार प्रवृत्ति।

निद्रानाश के हेतु :– (5) – कार्य कालो विकारश्च प्रकृतिः वायुरेव च।

(1) कार्य व्यवस्था (2) प्रतिकूल समय (3) विकारग्रस्त (4) वात एवं पित्त प्रकृति (5) वातप्रकोप।

निद्रा के भेद :–

चरक – (6) – तमोभवा, श्लेष्मसमुद्भवा, मनःशरीरश्रमसम्भवा, आगन्तुकी, व्याध्यनुवर्तनी, रात्रिस्वभावप्रभवा।

रात्रिस्वभावप्रभवा निद्रा = भूधात्री,

तमोभवा निद्रा = पापों का मूल

तथा शेष 4 निद्राऍ श्लेष्मसमुद्भवा, मनःशरीरश्रमसम्भवा, आगन्तुकी और व्याध्यनुवर्तनी **व्याधि को निर्दिष्ट करती है।**

सुश्रुत – (3) – (1) वैष्णवी (स्वाभावात्) (2) वैकारिकी (3) तामसी।

वाग्भट्ट – (7) – तमोभवा, कफजन्य, **चित्तखेदजन्य, देहखेदजन्य,** आगन्तुज, आमयजन्य, तथा काल स्वभावज।

22. लंघन बृंहणीय अध्याय

षड्विध उपक्रम :– (1) लंघन (2) बृंहण (3) रूक्षण (4) स्तम्भन (5) स्नेहन (6) स्वेदन।

(1) लंघन – यत्किच्वित् लाघवकरं देहे तत्लघनं स्मृतम्। (2) बृंहण – बृहत्वं यच्छरीरस्य जनयेत् तच्च् बृंहणम्।
(3) रूक्षण – रौक्ष्यं खरत्वं वैशद्यं यत् कुर्यात्तद्धि रूक्षणम्। (4) स्वेदन – स्तम्भनगौरवशीतघ्नं स्वेदनं स्वेदकारकम्।
(5) स्नेहन – स्नेहनं स्नेहविष्यन्मार्दवक्लेदकारकम्। (6) स्तम्भन– स्तम्भनं स्तम्भयति यद् गतिमन्तं चलं ध्रुवम्।

1. लंघन द्रव्य – लघूष्णतीक्ष्णत विशदं रूक्षं सूक्ष्मं खरं सरम्। कठिनं चैव यद्द्रव्यं प्रायस्तल्लंघनं स्मृतम्। (च.सू. 22/12)

2. बृंहण द्रव्य – गुरू शीतं मृदु स्निग्ध बहलं **स्थूलपिच्छिलम्। प्रायो मन्दं स्थिरं श्लक्षणं द्रव्यं बृंहणमुच्यते। (च.सू. 22/13)**

3. रूक्षण द्रव्य – रूक्षं लघु खरं तीक्ष्णमुष्णं **स्थिरपिच्छिलम्।** प्रायशः कठिनं चैव यद् द्रव्यं तद्धि रूक्षणम्। (च.सू. 22/14)

4. स्नेहन द्रव्य – द्रवं सूक्ष्मं सरं स्निग्धं पिच्छिलम् गुरू शीतलम्। **प्रायो मन्दं मृदु च यद् द्रव्यं तत् स्नेहनम् मतम्।**

5. स्वेदन द्रव्य – उष्णं तीक्ष्णं सरं **स्निग्धं रूक्षं** सूक्ष्मं द्रव स्थिरम्। द्रव्यं गुरू च तत् प्रायस्तद्धि स्वेदनमुच्यते।

6. स्तम्भन द्रव्य :– शीतं मन्दं मृदु श्लक्षणं रूक्षं सूक्ष्मं द्रवं स्थिरम्। यद् द्रव्यं लघु चोद्दिष्टं प्रायस्तत् स्तम्भनं स्मृतम्।

लंघन के 10 प्रकार :– **चतुष्प्रकारा संशुद्धि :–** वमन, विरेचन, शिरोविरेचन (नस्य), निरूहवस्ति। – (4)
एवं 5. पिपासा 6. उपवास 7. व्यायाम 8. वायु 9. आतप 10. पाचन। – (6)

वाग्भट्टानुसार लंघन के 2 प्रकार :– शोधनं शमनं चेति द्विधा तत्रापि लंघनम्।
शोधन – (5) – वमन, विरेचन, नस्य, निरूहवस्ति, **रक्तमोक्षण।** – (5)।
शमन – (7) – क्षुधा, पिपासा, व्यायाम, वायु, आतप, **दीपन,** पाचन। – (7)।

(1) संशोधन द्वारा लंघन – प्रभूतश्लेष्मपित्तास्रमलाः संसृष्टमारूता, वृहत एवं बलवान् शरीर में।
(2) पाचन द्वारा लंघन – मध्यबला रोगाः कफपित्तसमुत्थिताः,
वमन, अतिसार, हृद्रोग, विसूचिका, अलसक, ज्वर, विबन्ध, गौरव, उद्गार, हल्लास, अरोचक में।
(3) पिपासानिग्रह एंव उपवास द्वारा लंघन – उपर्युक्त रोग यदि अल्प बल वाले हो तो
(4) व्यायाम, आतप, मारूत सेवन द्वारा लंघन – बलवान् शरीर एवं मध्यबल/अल्प बल रोग

लंघन योग्य :– त्वगरोगी, प्रमेह, स्निग्ध,अभिष्यन्दी बृंहणी एवं वातविकार रोगी में **शिशिर ऋतु में** लंघन करना चाहिए।

बृंहण योग्य – क्षीण, क्षत, कृश, वृद्ध, दुर्बल, पथिक, नित्य स्त्रीमद्यसेवी में सदा बृंहण **ग्रीष्म ऋतु में** बृंहण करना चाहिए।
"**शोष, अर्श, ग्रहणीदोष व्याधि से कर्शित रोगी में – क्रव्याद मांस** का प्रयोग कर बृंहण कराना चाहिए।"

रूक्षण द्रव्य :– कटु,तिक्त,कषाय रस सेवन, असंयमित स्त्री संभोग, **खलि,पिण्याक,तक्र,** एवं मधु द्वारा रूक्षण करना चाहिए।
रूक्षण योग्य – अभिष्यन्दि, महादोष, मर्माश्रित व्याधि एवं उरूस्तम्भ आदि रोगों में रूक्षता की जाती है।

स्तंभन द्रव्य :– मधुर, तिक्त, कषाय रस सेवन, द्रव, तनु, स्थिर, शीतीकरण औषध।
स्तंभन योग्य – **पित्तक्षाराग्निदग्धा ये वम्यातिसारपीडिता।**
विषस्वेदातियोर्गाताः स्तम्भनीया निदर्शिताः।। (च.सू 22/33)

अतिलंघन लक्षण :– पर्वभेदोऽगमर्दश्च कासः शोषो मुखस्य च।.....**देहाग्निबलनाशश्च** लंघनेऽतिकृते भवेत्। (22/37)
अतिस्तम्भन लक्षण – श्यावता स्तब्धगात्रत्वमुद्वेगो हनुसंग्रहः। हृद्वर्चोनिग्रहश्च स्यादतिस्तम्भितलक्षणम्। (च.सू 22/40)

23. संतर्पणीयमध्यायं

1. संतर्पण :– बृंहण, स्नेहन, स्तम्भन। **2. अवतर्पण :–** लंघन, रूक्षण, स्वेदन।

सन्तर्पण के कारण :–

(1) स्निग्ध, मधुर, गुरू तथा पिच्छिल गुण युक्त आहार नवान्न, नवमद्य तथा आनूप तथा जलचर प्राणियों का मांस।

(3) दुग्ध, गुड से बने पदार्थ तथा पिष्टी वाले पदार्थ, **चेष्टाद्वेषी,** आस्थासुखं, स्वप्नमुखं तथा दिवास्वप्न सेवी।

संतपर्ण जन्य रोग :– **प्रमेह पिडका कोठपाण्ड्वामय ज्वराः।**

कुष्ठान्याम प्रदोषाश्च मूत्रकृच्छ्रमरोचकः। तन्द्रा क्लैव्यमति स्थौल्यंमालस्यं गुरूगात्रता।

इन्द्रिय स्रोत्रसां लेपो बुद्धेर्मोहः प्रमीलकः।। शोफाश्चैवविधाश्चान्ये शीघ्रमप्रतिकुर्वतः।। (च.सू. 23/6–7)

(1) प्रमेह पिडका (2) कुष्ठ, कोठ कण्डू **(3) पाण्डु** (4) आमय (अलसक, विसूचिका) (5) ज्वर **(6) मूत्रकृच्छ्र**
(7) अरोचक (8) तन्द्रा (9) क्लैव्य (नपंसुकता) (10) अतिस्थूलता (11) आलस्य (12) गुरूगात्रता
(13) शोफ (14) बुद्धि मोह (15) इन्द्रिय, स्रोत्रों का कफ से लिप्त रहना **(16) प्रमीलक** (सदैव ध्यानमग्न रखना)

चिकित्सा :–1. **उल्लेखन (वमन),** विरेचन, रक्तमोक्षण। 2. व्यायाम, उपवास, धूम्रपान और स्वेदन।
3. मधु + हरीतिकी (सक्षौद्रश्चाभयाप्राशः), 4. रूक्षान्नसेवनम्।
5. तक्र, हरीतिकी चूर्ण, त्रिफला और अरिष्टों का सेवन।

योग – (1) त्रिफलादि क्वाथ, मुस्तादि क्वाथ (2) कुष्ठादि चूर्ण (गोमेद युक्त) (3) त्र्यूषणादि मन्थ (4) व्योषद्य सत्तु।

पथ्य – (1) नित्य व्यायाम, (3) जीर्ण भोजन (3) यवगोधूम भोजन।

अपर्तपण – लघंन का पर्याय है।

अपर्तपण के कारण :–

(1) उपवास, अल्पाशन, प्रमिताशन, अनशन, लघंन, साहस, वेगसंधारण, विषमाशन, धातुक्षय।

(2) रूक्षान्न पान, अधिक व्यवाय, स्नान, शोक, भय, चिंताग्रस्त बने रहना।

(3) वमन विरेचनादि पंचकर्मों का अतियोग।

अपतर्पण जन्य रोग :–

देहाग्नि बलवर्णोजः शुक्रमांस परिक्षयः। ज्वरः कासानुबन्धश्च पार्श्वशूलमरोचकः।।

श्रोत्रदौर्बल्यमुन्माद प्रलापो हृदय व्यथा। विण्मूत्र संग्रहः शूलं जंघोरूत्रिकसंशयम्।।

पर्वास्थिसंधिभेदश्च ये चान्ये वातजा गदाः। उर्ध्ववातादयः सर्वे जायन्ते तेऽपतर्पणात्।। (च.सू. 23/27)

(1) देह, अग्नि, बल, वर्ण, ओज, शुक्र, मांस – परिक्षय। (2) कासानुबन्ध ज्वर। (3) पार्श्वशूल, अरोचक
(4) श्रोत्रेन्द्रिय दौर्बल्य (कम सुनाई देना) **(5) उन्माद, प्रलाप, हृदय व्यथा।** (6) विण्मूत्र, संग्रह
(7) जंघा, उरू, त्रिक प्रदेश में शूल। (8) पर्वभेद, अस्थि, संधि भेद। (9) उर्ध्ववात एवं अन्य वातज रोग।

चिकित्सा :– संतर्पण दो प्रकार का होता है।

(1) सद्यः संतर्पण – सद्यः क्षीण हेतु।

(2) **संतर्पण अभ्यास – चिर क्षीण हेतु।** –मांसरस, दुग्ध, घृत, स्नान, बस्ति का प्रयोग, अभ्यंग। (**NIA -2011**)

योग :–

(1) ज्वरादिनाशक मन्थ :–

शर्करा + पिप्पलीचूर्ण + तैल + घृत + क्षौद्र – समभाग + दुगुना सत्तु जल में घोलकर पीने से यह मन्थ – "**बृष्य**" होता है। (**NIA lec. -2010**)

(2) अनुलोमन तर्पण :– जौ सत्तु + समाभाग चीनी + मधु + मदिरा में मिलाकर।

(3) मूत्रकृच्छ्रनाशक तर्पण।

(4) मद्यविकार नाशक खर्जूरादि मन्थ।

(5) सद्यः संतर्पण मन्थ।

24. विधि शोणितीयम अध्याय

विशुद्ध रक्त :– तद्विशुद्धं हि **रूधिरं बलवर्ण सुखायुषा।** युनक्ति प्राणिनं प्राणः शोणितं ह्यनुवर्तते। (च. सू. 24/4)

1. रक्तवर्ण प्रसादं मांसपुष्टि जीवयति च। (सु. सू. 15/12)
2. देहस्य रूधिरं मूलं रूधिरेणैव धार्यते। (सु. सू. 14)
3. लोहितं प्रभवः शुद्धं तनोस्तेनैव च स्थितिः। (अ. ह. सू. 27)

- ✓ तन्द्रा, निद्राधिक्य, प्रमीलक व उपकुश की गणना रक्तज रोगों में की गयी है।
- ✓ **रक्तज विकारों का अनुपशय ज्ञान :–** रक्तज रोगों का निदान **"अनुपशय"** से होता है।
- ✓ **रक्तज विकारों का चिकित्सा सूत्र :– रक्तपित्तहर चिकित्सा,** विरेचन, उपवास या रक्तमोक्षण करना चाहिए।
- ✓ **रक्तदुष्टि का कारण –** हरितवर्गोक्त पदार्थों, आनूप, **प्रसह मांस का अत्यधिक सेवन।**
- ✓ **मात्रा :–** देहबल और दोष का विचार कर रक्तमोक्षण के तत्पश्चात् विशेष रूप से **अग्नि की रक्षा** करनी चाहिए।

विशुद्ध रक्त – **1. तपनीयेन्द्रगोपाभं पद्मालक्तक सन्निभम्। गुन्जाफल सवर्ण च विशुद्धं विद्धि शोणितम्। (च.सू 24/22)**
2. इन्द्रगोपाकप्रतीकाशमसंहतमविवर्ण च प्रकतिस्थं जानीयात् (सु.सू. 14/22)
(1) इन्द्रगोप (वीरबहूटी) के वर्ण का (2) विविध वर्ण (3) असंहत (गाढ़ा)।
3. मधुरं लवणं किंचित् शीतोष्णमसंहतम्। पदमेन्द्रगोप हेमाविशशलोहित लोहितम्।। (अ.ह.सू. 27/1)

विशुद्ध रक्त पुरूष के लक्षण :– **प्रसन्न वर्णेन्द्रियं इन्द्रियार्थनिच्छन्तम् अव्याहतपृक्तवेगम्। सुखान्वितं पुष्टि बलोपपन्नं।**

"मद, मूर्च्छा, और सन्यास का वर्णन"

हेतु–रज व तमोगुण से **रस, रक्त एंव संज्ञावाही स्रोत्रस** के आवृत्त हो जाने पर मद, मूर्च्छा, सन्यास की उत्पत्ति होती है
(मद→मूर्च्छा→ सन्यास –ये उत्तरोत्तर बलवान रोग है।)

4 प्रकार के मद – 1. वातज – अस्पष्टं, अल्पद्रुतभाषं, **चलस्खलितचेष्टितं,** रूक्षश्यावारूणाकृतिम्।
2. पित्तज – सक्रोध परूषाभाषं, **सम्प्रहार कलिप्रियम,** रक्तपीतासिताकृतिम्।
3. कफज – **स्वल्पासम्बद्धवचनं,** तन्द्रालस्यसमन्वितम्, **पाण्डु प्रध्यानतत्परं।**
4.सन्निपातज– सर्वाण्येतानि रूपाणि सन्निपातकृते मदे। जायते शाम्यति त्वाशु **मद्यो मद्यमदाकृतिः।**

4 प्रकार के मूर्च्छा– 1. वातज – **शीघ्रं च प्रतिबुध्यते।** वेपथु, अंगमर्द, हदय प्रपीड़ा कार्श्य, श्यावा, अरूणा छाया।
2. पित्तज – **सस्वेदः प्रति बुध्यते।** पिपासा, संताप, नेत्र–रक्तपीत, **संभिन्नवर्चाः,** पीताभ छाया।
3. कफज – **चिराच्च प्रतिबुध्यते।** गौरव, प्रसेक, हल्लास, आलस्य, श्वेताभ छाया।
4. सन्निपातज – **सर्वाकृति सन्निपातादपस्मार इवागतः। स जन्तु पातयत्याशु बिना बीभत्सचैष्टितैः।**

- ✓ सन्निपातज मूर्च्छा में **अपस्मार रोग के लक्षण** मिलते है। और इसमे बीभत्स चेष्टाएँ नही हेती है।

संयास :– 1. काष्ठीभूतो मृतोपमः। (नरः पतति काष्ठवत् – मूर्च्छा)
2. दोषेसु मदमूर्च्छायाः कृतवेगेषु देहिनाम्। स्वयमेवोपशाम्यन्ति **सन्यासो नौषधैर्यना। (च. सू 24/42)**
दोषों के वेग शांत होने पर मद एवं मूर्च्छा शान्त हो जाते है, किन्तु संयास में दोष वेग बिना औषध के शान्त नहीं होते है।
सन्यास चिकित्सा :– (आशुकारी – प्राणैर्वियुज्यते शीघ्रं मुक्त्वा सद्यःफलां क्रियाम्।)
(1) तीक्ष्ण अंजन, अवपीड, धूम्र, प्रधमन नस्य का प्रयोग। (2) नखान्तर में सुई चुभोना, दाह, नख छेदन।
(3) लुंचनं केशलोम्नां – शिर के बाल/दाढ़ी, मूंछ के बाल उखाड़ना, दांत से काटना। (4) आत्मगुप्ता घर्षणम्

मद तथा मूर्च्छा में पंचकर्म – सर्वप्रथम स्नेहन, स्वेदन कराएं तत्पश्चात् पंचकर्म।
मद मूर्च्छा, औषध उपचार –
(1) **पानीयकल्याण घृत,** तिक्तघृत, महातिक्त घृत, तिक्तषट्पल घृत, **कौम्भघृत** का प्रयोग
(2) **शिलाजीत का प्रयोग**
(3) **रसायन द्रव्यों का प्रयोग**
(4) मद, मूर्च्छा के वेग रक्तमोक्षण, शास्त्रों के श्रवण, सत्संग से शान्त हो जाते है।

25. यज्जः पुरूषीयं अध्याय

सम्भाषा परिषद् :– पुरूष (राशि पुरूष) व रोगों के उत्पत्ति के संदर्भ में। प्रश्नकर्ता और आयोजक – **'काशिपति वामक'**। कुल आचार्यगण – नव मत – 9 आचार्य + आत्रेय और अग्निवेश।

वाद	प्रवर्तक ऋषि
1 आत्मवाद	मौद्गल्य परीक्ष
2. कालवाद	भिक्षु आत्रेय
3. स्वभाववाद	भरद्वाज
4. कर्मवाद	भद्रकाप्य
5. प्रजापतिवाद	कांकायन
6. मातृपितृवाद	शौनक–कौशिक
7. रसवाद →	वीर्योविद
8. सत्ववाद	शरलोमा
9. षड्धातुवाद	हिरण्याक्ष

प्रयोग भेद से आहार के भेद – 4 – पान, अशन, भक्ष्य, लेह्य।
अर्थ भेद से आहार के भेद – 1 – आहारत्वमाहारस्यैकविधम्, अर्थभेदात् – आहार्य अर्थ से आहार एक ही होता है।
चक्रपाणि के अनुसार आहार में **अन्न – 1 कुडव, सूप – 1 पल, मांस – 2 पल** और अन्य अवयव 1 पल मात्रा में होने चाहिए।

आहार द्रव्य का वर्ग	हिततम (20)	अहिततम (20)
1. शूकधान्य	1. रक्त शालि	1. यवक
2. शमी धान्य	2. मुद्ग	2. माष
3. जल	3. आन्तरिक्ष जल	3. वर्षा ऋतु में नदी का जल
4. लवण	4. सैन्धव	4. औषर
5. पत्रशाक	5. जीवन्ती	5. सर्षप
6. मृगमास	6. ऐणेय	6. गोमांस
7. पक्षी	7. लाव	7. काण–कपोत
8. विलेशय	8. गोधा	8. मण्डूक (भेंक)
9. मृत्स्य	9. रोहित	9. चिलचिम
10. घृत	10 गोघृत	10 मेषीघृत
11. दुग्ध	11. गोदुग्ध	11. मेषी दुग्ध
12. स्थावर स्नेह	12. तिलतैल	12. कुसुम्भ तैल
13. आनूपमृगवसा	13. वराहवसा	13. माहिष वसा
14. मृत्स्य वसा	14. चुलुकी वसा	14. कुम्भीर वसा
15. जलचर–पक्षीवसा	15. पाकहंस वसा	15. काकमद्गु वसा
16. विष्किर–पक्षीवसा	16. कुक्कुट वसा	16. चटकवसा
17. शाखामेदस	17. अजमेदस	17. हस्तिमेदस्
18. कन्द	18. आर्द्रक **(सुश्रुत, भा. प्र. –सूरण)**	18. आलुक
19. फल	19. मृद्वीका **(सुश्रुत – आमलकी)**	19. लकुच
20. इक्षुविकार	20. शर्करा	20. फाणित

श्रेष्ठ/अग्रय भावों (द्रव्यों) की सख्या :– चरक – 152 (वाग्भट्ट – 155)

श्रेष्ठ भाव	कर्म
1. अन्न	वृत्तिकराणां।
2. उद्कम्	आश्वासकराणां।
3. जल	स्तम्भनीयानां।
4. वायु	प्राणसंज्ञाप्रदान हेतुनाम्।
5. अग्नि	आम, स्तम्भ, शीत, शूलोद्वेपन प्रशमनानां।
6. सुरा	श्रमहराणां।
7. मद्य	सौमनस्यजननं।
8. मांस	बृंहणीयानां
9. रसः	तर्पणीयानां
10. क्षीर	जीवनीयां
11. कुक्कुटो	बल्यानां।
12. नक्र रेतस	वृष्याणां।
13. लवणं	अन्नद्रव्यरूचिकाराणां
14. तिन्दुक	अन्नद्रव्य अरूचिकराणां।
15. अम्ल	अद्यानां।
16. आविकं सर्पि	अहृद्यानां।
17. माहिषी क्षीर	स्वप्नजनानां।
18. अजाक्षीरं	शोषघ्न स्तन्य सात्म्य रक्तसंग्राहिक रक्तपित्तप्रशमनानाम्।
19. अविक्षीर	श्लेष्मपित्तजननानां।
20. आम कपित्थ	अकण्ठ्यानां।
21. तैल	वातश्लेष्म प्रशमनानां।
22. सर्पिः	वातपित्त प्रशमनानां।
23. मधु	श्लेष्मपित्त प्रशमनानां
24. मद्याक्षेपो	धी, धृति, स्मृतिनाशक।
25. जम्बु	वातजनानां।
26. इक्षु	मूत्रजनानां।
27. यवाः	पुरीष जनाना।
28. मृद्भष्टलोष्ट्र निर्वापित उदक्	तृष्णा छर्द्यातियोग प्रशमनानां।
29. त्रिवृत्त	सुखविरेचनानां।
30. चतुरगुंल	मृदुविरेचनानां।
31. स्नुक्पयः	तीक्ष्णविरेचनानां।
32. प्रत्यक्पुष्पा (अपामार्ग)	शिरोविरेचनानां।
33. खदिर	कुष्ठघ्न।
34 शिरीष	विषघ्न।
35. विडंग	कृमिघ्न।
36. रास्ना	वातहरणाम्।
37. आमलकं	वयःस्थापनानां।
38. हरीतिकी	पथ्यानाम्।
39. एरण्ड	वृष्य, वातहराणां।
40. शालपर्णी	वृष्य, त्रिदोषहर।
41. विदारीगन्धा	वृष्य, सर्वदोषहाराणां।
42. गोक्षुर	मूत्रकृच्छहर, अनिलहराणां।
43. वमन	श्लेष्महराणां।
44. विरेचन	पित्तहराणां।
45. बस्ति	वातहराणां।

46. स्वेदो	मार्दवकराणां
47. व्यायामः	स्थैर्यकराणां।
48. क्षारः	पुंस्त्वोपघातिनां।
49. मदनफल	वमन, आस्थापन, अनुवासनोपयोगिनां।
50. शष्कुली	श्लेष्मपित्त जननानां।
51 माष (उड़द)	श्लेष्मपित्त जननानां।
52. कुलत्थ	अम्लपित्त जननानां।
53. कुट्ज त्वक्	श्लेष्मपित्त, रक्तसंग्राहक, **उपशोषणानां।**
54. दुरालभा	पित्तश्लेष्म प्रशमनानां।
55. गन्धप्रियंगु	शोणित्तपित्तातियोग प्रशमानानां।
56. काश्मर्य (गम्भारीफल)	रक्तसांग्राहिक, रक्तपित्त प्रशमानानां।
57. गवेधुकान्नं	कर्शनीयानाम्।
58. उद्दालकान्नं	विरूक्षणीयानाम्।
59. मन्दक दधि	अभिष्यन्दकराणां।
60. अतिमात्राशन	आमप्रदोष हेतुनां । (आमदोषवर्धक)
61. प्रमिताशन	कृशताकारक। (कर्शनीयानाम्)।
62. एक काल भोजन	सुख परिणाम कारक।
63. विषमाशन	अग्निविषमता कारक।
64. अनशन	आयुह्रास कराणां।
65. विरूद्धवीर्याशन	निन्दित, व्याधिकर।
66. गुरू भोजन	दुर्विपाककराणां।
67. सर्वरसाभ्यास	बलकरणां।
68. एक रसाभ्यास	दौबर्ल्यकरणां।
69. तृप्ति	आहार गुणों में ।(आहार गुणानां)।
70. सोम	औषधियों में। (औषधीनां)
71. विज्ञान	औषधियों में। (औषधीनां)
72. जलौका	अनुशस्त्रों में (अनुशस्त्राणां)।
73. वेगसंधारण	अनारोग्यकारणां।
74. शुक्र वेगधारण	षाण्ढयकराणां।
75. मरू भूमि	आरोग्य देशानां।
76. आनूप देश	अहित देशानां (अहित देशों में) ।
77. हिमालय	औषध भूमि (औषध भूमिनां)।
78. प्रशमः	पथ्यानां (हितकारक) ।
79. आयासः	सर्व अपथ्यानां (अहितकारक)।
80. सौमनस्य	गर्भधारक। (गर्भधारणानां)।
81. दौमर्नस्य	नपुंसकता कारक (अवृष्याणां)।

82. पिप्पलीमूल	दीपनीय, पाचनीय, आनाह प्रशमनानां।
83. चित्रक मूल	दीपनीय, पाचनीय, **गुदशोथ, अर्श,** शूलहराणां।
84. अतिविषा मूल	दीपनीय, पाचनीय, सांग्राहिक, सर्वदोषहराणाम्।
85. उदीच्यं (सुगन्धबाला)	**निर्वापण,** दीपनीय, पाचनीय, छर्दि, अतिसार नाशक।
86. कट्वंग (सोनापाठा)	सांग्राहिक, पाचनीय, **दीपनीयानाम्।**
87. मुस्तक (नागरमोथा)	सांग्राहिक, **दीपनीय,** पाचनीयानाम्।
88. विल्ब	सांग्राहिक दीपनीय, **वातकफप्रशमनानां।**
89. अमृता (गुडूची)	सांग्राहिक, **वातहर,** दीपनीय, **श्लेष्मशोणितविबन्धप्रशमनानां।**
90. पृश्निपर्णी	सांग्राहिक, वातहर, दीपनीय, बृष्याणां।

91. बला	सांग्राहिक, बल्य, वातहराणां।
92. अनन्तमूल (सारिवा)	सांग्राहिक, रक्तपित्तप्रशमनानां।
93. उत्पल, कुमद, पद्मकेसर	सांग्राहिक, रक्तपित्तप्रशमनानां।
94. पुष्कर मूल	हिक्का, श्वास, कास, पार्श्वशूलहराणां।
95. हींगु निर्यास	छेदनीय, दीपनीय, अनुलोमन, वातकफ प्रशमनानां।
96. अम्लवेतस	भेदनीय, दीपनीय, अनुलोमन, वातश्लेष्महराणां।
97. मधुयष्ठी	चक्षुष्य, वृष्य, केश्य, कण्ठ, वर्ण, विरंजनीय, रोपणीय।
98. यवक्षार (यावशूक)	संस्रनीय, पाचनीय, अर्शोघ्नानां।
99. कूठाभ्यंग (कुष्ठ)	वात नाशक, अभ्यंग, उपनाहोपयोगी।
100. तद्विद्य संभाषा	ज्ञानवर्धक (बुद्धि वर्धनानाम्)।
101. बहम्चर्य	आयुवर्धक (आयुष्याणां)।
102. संकल्प	वृष्यकारक (वृष्याणां)।
103. स्त्री संयोग कामना	बाजीकरणानां।
104. पर स्त्रीगमन	आयुनाशन (अनायुष्णानां)।
105. अति स्त्रीप्रसंग	शोष कारक।
106. रजस्वला गमन	अलक्ष्मीमुखानां (दरिद्रता जनक)
107 वस्ति	तन्त्राणां
108. तक्र सेवनाभ्यास	ग्रहणीदोष, शोफ, अर्श, घृतव्यापद प्रशमनानां।
109. क्रव्याद रसाभ्यास	ग्रहणीदोष, शोष, अर्शघ्नानां।
110. क्षीर घृताभ्यास	रसायनों में श्रेष्ठ (रसायनानां)
111. समघृतसक्तु प्राशाभ्यास	वृष्य, उदावर्तहर।
112. तैलगणडूषाभ्यास	दन्तबल रूचिकराणां।
113. यथा अग्नि भोजन	अग्निदीप्ति कारक। (अग्निसन्धुक्षणानां)
114. यथा सात्म्य चेष्टा भोजन	सेवनीय। (सेव्यानां)
115. यथा काल भोजन	आरोग्य कारकों में श्रेष्ठ (आरोग्यकराणां)
116. अजीर्ण में भोजन	ग्रहणी विकारकारक।
118. चन्दन	दुर्गन्धहर, दाहनिर्वापण लेपनानां।
119. रास्नागुरूणी	शीतापनयन प्रलेपनानां।
120. लामज्जकोशीरं	दाहत्वदोष, स्वेदापनयन प्रलेपानां।
121. ज्वर	रोगों में प्रमुख। (रोगाणां)
122. कुष्ठ	दीर्घकालीन रोग। (दीर्घरोगाणां)
123. राजयक्ष्मा	रोगों का समूह। (रोग समूहानां)
124. प्रमेह	अनुषंगीणां।
125. बालक	मृदुभेषज योग्य। (मृदुभेषजीयानां)
126. वृद्ध	यापन के योग्य।
127. गर्भिणी	तीक्ष्ण भोजन, मैथुन, व्यायाम के अयोग्य।
128. वध स्थान (पराघातनम्)	अश्रद्धाजननानां।
129. अथया बलारम्भ	प्रणापरोधिनां।
130. मिथ्या योग	व्याधिकरणां।
131. विषाद	रोगवर्धनाना।
132. अजीर्ण	निवारण करने योग्य। (उद्धार्याणां)।
133. स्नान	श्रमहरणाम्।
134. हर्ष	प्रीणनानां।

135. शोक	शोषाणानां।
136. निवृत्ति (संतोष)	पुष्टिकराणां।
137. पुष्टि	निद्राकारक (स्वप्नकराणाम्)
138. अतिस्वप्न	तन्द्राकराणां
139. लोलुपता (लौल्यं)	क्लेशकारक। (क्लेश कराणाम्)
140. नास्तिक	वर्जनीय। (वर्ज्यानां)
141. गर्भशल्य	आहार्याणाम्।
142. सन्निपात	दुश्चिकित्सीय (दुश्चिकित्स्यानां)।
143. आमविष	विमषचिकित्सीय।
144. निर्देशकारित्व	आतुरगुण।
145. अनिर्देशकारित्व	अरिष्ट लक्षण।
146. भिषक्	चतुष्पाद में श्रेष्ठ। (चिकित्सांगनां)
147. वैद्यसमूह	निःसंशयकरणां।
148. आचार्य	शास्त्राधिगम हेतुनाम्। (शास्त्र ज्ञानार्थ)
149. आयुर्वेद	अमृतानां।
150. अनिर्वेद	श्रेष्ठ आरोग्य लक्षण। (वार्त लक्षणानां)
151. औषध योग	वैद्यगुणानां।
152. शास्त्रसहितस्तर्क	चिकित्सा का साधन। (साधनानां)
153. सम्प्रतिपत्ति	कालज्ञान प्रयोजनानाम्।
154. अव्यवसाय	समय व्यर्थता। (कालातिपत्तिहेतुनां)
155. दृष्टकर्मता	निःसंशयकरणां।
156. असमर्थता	भयकाराणां।
157. सद्वचन	अनुष्ठेयानाम्। (पालनीय्)
158. असद्ग्रहण	सर्वाहितानां।
159. संर्वसंयास	सुखकारकों में श्रेष्ठ (सुखानां)

1. औषधीनां – सोम, विज्ञान।
2. वस्ति – वातहारणां, तन्त्राणां।
3. वृष्याणा – नक्ररेतस, संकल्प।
4. कर्शनीयानां – गवेधुक, प्रतिमाशन।
5. कफपित्तजनानां –शष्कुली, माष, आविक्षीर।
6. स्वप्नजनानां – माहिषी दुग्ध, पुष्टि।
7. श्रमहाराणानां – सुरा, स्नान

पथ्यं पथोऽनपेतं यद्यच्चोक्तं मनसः प्रियम्। यच्चाप्रियमपथ्यं च नियतं तन्न लक्षयेत्। (च. सू. 25/45)

पथ्य :– जो आहार द्रव्य पथ (शारीरिक स्रोत्र) में अपकार करने वाला न हो और मन को प्रिय हो उसे **'पथ्य'** कहते है।

अपथ्य– जो आहार द्रव्य पथ (शारीरिक स्रोत्र) में अपकार करने वाला हो और मन को अप्रिय हो उसे **'पथ्य'** कहते है।

''आसव''

आसव :– आसव नाम आसुत्वाद् आसव संज्ञा। – चरक **'आसुतत्वात् सन्धानरूपत्वात्' ।** – चक्रपाणि।

आसव की योनियॉ :– 9 – फल, सार, मूल, पुष्प, धान्य, त्वक, काण्ड, पत्र, और शर्करा।

आसवयोनि संख्या (84) – फल (26), सार (20), मूल (11), पुष्प (10), धान्य (6), **त्वग् (4),** काण्ड (4), पत्र(2), शर्करा(1)

धान्यासव – 6 – सुरा, सौवीर, तुषोदक, मैरेय, मेदक, धान्याम्ल।

त्वगासव – 4 – तिल्वक, लोध्र, एलुआ, क्रमुक (सुपारी)।

कण्डासन – 4 – इक्षु, काण्डेक्षु, इक्षुवालिका, पुण्ड्रक।

पत्रासव – 2 – पटोलपत्र, ताडकपत्र।

शर्करासव – 1 – शर्करासव।

❖ धन्वन – फलासव और सारासव दोनों आसवों में है। **(यद पक्वकौषधाम्बुभ्यां सिद्धं मद्यं स आसवः। – शारंग्धर)**

26. आत्रेय भद्रकाप्यीय अध्याय

रस संख्या विषयक् संभाषा परिषद् का वर्णन किया है। स्थान – चैत्ररथ नामक वन। आचार्य – 10 महर्षि।

Funda	प्रवर्तक आचार्य	संख्या	रस
भद्र	1. भद्रकाप्य	1	**एक एव रस इत्युवाच भद्रकाप्यः** – रस और जल एक ही है
शाकुन्तला	2. शाकुन्तेय	2	(1) छेदनीय (2) उपशमनीय
मोहित हुई	3. मौद्गल्य पूर्णाक्ष	3	(1) छेदनीय (2) उपशमनीय (3) साधारण।
हिरण पर	4. हिरण्याक्ष कौशिक	4	(1) स्वादु – हित, अहितकर (2) अस्वादु – हित, अहितकर।
कुमार	5. कुमारशिरा भरद्वाज	5	(1) भौम, (2) औदक (3) आग्नेय (4) वायवीय (5) आकाशीय
वीर	6. वार्योविद	6	गुरू, लघु, शीत, उष्ण, स्निग्ध, रूक्ष।
ने	7. वैदेह निमि	7	मधुर, अम्ल, लवण, कटु, तिक्त, कषाय, **क्षार।**
धर पकडा	8. धामार्गव बडिश	8	मधुर, अम्ल, लवण, कटु, तिक्त, कषाय, **क्षार,** अव्यक्त रस।
कंकड असंख्य	9. कांकायन	∞	असंख्यरस **(अपरिसंख्येया रसा इति कांकायनो बाह्लीकभिषग्)**
	10. पुनर्वसु आत्रेय	6	मधुर, अम्ल, लवण, कटु, तिक्त, कषाय रस।

रस की योनि :– तेषां षण्णां रसानां योनिरूदकम् **(च. सू. 26/9)**– सभी 6 रसों की योनि 'जल' है।
द्रव्य की पान्चभौतिकता :– संसार में विद्यमान समस्त द्रव्य पांचभौतिक होते है। द्रव्य – 2 – (1) चेतन (2) अचेतन।

- **सर्व द्रव्यं पाञ्चभौतिकम् अस्मिन्नर्थेः। (च. सू. 26/10)**
- **इह हि द्रव्यं पञ्चमहाभूतात्मकम्। (अ.सं.सू. 17/3)**

कर्म :– कर्म पञ्चविंध मुक्तं वमनादि। (च. सू. 26/10)

द्रव्य	गुण	कर्म
1. पार्थिव	गुरू, कठिन, मन्द, स्थिर, **विशद, खर,** सान्द्र, स्थूल, गंधगुण	उपचय, संधात, गौरव, स्थैर्य
2. जलीय	**द्रव,** स्निग्ध, शीत, मन्द, मृदु, पिच्छिल एवं रसगुण बहुल	उपक्लेद,स्नेह,बन्ध,मार्दव,विष्यन्द,प्रह्लादकर
3. आग्नेय	उष्ण, तीक्ष्ण, सूक्ष्म, लघु, रूक्ष, विशद एवं रूपगुण बहुल	दाह, पाक, प्रभा, प्रकाश, वर्णकर
4. वायव्य	लघु, शीत, रूक्ष, विशद, सूक्ष्म, **खर** एवं स्पर्शगुण बहुल	रौक्ष्य, ग्लानि, विचार, वैशद्य, लाघवकर
5. आकाश	मृदु, **लघु,** सूक्ष्म, श्लक्ष्ण एवं शब्दगुण बहुल	मार्दव, सौषिर्य, लाघवकर

द्रव्य	चरकोक्त पंचमहाभैतिक द्रव्यों के गुणों से अन्य आचार्यो का मत–मतान्तर
1. पार्थिव	सुश्रुत ने **'विशद'** गुण नहीं माना है। वाग्भट्ट ने **'खर'** गुण नहीं माना है।
2. जलीय	सुश्रुत ने **द्रव** गुण नहीं माना है। सुश्रुत ने **''स्तिमित, गुरू, सान्द्र, सर''** अष्टांग संग्रहकार ने **गुरू, सान्द्र, सर'** गुण अतिरिक्त माने है।
3. आग्नेय	सुश्रुत ने **'खर'** गुण अतिरिक्त माना है।
4. वायव्य	अष्टांग संग्रहकार ने **'व्यवायी, विकाशि'** गुण अतिरिक्त माने है।
5. आकाश	सुश्रुत और वाग्भट्ट ने लघु गुण नहीं माना है। सुश्रुत और वाग्भट्ट ने **विशद, व्यवायी, विविक्त** अतिरिक्त गुण माने है।

द्रव्य का औषधत्व :– संसार में कोई भी द्रव्य ऐसा नहीं है जो औषधि नहीं हो।

- अनेन **उपदेशेन** नानौष**धि**भूतं जगति किञ्चिद् **द्रव्यमुपलभ्यते।** – (च. सू. 26/12)
- अनेन **निदर्शनेन** नानौष**धी**भूतं जगति किञ्चिद् **द्रव्यमस्तीति।** – (सु. सू. 41/9)
- इत्थं च नानौष**ध**भूतं जगति किञ्चिद **द्रव्यमस्ति** विविधार्थप्रयोगवशात्। – (अ.सं.सू. 17/6)

क्रमांक	(च. सू. 26/13)	(सु. सू. 41/9)
1. कर्म	यत् कुर्वन्ति तत् कर्म,	–
2. वीर्य	येन कुर्वन्ति तद्वीर्य,	–
3. अधिकरण	**यत्र** कुर्वन्ति तदधिकरणं	यत्कुर्वन्ति तदधिकरणं
4. काल	**यदा कुर्वन्ति स कालः,**	**यदा कुर्वन्ति स कालः,**
5. उपाय	**यथा** कुर्वन्ति **स** उपायः	यथा कुर्वन्ति **स** उपाय,
6. फल	यत् साधयन्ति तत् फलम्	यन्निष्पादयन्ति तत् फलमिति

द्रव्य, देश एवं काल के प्रभाव से रसों के 63 विकल्प भेद – भेदश्चैषां त्रिषष्टिविधविकल्पो द्रव्यदेशकालप्रभावाद् भवति।

(1) 1 रस वाले – 6
(2) 2 रस वाले – 15
(3) 3 रस वाले – 20
(4) 4 रस वाले – 15
(5) 5 रस वाले – 6
(6) 6 रस वाले – 1

'संयोगाः सप्तपन्चाशत् कल्पना तु त्रिषष्टिधा। रसानां तत्र योग्यत्वात् कल्पिता रसचिन्तकैः। (च.सू. 26/24)

(1) रसों के संयोग भेद – 57 (2) रसों के कल्पना भेद – 63

अनुरस :– व्यक्तः शुष्कस्य चादौ च रसो द्रव्यस्य लक्ष्यते। विपर्ययेणानुरसो रसो नास्तीह सप्तमः। (च.सू. 26/24)

श्रस	**अनुरस** (रस विपर्यय)
जिह्वा द्वारा आस्वादन करने पर जो रस आदि में स्पष्ट ज्ञात होता है वह 'रस' कहलाता हैं।	जो रस दूसरे रस से अभिभूत होने के कारण स्पष्ट ज्ञात नहीं होता हे। उसे 'अनुरस' कहते हैं।

'' परादि गुण – सिद्धयुपायाश्चिकित्साया ''

परादिगुण :– 'परापरत्वे युक्तिश्च संख्या संयोग एव च। विभागश्च पृथक्त्वं च परिमाणमथापि च। (च.सू. – 28/29) संस्कारोऽभ्यास इत्येते गुणा ज्ञेयाः परादय।। (कणाद – 7 – युक्ति, संसकार, अभ्यास नहीं माने है।)

10 परादिगुण :–

1. परत्व :– देश, काल, आयु, मान, विपाक, रस, वीर्यादि में जो श्रेष्ठ या प्रधान हो।

2. अपरत्व :– देश, काल, वय, मान, विपाक, रस, वीर्यादि में जो निकृष्ट या अप्रधान हो

3. युक्ति – 'युक्तिश्च योजना या तु युज्यते। (च. सू. 26/31)
दोष, देश, प्रकृति, काल को देखकर औषध आदि की सम्यक् योजना को युक्ति कहते हैं।

4. संख्या :– 'संख्या स्याद् गणितम्'। एक, दो, तीन, चार, आठ, दस आदि संख्या की गणना को गणित कहते हैं।

5. संयोग :– 'योगः सह संयोग उच्यते। द्रव्याणां द्वन्द्वसर्वेककर्मजोऽनित्य एव च।' (च. सू. 26/32)
द्रव्यों के एक साथ मिलने को संयोग कहते हैं। – भेद – (1) द्वन्द्वकर्मज (2) सर्वकर्मज (3) एककर्मज

6. विभाग – 'विभागस्तु विभक्तिः स्याद् वियोगो भागशो ग्रहः।' (च. सू. 26/33)
संयुक्त वस्तु का अलग होना ही विभाग कहलाता है। भेद – (1) विभक्ति (2) वियोग (3) भाग शोग्रह।

7. पृथकृत्व – 'पृथक्त्वं स्यादसंयोगो वैलक्षण्यमनेकता'। (च. सू. 26/33)
एक द्रव्य को अन्य से भिन्न करने वाला गुण पृथकृत्व कहलाता है। भेद – (1) असंयोग (2) वैलक्षण्य (3) अनेकता।

8. परिमाण – 'परिमाणं पुनर्मानं'। – जिससे किसी वस्तु की मात्रा जानी जाती है उसे 'परिमाण' या 'मान' कहते हैं।

9. संस्कार – 'संस्कारः करणं मतम्।' क्रिया द्वारा किसी वस्तु में गुणाधान करने को 'संस्कार' या 'करण' कहते है।

10. अभ्यास – 'भावाभ्ययसनम् अभ्यासः शीलनै सततक्रिया।' – किसी वस्तु या कार्य का निरन्तर प्रयोग करना अभ्यास कहलाता है। शीलन और सतत क्रिया – ये दोनों अभ्यास के पर्याय है।

षड्रस प्रकरण :– अंतरिक्ष जल – सौम्य, स्वभाव से शीतल, लघु और अव्यक्त रस वाला होता है।

चरक	वर्णन	नागार्जुन	वाग्भट्ट
सोमगुण प्रधान	सोमगुणातिरेकन्मधुरो रसः	पृथ्वी + जल	पृथ्वी + जल →
पृथ्वी + अग्नि	पृथिव्यग्निभूयिष्ठत्वादम्लः	**जल + अग्नि**	↓ पृथ्वी + **अग्नि**
जल + अग्नि	सलिलाग्निभूयिष्ठत्वाल्लवणः	**पृथ्वी + अग्नि**	जल + **अग्नि**
वायु + अग्नि	वाय्वग्निभूयिष्ठात्कटुकः	वायु + अग्नि	**वायु** + **अग्नि**
वायु + आकाश	वाय्वाकाशातिरिक्तत्वात्तिक्त	वायु + आकाश	**वायु** + आकाश
वायु + पृथ्वी	**पवनपृथ्वीव्यतिरेकात् कषाय**	वायु + पृथ्वी	**वायु** + पृथ्वी

मधुर रस	**अम्ल रस**	**लवण रस**
सप्तधातु, ओजवर्धक, **आयुष्यः**	**देहं बृंहयति,** ऊर्जयति, प्रीणयति	**च्यावन,** छेदन, भेदन, तीक्ष्ण सर
षडिन्द्रिय प्रसादन	इन्द्रियाणि दृढ़ीकरोति	**सर्वरसप्रत्यनीक भूतः**
प्रीणन, जीवन, तर्पण	**हृदयं तर्पयति**	स्तम्भबन्धसंगातविधमनः
ब्लवर्णकर, शरीरसात्म्य	**मनो बोधयति**	स्रंस्यवकाशकरो
पित्तविषमारूतघ्न	वातमनुलोमयति	**वातहरः,** कफं विष्यन्दयति
तृष्णादाह प्रशमन	**भक्तं रोचयति**	**रोचयत्याहारम्**
त्वच्य, केश्य, कण्ठय, बल्य	**अग्नि दीपयति**	**दीपन, पाचन**
वृंहण, स्थैर्यकर	**बलं वर्धयति**	**मार्गान् विशोधयति**
क्षीतक्षतससन्धान करो	**भुक्तम अपकर्षयति**	**आहार योगी**
दाहमूर्च्छाप्रशमन	क्लेदयति	क्लेदनो
षट्पदपिपीलिकाना मिष्टतमः	जरयति	सर्वशरीरवयवान् मृदुकरोति
घ्राणमुखकष्ठैष्ठजिह्वा प्रह्यदनो	आस्यमास्रावयति	आस्यमास्रावयति
अतिसेवन जन्य लक्षण	**अतिसेवन जन्य लक्षण**	**अतिसेवन जन्य लक्षण**
श्वास, कास, प्रतिश्याय	**दन्तान् हर्षयति,** तर्षयति	मूर्च्छयति, तापयति, दारयति
ग्लगण्ड, गण्डमाला, गलशोफ	सम्मीलयत्यक्षिणी, **रक्त दूषयति**	**रक्तं वर्धयति, विषं वर्धयति,** पुंस्त्वमुपहन्ति
दौर्बल्य अग्नि, अतिस्वप्न	मांसविदहति, कायंशिथिलीकरोति	**शोफान् स्फोटटयति, इन्द्रियाण्युपरूणद्धि**
कटु रस	**तिक्त रस**	**कषाय रस**
वक्त्रं शोधयति, अग्नि दीपयति	स्वयमरोचिष्णुरप्यरोचकघ्नो	**संशमन**
रोचयत्यशनं	मूर्च्छादाह, कण्डूकुष्ठ तृष्णाप्रशमन	**संधानकर**
भुक्तं शोषयति	त्वंगमांसयो स्थिरीकरणो	**संग्राही, स्तंभन**
शोणितसंघात भिनत्ति	**दीपन पाचन**	**पीडन**
स्फुटीकरोतीन्द्रियाणि	**विषघ्न**	**रोपण**
चक्षुविरेचयति	**कृमिघ्न**	**शोषण**
स्नेहस्वेदक्लेदमलानुपहन्ति	**ज्वरघ्न, स्तन्यशोधन**	श्लेष्म रक्तपित्त प्रशमन
कण्डू विनाशयति	**लेखन**	शरीरक्लेदस्योपयोक्ता
व्रणानवसादयति	क्लेदमेदोवसामज्जालसिका	**पक्षवधग्रहपतानकार्दिन प्रभृततीश्च**
क्रिमीन् हिनस्ति	पूयस्वेद मूत्र......... उपशोषण	
अतिसेवन जन्य लक्षण	**अतिसेवन जन्य लक्षण**	**अतिसेवन जन्य लक्षण**
पुंस्त्वमुपहन्ति, ग्लायपति	सोत्रसां खरत्वमुपपादयति	**आस्यं शोषयति,** विष्टम्भं जरां गच्छति।
मूर्च्छयति, नमयति, भ्रमयति	कर्षयति, **मोहयति, भ्रमयति**	कर्शयति, ग्लपयति, तर्षयति, **हृदयंपीडयति**
तृष्णा जनयति	ग्लपयति, वदनमुपशोषयति	स्रोतांस्यवबध्नाति, पुंस्त्वमुपहन्ति।

रस	गुण	वर्णन
1. मधुर	**गुरू, शीत, स्निग्ध**	स्निग्ध शीतो गुरूश्च
2. अम्ल	**लघु, उष्ण, स्निग्ध**	लघुरूष्णः स्निग्धश्च
3. लवण	**गुरू, उष्ण, स्निग्ध**	**नात्यर्थ गुरूः स्निग्ध उष्णश्च**
4. कटु	**लघु, उष्ण, रूक्ष**	लघुरूष्णो रूक्षश्च
5. तिक्त	**लघु, शीत, रूक्ष**	रूक्षः शीतो लघुश्च
6. कषाय	**गुरू, शीत, रूक्ष**	**रूक्षः शीतोऽलघुश्च**

नियम – **1.** रस, विपाक → मधुर → शीतवीर्य। 2. रस, विपाक → अम्ल/कटु → उष्ण वीर्य।

अपवाद – (1) जलीय तथा आनूप मांस – मधुर रस – किन्तु उष्ण वीर्य।
(2) सैंधव लवण – लवण रस – किन्तु शीत वीर्य।
(2) अर्क, अगरू, गुडूची – तिक्त रस – किन्तु उष्ण वीर्य।

गुण	**प्रधान**	**मध्य**	**अवर**	
1. स्निग्ध	मधुर	अम्ल	लवण	(123 - Solid)
2. रूक्ष	कषाय	कटु	तिक्त	(6/45 Run)
3. गुरू	मधुर	कषाय	लवण	(163/0 Good)
4. लघु	तिक्त	कटु	लवण	(5/43 Low)
5. शीत	मधुर	कषाय	तिक्त	(Total 165)
6. उष्ण	लवण	अम्ल	कटु	(Total 324)

रस	**गुण**	गुण कर्म
1. मधुर, अम्ल, लवण रस	**स्निग्ध**	वात, मूत्र, पुरीष विसर्जक।
2. कटु, तिक्त, कषाय रस	**रूक्ष**	वात, मूत्र, पुरीष, बद्ध।

विपाक

रस	**विपाक**	गुण कर्म	दोष प्रभाव
कटु, तिक्त, कषाय	**1. कटु विपाक**	बद्धविण्मूत्रल, शुक्रहा,	वातलः
अम्ल रस	**2. अम्ल विपाक**	सृष्टविण्मूत्रल, शुक्रलः	कफ वर्धक
मधुर, लवण रस	**3. मधुर विपाक**	सृष्टविण्मूत्रल, शुक्रनाशनः	पित्तकृत

वीर्य

"वीर्य तु क्रियते येन या क्रिया" (च. सू. 26/64) – द्रव्य की क्रिया जिसके द्वारा निष्पन्न की जाती है उसे वीर्य कहते हैं।

(1) द्विविध वीर्य :– (1) शीत वीर्य (2) उष्ण वीर्य (चरक, सुश्रुत)

(2) अष्ट विध :– गुरू, लघु, स्निग्ध, रूक्ष, मृदु, तीक्ष्ण, शीत, उष्ण। (चरक)

विशद, पिच्छिल, स्निग्ध, रूक्ष, मदु, तीक्ष्ण, शीत, उष्ण। (सुश्रत)

रसो निपाते द्रव्याणां, विपाकः कर्मनिष्ठया। वीर्यः यावत् अधिवासासन्निपाताच्चोपलभ्यते। (च. सू. 26/66)

रस, विपाक और वीर्य का ज्ञान – 1. द्रव्यों का रस जिह्वा पर (निपात) स्पर्श होते ही ज्ञान हो जाता है।
2. कर्म का समाप्ति से विपाक का ज्ञान होता हैं।
3. किन्तु वीर्य का ज्ञान निपात और अधिवास से होता है।

उदा. (1) निपात – शरीर के साथ संयोग होने के साथ। – मरिच के उष्ण वीर्य का ज्ञान।

(2) अधिवास – जब तक शरीर में वह द्रव्य रहे। – मरिच की तीक्ष्णता एंव दीपनीयता का ज्ञान।

''प्रभाव''

प्रभाव :–'रसवीर्य विपाकानां सामान्यं यत्र लक्ष्यते। विशेषः कर्मणां चैव प्रभावस्तस्य स स्मृतः।। (च.सू. 26/87)
रस, वीर्य और विपाक समान रहने पर भी जहां कर्म में विशेषता होती है उसका कारण एक विशिष्ट शक्ति मानी जाती है। इस विशिष्ट शक्ति को 'प्रभाव' कहते हैं।
उदा. :– (1) चित्रक और दन्ती – दोनों 432 है किन्तु दन्ती रेचक है चित्रक नहीं।
इसका कारण दन्ती में विशिष्ट शक्ति है जो चित्रक में नहीं है। इसका नाम प्रभाव है।

द्रव्यों की क्रियाशीलता –कोई द्रव्य रस से, तो कोई वीर्य, कोई विपाक तो कोई प्रभाव से अपना कार्य दिखलाता हैं।
रसादि का नैसर्गिक बल :– रस → विपाक → वीर्य → प्रभाव (उत्तरोत्तर बलवान)।

रसों का अभिज्ञान :–

(1) मधुर रस :– स्नेहन, प्रीणन, आह्लाद, मार्दवैः उपलभ्यते। मुखस्थो मधुरश्चास्यं व्याप्नुवैल्लिम्पतीव। **(च.सू. 26/74)**
(2) अम्ल रस :– **दन्तहर्षात्** मुखस्रावात स्वेदनात्, मुखबोधनात। **विदाहाचास्य कण्ठस्य,** अम्लं रस वदेत। **(च.सू. 26/75)**
(3) लवण रस :–प्रलीयन, क्लेद, विष्यन्दन, मादर्व कुरूते मुखे। यः शीघ्रं लवणो ज्ञेयः **स विदाहान्मुखस्य च।**
(4) कटु रस :– सवेजयेद्यो रसानां निपाते तदुतीव च। **विदहन्मुखनासाक्षिसंस्रावी** सः कटु स्मृतः। **(च.सू. 26/77)**
(5) तिक्तरस :– प्रतिहन्ति निपाते यो रसनं स्वदते न च। स तिक्तो **मुखवैशद्यशोषप्रह्लादकारकः। (च.सू. 26/76)**
(6) कषायरस :– वैशद्यस्तम्भजाडयैर्यो रसनं योजयेद्रसः। वघ्नातीत च यः कण्ठं कषायः स विकास्यपि। **(च.सू. 26/78)**

वैरोधिक आहार के घटक – 18

1. देश विरूद्ध	जांगल देश में रूक्ष, तीक्ष्ण एवं आनूप देश में स्निग्ध, शीत औषध प्रयोग
2. काल विरूद्ध	शीतकाल में शीत एवं रूक्ष वस्तु का सेवन।
3. अग्नि विरूद्ध	मंदाग्नि वाले व्यक्ति को गरिष्ठ आहार देना
4. मात्रा विरूद्ध	**मधु और सर्पि समान मात्रा में लेना।**
5. साक्य विरूद्ध	कटुरस सात्म्य व्यक्ति को मधुर रस खिलाना।
6. दोष विरूद्ध	वात–पित्त–कफ के समान गुणी आहार, औषध एवं कर्म सेवन करना।
7. वीर्य विरूद्ध	**शीत वीर्य दूध एवं उष्णवीर्य मछली का साथ सेवन**
8. कोष्ठ विरूद्ध	क्रूर कोष्ठ व्यक्ति को अल्यल्प एवं लघु आहार देना।
9. संस्कार विरूद्ध	**एरण्ड की लकड़ी की सींक पर भुना हुआ मोर का मांस।**
10. परिहार विरूद्ध	**वाराह आदि का मांस सेवन कर फिर उष्ण वस्तुओं का सेवन करना।**
11. अवस्था विरूद्ध	प्रमेही, निद्रालु एवं आलसी व्यक्ति को कफप्रकोपक आहार देना।
12. क्रम विरूद्ध	बिना मल–मूत्र त्याग या बिना भूख के भोजन करना।
13. उपचार विरूद्ध	**घृत आदि स्नेहों को पीकर शीतल आहार–औषध या जल पीना।**
14. पाक विरूद्ध	अर्धपक्व या अपक्व भात आदि का सेवन।
15. संयोग विरूद्ध	गुड के साथ मकोय खाना या **अम्ल पदार्थों के साथ दूध खाना।**
16. हृदय विरूद्ध	ऐसा आहार जो मन को प्रिया या पसंद न हो।
17. सम्पद् विरूद्ध	कच्चा या सडा हुआ फल या आहार का सेवन।
18. विधि विरूद्ध	आहार विधि विशेषायतन के नियमों के विरूद्ध भोजन करना।

मत्स्य और दूध एक साथ नहीं खाने चाहिए क्योकि दोनों क्रमशः उष्ण और शीत वीर्य होने से **विरूद्ध वीर्य** है। – आत्रेय
सभी मछलियों को दूध के साथ खाना चाहिए किन्तु चिलिचिम मछली को छोडकर – भद्रकाप्य
कपोत मांस को मधु और दूध के साथ नहीं खाना चाहिए
मूली, लहसुन, आम, सहिजन, अर्जक–सुमुख–सुरसा (तुलसी के भेद) आदि खाकर दूध का सेवन नहीं करना चाहिए ।
मूली, आम, जामुन, खरगोश, गोधा और सूकर मांस खाकर दूध का सेवन नहीं करना चाहिए। – सुश्रुत।

27. अन्नपानविधि अध्याय

हितकर द्रव्य – कर्म	हितकर द्रव्य – कर्म
1. उदकं क्लेदयतिं।	11. द्राक्षासव दीपयति।
2. लवणं विष्यन्दयति।	**12. फाणित माचिनोति।**
3. क्षारः पाचयति।	**13. दधि शोफं जनयति।**
4. मधु सन्दधीति।	14. पिण्याकशांक ग्लपयति।
5. सर्पिः स्नेहयति।	15. माषसूपः प्रभूतान्तर्मलों।
6. क्षीर जीवयति।	16. क्षारः दृष्टिशुक्रघ्नः।
7. मांस बृंहयति।	17. अम्लम् प्रायःपित्तलम् (दाडिम, ऑवला को छोडकर)
8. रसः प्राणयति।	18. मधुर प्रायः श्लेष्मलं (मधु, गोधूम को छोडकर)
9. सुरा जर्जरीकरोति।	**19. प्रायतिक्तं वातलं वृष्यं (वेताग्र,पटोल को छोडकर)**
10. सीधु वधमति	**20. प्रायःकटुकंवातलं अवृष्यं (पिप्पली,शुण्ठी को छोडकर)**

1. चरकानुसार आहार द्रव्यों के 12 वर्ग :–

(1) शूकधान्य (2) शमीधान्य (3) मांसवर्ग (4) शाकवर्ग (5) फलवर्ग (6) हरितवर्ग
(7) मद्यवर्ग (8) जलवर्ग (9) गोरसवर्ग (10) इक्षुवर्ग (11) कृतान्त वर्ग (12) आहारयोगी वर्ग

2. सुश्रुतानुसार :– 2 महा वर्ग :–

(1) द्रव वर्ग – 10 वर्ग (2) अन्न वर्ग – 13 वर्ग

1. द्रव वर्ग – 10 – जल, क्षीर, दधि, तक्र, घृत, तैल, मधु, इक्षु, मद्य और मूत्र वर्ग।

2. अन्न वर्ग–12– शालि, कुधान्य, मुदगादि(**वैदल**), मांस, फल, शाक, पुष्प, कन्द, लवण, कृतान्न, भक्ष्य, सर्वानुपान वर्ग

3. अष्टांगसंग्रह के अनुसार – आहार द्रव्यों के 12 वर्ग।

1. द्रवद्रव्यवर्ग (6) – 1. जलवर्ग 2. क्षीरवर्ग 3. इक्षुवर्ग 4. तैलवर्ग 5. मद्यवर्ग 6. मूत्रवर्ग

2. अन्नद्रव्य वर्ग (6)– 1. शुकधान्य 2. शिम्बिधान्य 3. कृतान्नवर्ग 4. मांसवर्ग 5. शाकवर्ग 6. फलवर्ग।

4. अष्टांगहृदय के अनुसार – आहार द्रव्यों के 12 वर्ग।

1. द्रवद्रव्यवर्ग (5) – 1. तोयवर्ग 2. क्षीरवर्ग 3. इक्षुवर्ग 4. तैलवर्ग 5. मद्यवर्ग

2. अन्नद्रव्य वर्ग (6)– 1. शुकधान्य 2. शिम्बिधान्य 3. कृतान्न 4. मांसवर्ग 5. शाकवर्ग 6. फलवर्ग 7. औषधवर्ग

–ः कुछ महत्वपूर्ण बिन्दू ः–

(1) चरक ने गोरस वर्ग ही में दुग्ध, दधि, तक्र, घृत आदि का समाविष्ट लिया है।
किन्तु सुश्रुत ने क्षीर, दधि, तक्र, घृतवर्ग इनका 4 वर्गो में पृथक–पृथक वर्णन किया है।
(2) सुश्रुत ने वैदल वर्ग, कुधान्य, पुष्प, कन्द लवण और सर्वानुपान वर्गो का सर्वप्रथम वर्णन किया हैं,
(3) सर्वप्रथम सुश्रुत संहिता में लवण वर्ग में धातु एवं रत्नों का चिकित्सीय प्रयोग का वर्णन आया गया है।
(4) अष्टांग हृदय में द्रव वर्गो में 'मूत्रवर्ग' का उल्लेख नहीं है किन्तु अष्टांग संग्रह में 'मूत्रवर्ग' वर्णन है।
(5) 'औषधवर्ग' मूलतः अष्टांगहृदय की देन है।
औषधवर्ग में लवण, क्षार, त्रिफला, पंचकोल एवं पंचमूल की औषधियों का वर्णन किया है।
(6) चरक एवं वाग्भट्ट दानों ने मधुवर्ग का समावेश इक्षुवर्ग में किया है।
जबकि सुश्रुत ने 'मधुवर्ग' का स्वतंत्र उल्लेख किया है।
(7) मुदग्, कलाय, मसूर, हरेणु आदि चरकोक्त 'शमी धान्य' वर्ग के द्रव्यों को सुश्रुत ने वैदल (द्विदली) कहा है।

(1) शूक धान्य वर्ग

(1) शालि धान्य :–

1) रक्तशालि	(6) दीर्घशूक	(11) लोहवाल
(2) महाशालि	(7) गौरधान्य	(12) सारिवा
(3) कलम	(8) पाण्डुक	(13) प्रमोदक
(4) शकुनाहृत	(9) लांगुल	(14) पंतग
(5) तूर्णक	(10) सुगन्धक	(15) तपनीय

– ये **पंद्रह प्रकार के धान्य** होते है। इन सभी धान्यों में **कलम → महाशालि → रक्तशालि** चावल गुणों में श्रेष्ठ है।
गुण :– ये सभी मधुर रस, विपाक व शीतवीर्य वाले, **अल्प वातल,** बद्धाल्पवर्चसः, स्निग्ध, बृंहण और शुक्रमूत्रल होते है।
– यवक, हायन, पांसु, वाप्य और नैषधक धान्य रक्तशालि आदि धान्य के विपरीत गुण वाले होते है।

(2) षष्टिक धान्य – मधुर रस, विपाक व शीतवीर्य वाले, लघु, स्निग्ध और **त्रिदोषघ्न** है, शरीर में स्थिरता पैदा करते है।
षष्टिक धान्य के भेद –2 – (1) गौर (2) कृष्ण।
वरक, उद्दालक, चीन, शारद, ज्जवल, दर्दुर, गन्धन, कुरूविन्द –ये सभी षष्टिक धान्य गुणों से अल्पगुण वाले होते है।

(3) कुधान्य – कोरदूष, **श्यामाक**, हस्तिश्यामाक, अम्भश्यामाक, निवार, तोयपर्णी, **गवेधूक**, प्रशातिका, लोहिताणु, **प्रियंगु,** मुकुन्द, झिण्टी, वरूक, वरक, शिबिर, उत्कट, जूर्णह्व – सभी कषायमधुर, शीतवार्य, लघु, **वातल** एवं कफपित्तघ्न होते है।

(4) यव :– सकषाय स्वादु रस, रूक्ष शीतोऽगुरू, **बहुवातशकृत कारक,** श्लेष्मविकारनुत् और बल्य, शरीर स्थैर्यकृत होता है।

(5) गोधूम :– सन्धानकर, मधुर रस, मधुर विपाक, शीतवीर्य, गुरू, **वातहर,** जीवनीय, बृंहण, वृष्य, स्निग्ध, स्थैर्यकर, गुरू है।

(2) शमीधान्य वर्ग

1. **मूंग :–** कषायमधुर रस, कटु विपाक एवं शीत वीर्य, लघु, रूक्ष, विशद गुण वाला (631 LRV) कफपित्तघ्न होता है। सभी शमी धान्यों में मुदग् उत्तम होता है।

2. **माष :–** मधुर रस, विपाक व **उष्णवीर्य,** गुरू, स्निग्ध (112 GS) बल्य **वृष्य, परं वातहर, बहुमल, और पुंस्त्व उत्पादक** है।

3. **राजमाष :–** राजमाष गुण में सर (विरेचक), रूच्य, **कफशुक्रम्लपित्तनुत्** (अम्लपित्तनाशक) **और वातल** है।

4. कुलत्थ :– कषाय रस, अम्ल विपाक व उष्ण वीर्य, **कफशुक्रानिलापहाः।** कुलत्थां ग्राहिणः **कासहिक्काश्वासार्शसां हिताः।** (622), कफ, शुक्र, **वातनाशक,** संग्राहक और कास, हिक्का, श्वास, अर्शनाशक है।

5. मोठ :– मधुर रस, विपाक एवं शीत वीर्य, रूक्ष गुण वाली (111 R) ग्राही एवं **रक्तपित्त व ज्वर में प्रशस्त** है। मसूर की दाल संग्राही और कलाय (मटर) की दाल वातल होती है।

7. तिल :– मधुर, कटुक, तिक्त, कषाय रस, उष्णवीर्य, स्निग्ध है। **त्वच्यः केश्यश्च बल्यश्च वातघ्नः कफपित्तकृत।**

8. शिम्बी :– शिम्बी रूक्षा कषाया च **कोष्ठे वातप्रकोपपिनी।**

9. अरहर :– **आढकी कफपित्तघ्नी वातला** – कफपित्तनाशक और वातल है।

7. काकाण्डोल (शूकशिम्बी) और आत्मगुप्ता (केवांच) – के गुणधर्म माष के समान है।

(3) मांसवर्ग – 8 योनि

1. प्रसह :– जो पशु, पक्षी दूसरों से आहार द्रव्य बलपूर्वक छीनकर खा जाते हैं। उन्हे '**प्रसह**' कहा जाता है।
उदा. – गो (गाय), गधा, घोड़ा, खच्चर, ऊँट, चीता, सिंह, भालू, वानर, मार्जार, मूषक, **श्येन, उलूक**, वायस।

2. भूशय :– जो बिलों में निवास करते हैं वह 'भूशय' कहलाते हैं।
उदा. – काकुली मृग, कूर्चिका (अंधा सर्प), कदली (वनविलाब), चिल्लट, **भेंक (मेढक), गोधा व नकुल।**

3. आनूप :– जल के समीपवर्ती प्रदेश या आनूप देश में रहते है। उन्हे 'आनूप' कहते है।
उदा. – सृमर, चमरः, खड्गो, माहिष (भैंस), **गवय (नीलगाय),** गज (हाथी), **वराह और रूरू (बारहसिंगा)।**

4. वारिशय :–जो जल में निवास करते है उन्हें 'जलज या वारिशय' कहते हैं।
उदा. – **कूर्म, कर्कटक**, मगर, चुलुकी, मत्स्य, शिशुमार, उद्र (वन विलाब), **शुक्ति, शंखक।**

5. वारिचर :– जो जल में चलने फिरने वाले होते हैं। उन्हें 'जलचर या वारिचर' कहते हैं।
उदा. – **हंस, कौन्च,** कारण्डव, प्लव, केशरी, उत्क्रोश, रक्तशीर्षक, नन्दीमुख, मदगु, **रोहिणी,** चक्रवाक।

6. **जांगल** :– जो स्थल (भूमि) पर उत्पन्न होते है और जंगलों में विचरण करते हैं उन्हें '**जांगल**' कहते हैं।
उदा – **पृषत, शरभ, शश, हरिण, एण, शम्बर,** मृगमातका, उरण, **राम, श्वदंष्ट्र, कुरंग, गोकर्ण, ऋष्य,** वरपोत।

7. विष्किर :– जो पक्षी अपनी चोंच या पैरों से कुरेद कर आहार को खोजकर खाते है। उन्हें '**विष्किर**' कहा जाता हैं।
उदा – **लाव, तित्तिर, बटेर, चकोर,** कपिञ्जल, कुकुम्भ, **कुकुक्ट (मुर्गा),** कंक, **बर्ही (मोर)**, वर्तक, वर्तिका।

8. प्रदुत :– जो जो पक्षी अपनी अपनी चोंच या पैर से प्रहार कर आहार को खाते हो। उन्हें '**प्रदुत**' कहा जाता हैं।
उदा – शतपत्र, **भृंगराज, बभ्रु, जीवजीवक,** जटी, दुन्दुभि, सारिका, कुलिंगक, चटक, **कपोत, पारावत।**

- **प्रसह, भूशय, आनूप, वारिज, वारिचर जीवों का मांस :– गुरू, उष्ण वीर्य**, स्निग्ध और **रस में मधुर** होता है। बल्य, वृष्य, वातहर तथा कफपित्तवर्धक होता है। – जीर्णार्शोग्रहणीदोषशोषार्तानां प्रयोजयेत्।
- **जांगल, विष्किर, प्रतुद मांस :– लघु, शीत वीर्य,** सकषाय मधुर रस होता है। मांस पित्तप्रधान, मध्यवात और हीन कफ वाले रोग में हितकर होता है। – पित्तोत्तरे वातमध्ये सन्निपाते कफानुगे।
  - (जांगल विहार प्रतिषेध लागू है = **जांगल, विष्किर, प्रतुद मांस – लघु है**)

अजमांस (बकरे का मांस)– नातिशीतगुरूस्निग्धं मांसमाजमदोषलम्। शरीरधातुसामान्यादनभिष्यन्दि बृंहणम्। (च.सू. 27/61)

चरणायुधा (मुर्गे का मांस) – स्निग्धाश्चोष्णाश्च वृष्याश्च बृंहणाः स्वरबोधनाः। बल्याः परं वातहराः स्वेदनाश्चरणायुधाः।

एण मांस (काला हिरण) – मधुरा मधुराः पाके त्रिदोष शमनाः शिवाः। लघवो बद्धविण्मूत्राः शीतःश्चैणाः प्रकीर्तिताः।

मत्स्य मांस (मछली का मांस) – गुरूष्णा मधुरा बल्या बृंहणाः पवनापहाः। **मत्स्याः** स्निग्धाश्च वृष्याश्च बहुदोषः प्रकीर्तिताः।

कूर्म मांस (कछुए का मांस) – **मेधास्मृतिकरः पथ्यः शोषघ्नः कूर्म उच्यते।** (च.सू. 27/84)

- **शरीरबंहणे नान्यत् खाद्यं मांसाद्विशिष्यते।** – (च. सू. 27/87)
  शरीर को बढाने वाला हेतु मांस को छोडकर अन्य दूसरा कोई खाद्य पदार्थ नहीं है।

(4) शाकवर्ग

पाठा, शुषा, शटी, वास्तुक एवं सुनिषण्णक शाक – 'ग्राहि त्रिदोषघ्नं भिन्नवर्चस्तु वास्तुकम्।

काकमाची (मकोय) शाक – **त्रिदोषशमनी वृष्या काकमाची रसायनी।, नात्युष्णशीतवीर्या,** भेदिनी, कुष्ठनाशिनी।

राजक्षवक – राजक्षवकशाकं तु त्रिदोषशमनं लघु। **ग्राहि शस्तं ग्रहण्यर्शोविकारिणाम्।** ग्रहणी व अर्श में विशेष हितकारी।

उपोदिका (पोई) शाक – 111 S, कफवर्धक, **वृष्या, स्निग्धा च शीता च मदघ्नी चाप्युपोदिका।**

तण्डुलीयक शाक – रूक्षो **मदविषघ्नश्च** प्रशस्तो रक्तपित्तनाम्। मधुरो मधुरः पाके शीतलस्यतण्डुलीयकः। (111 S)

कूष्माण्ड :– सक्षारं पक्वकूष्माण्डं मधुराम्लं तथा लघु। सृष्टमूत्रपुरीष च सर्वदोषनिबर्हणम्।। (च. सू. 27/113)

विदारीकन्द :– जीवनो बृंहणो वृष्यः कण्ठयः शस्तो रसायने। विदारीकन्दो बल्यश्च मूत्रलः स्वादुशीतलः।

अम्लिका कन्द :– अम्लिकायाः स्मृतः कन्दो **ग्रहण्यर्शोहितो** लघुः।

सर्षपशाक – त्रिदोषं बद्धविण्मूत्रं सार्षपं शाकमुच्यते।

(5) फलवर्ग

- फलवर्ग में चरक ने **मद्वीका**, सुश्रुत ने **दाडिम** और वाग्भट्ट ने सर्वप्रथम **द्राक्षा** के गुणों का वर्णन किया है।
- **टंक** = नाशपाती, **सिम्बितिकाफल** = सेव, **पारावत** = अमरूद, **फल्गु** = अंजीर, **मोचा** = केला के पर्याय है।

मद्वीका :–'श्रेष्ठ फल' – तृष्णादाहज्वर श्वासरक्तपित्तक्षतक्षय नाशक, कास स्वरभेद को शीघ्र दूर करता है।
मृद्वीका वृंहणी वृष्या मधुरा स्निग्घशीतला। (च. सू. 27/126)

कच्चा कैथ – कपित्थमामं कण्ठघ्नं, विषघ्नं, ग्राहि वातलम्।
पक्का कैथ – परिपक्व च दोषघ्नं, विषघ्न, ग्राहि, गुर्वपि।, मधुराम्लकषाय रस, सुगन्धि होने से रूचिप्रदम्।

कच्चा बिल्व – स्निग्ध, उष्णवीर्य, तीक्ष्ण, दीपन, **कफवातजित्।**
पक्का बिल्व – दुर्जरं (दुष्पाच्य), दोषलं, पूति अपानवायु का निःसारक होता है।

बाल आम :– रक्तपित्तकरं बालम्, **अपक्व आम** – अपूर्ण पित्तवर्धनम्, **पक्व आम – पक्वमाम्रं जयेद्वायुं मांसशुक्रबलप्रदम्।**

लवलीफल :– कषायविशदत्वाच्च सौगन्धाच्च रूचिप्रदम्। अवदंशक्षमं हृद्यं वातलं लवलीफलम्। (च. सू. 27/143)

आमलक :– विद्यादामलके **सर्वान् रसान्लवणवर्जितान्।** रूक्षं स्वादु कषायाम्ल कफपित्तहरं परम। **(च. सू. 27/147)**
आवॅला में लवण रस को छोड़कर सभी रस वर्तमान् हैं, आवॅला गुण में रूक्ष, मधुर कषाय, अम्लरस वाला, कफपित्तहर है।

- **विभीतक – रसासृङमांसमेदोजान्दोषान् हन्ति विभीतकम्। (च. सू. 27/148)**

- **कर्चूर :– कर्चूरः कफवातघ्नः श्वासहिक्कार्शतां हितः। (च. सू. 27/155)**

(6) हरित वर्ग

(1) **आर्द्रक** :– रोचनं दीपनं वृष्यं आर्द्रकं **विश्वभेषजम्।** (वात, श्लेष्म, रसज विबन्ध नाशक)।

(2) **जम्बीरी नीबू** :– रोचनो दीपनस्तीक्ष्ण सुगन्धिः **मुखशोधनः।** (वातकफघ्न, क्रमिघ्न, भक्तपाचनः)।

(3) **मूलक** :– **1. बालं** त्रिदोषहरं **2. वृद्धं** त्रिदोषं 3. मारूतापहम् **स्निग्धसिद्धं 4. विशुष्कं** तु मूलकं कफवातजित।

(4) **सुरस (तुलसी)** :– हिक्काकासविषश्वासपार्श्वशूलविनाशनः। – **श्वास, कास, हिक्का, पार्श्वशूल, एवं विषविनाशनक** है। पित्तकृत, कफवातघ्न, सुरसः पूतिगन्धहा।

(5) **भूस्तृण (रोहितघास)** :– **पुंस्त्वघ्नः** कटुरूक्षोष्णो भूस्तृणो **वक्त्राशोधनः। (च. सू. 27/172)**

(6) **खराह्वा (स्याह जीरा) :– खराह्वा कफवातघ्नी वस्ति रोगरूजापहा।। (च. सू. 27/172)**

(7) **गाजर** :– ग्राही गृन्जनकस्तीक्ष्णो **वातश्लेष्मार्शसां हितः**। – अपित्त प्रकृति हेतु स्वेदन व भोजन में प्रयोग करना चाहिए।

(8) **पलाण्डु** – श्लेष्मलो मारूतघ्नश्च पलाण्डुर्न च पित्तनुत्। **आहारयोगो** बल्यश्च गुरूर्वृष्योऽथ रोचनः। **(च. सू. 27/175)**

(9) **लशुन** :– **क्रिमिकुष्ठकिलासघ्नो वातघ्नो गुल्मनाशनः।** स्निग्धोष्णश्च **वृष्यश्च** लशुनः कटुको गुरूः। **(च. सू. 27/176)**

(7.) मद्यवर्ग

सामान्य गुण :– प्रायः सभी प्रकार के मद्य अम्लरस, उष्णवीर्य एवं अम्लविपाकी होते हैं।
1. सुरा – कृशानां सक्तमूत्राणां, **ग्रहणी अर्शोविकारिणाम् । सुरा प्रशस्ता वातघ्नी स्तन्यरक्तक्षयेषु च।**

2. मदिरा – हिक्का, श्वास, प्रतिश्याय, कास, वर्चोग्रह, अरूचि, वमन, आनाह, विबंध में मदिरा हितकारी होती है।

3. जगल – शूल प्रवाहिका आटोप कफवातार्शसां हितः। (च. सू. 27/181)

4. सुरासव – सुरासवः तीव्रमदो वातघ्नो वदनप्रियः। **तीव्रमद** (उग्र नशा करने वाली) होती है।

5. मध्वासव – 'छेदी मध्वासवः तीक्ष्णो'। – दोषों का छेदन करने वाला और तीक्ष्ण है।

6. मैरेय – 'मैरेयो मधुरो गुरूः।' – रस में मधुर एवं पाक में गुरू होता है।

7. मधूलिका – 'श्लेष्मला तु मधूलिका'। – यह कफ को बढ़ाने वाली होती है।

8. सौवीरक, तुषोदक :– ग्रहण्यर्शोहितं भेदि सौवीरकतुषोदकम्। **(च. सू. 27/192)**

- **नवीन मद्य** :– 'प्रायशोऽभिनवं मद्यं **गुरू दोषसमीरणात।**
- **पुराण मद्य** :– 'पुराण स्रोत्रसां शोधनं दीपनं **लघु रोचनम्।**

सात्विक मद्य :– सात्विकैर्विधिवद्युक्तया पीतं स्यादमृतं यथा – सात्विक मनुष्यो द्वारा विधिपूर्वक सेवित मद्य अमृत के समान फल देता है।

(8.) जल वर्ग

आन्तरिक्ष जल :– शीतं शुचि शिवं मृष्टं विमलं लघु षडगुणम्। प्रकृत्या दिव्यमुद्रकं – (च. सू. 27/197)
आकाश से गिरने वाला दिव्यजल – शीत, शुचि, कल्याणकरी, मधुर, विमल और लघु इन छः गुणों वाला होता है।

आंतरिक्ष जल का अलग – अलग भूमि पर गिरने के अनुसार जल के रस का परिणाम :–

जल का रस	भूमि
1. मधुर	कृष्ण मृत्तिका (काली मिट्टी)
2. अम्ल	– –
3. लवण	ऊषर भूमि
4. कटु	पर्वत
5. तिक्त	पाण्डु वर्ण
6. कषाय	श्वेत वर्ण
7. क्षार	कपिल वर्ण

अव्यक्त रस – ऐन्द्र, कार और हिम – ये अव्यक्त रस वाले होते है।

उत्तम जल के गुण – ईषत्कषायमधुरं सुसूक्ष्मं विशदं लघु। अरूक्षं अनभिष्यन्दि सर्व पानीयं उत्तमम्। (च.सू. 27/202)

ऋतुनुसार बरसने वाले जल के गुण :–

ऋतु में वर्षा	जल के गुण
1. शिशिर	हेमन्त ऋतु के जल से लघुतर एवं कफवातघ्न होता है।
2. बंसत	**कषाय मधुर रूक्षं** विद्यात् बसन्तिकं जलम्।
3. ग्रीष्म	ग्रैष्मिकं त्वनभिष्यन्दि – निश्चित रूप से अनभिष्यन्दी।
4. वर्षा	गुरू, अभिष्ययन्दी, मधुरं नवम्।
5. शरद	तनु, लघु, अनभिष्यन्दी होता है।
6. हेमन्त	हेमन्ते सलिलं स्निग्धं बृष्यं बलहितं गुरू।

उद्‌भव स्थान के अनुसार नदियों के जल के गुण :–

उद्‌भव स्थान	जल के गुण
1. हिमवत्प्रभवाः	पथ्याः पुण्या, देवर्षि सेविता।
2. मलय प्रभवाः	थ्वमलोदक, अमृत के समान।
3. पश्चिमभिमुखा	पथ्या, निर्मलोदक।
4. पूर्वसमुद्रगा	मृदुवहा (मंदवेग वाला), गुरू।
5. पारियात्र, विन्ध्य, सह्यप्रभवा	शिरोरोग, हृदयरोग, कुष्ठ, श्लीपदजनक।

वर्षाजल : – 'वर्षाजल वहा नद्यः सर्वदोष समीरणाः।' – वर्षा ऋतु में नदी का जल सवदोष प्रकोपक होता है।

समुद्रजल :– 'विस्र त्रिदोषं लवणमम्बु यत् वरूणालयम। – समुद्रजल विस्रगंधी, त्रिदोषकोपक एवं लवण रस वाला होता है

(9.) गोरस वर्ग

1. गोदुग्ध :– **1. स्वादु शीतं मृदु स्निग्धं बहलं श्लक्षणपिच्छिलम्। गुरू मन्दं प्रसन्नं च गव्यं दशगुणं पयः।।**
तदेवगुणमेवौजः सामान्यादभिवर्धयेत्। – गोदुग्ध के ये 10 गुण ओज के गुणों के समान है।
2. प्रवरं जीवनीयानाम क्षीरमुक्तं रसायनम्। (च. सू. 27/218)
गोदुग्ध सभी जीवनीय पदार्थों में श्रेष्ठ तथा रसायन है।

2. माहिषी दुग्ध :– गोदुग्ध से गुरूतर, शीततर होता है और अधिक स्नेहयुक्त, **'अनिद्रा एवं अत्यग्नि रोग में हितकारी** है।

3. उष्ट्रदुग्ध :– ईषत्, लवण, रूक्ष, उष्ण, लघु होता है। **शस्तं वातकफानाहक्रिमिशोफोदरार्शसाम्। (च. सू. 27/219)**

4. घोड़ी दुग्ध :– बल्य, स्थैर्यकर और सर्वमुष्णं होता है। साम्लं सलवणं रूक्ष **शाखावातहरं** लघु।

5. अजा दुग्ध :– छागं **कषाय मधुर**, शीत, ग्राहि पयो लघु। **रक्तपित्तातिसारघ्न, क्षयकासज्वरापहम्।।**

6. आविदुग्ध :– **हिक्काश्वासकरं** तूष्ण पित्तश्लेष्मलम् आविकम्।

7. हस्ति दुग्ध :– **हस्थिनीनां पयो बल्यं गुरू स्थैर्यकरं परम। (च. सू. 27/223)**

8. स्त्री दुग्ध :– जीवनं वृहणं सात्म्यं स्नेहनं मानुषं पयः। नावनं रक्तपित्ते च तर्पणं चाक्षिशूलिनाम्।। (च. सू. 27/224)
- स्त्री दुग्ध जीवनीय, बृंहणीय, सात्म्य और स्निग्धता कारी होता है।
- रक्तपित्त में – नावन (नस्य) देने से एंव अक्षिशूल में – तपर्ण करने से लाभप्रद होता है।

दधि

दही के गुण :– रोचनं दीपनं वृष्यं स्नेहनं बलवर्धनम्। पाकेऽम्लमुष्णं वातघ्नं **मंगल्यं** बृंहणं दधि। **(च. सू. 27/225)**
दही का रस अम्ल, विपाक अम्ल, वीर्य उष्ण होता है एवं दधि वातघ्न, मंगल्य और बृंहण होता है
दही का निषेध :– 'शरदग्रीष्म व बसन्तेषु प्रायशो दधि गर्हितम्। – (च. सू. 27/226)
शरद, ग्रीष्म एवं बंसत ऋतुओं में तथा रक्तपित्त, कफज विकारों में दही नहीं सेवन करना चाहिए।
मन्दक :– त्रिदोषं मन्दकं – मन्दक (अच्छी तरह से न जमा हुआ दही) त्रिदोषक प्रकोपक होता है।
दही की मलाई :– वातघ्न एवं शुक्रल है।
दही का मण्ड :– श्लेष्मानिलघ्न एवं **स्रोत्रोविशोधन** होता है।

तक्र

तक्र के गुण :– शोफ, अर्श, ग्रहणी, मूत्रकृच्छ, उदररोग, अरूचि को नष्ट करता है।
स्नेह व्यापत, पाण्डु रोग एवं विषविकार में प्रयोग तक्र का प्रयोग करना चाहिए।
नवनीत के गुण :– संग्राहि, दीपनं, हृद्यं नवनीतं नवोद्धृतम्। ग्रहणी, अर्श, अर्दित एवं अरूचि नाशक है।

घृत

घृत के गुण :– स्मृति, बुद्धि, अग्नि, शुक्र, ओज, कफ और मेद को बढाने वाला होता है।
वातपित्तघ्न है, सभी प्रकार के विषविकार, उन्माद, राजयक्ष्मा, ज्वर इन विकारों को दूर करता है।
जीर्ण घृत – पुराना घृत मद, मूर्च्छा, अपस्मार, शोष, उन्माद, गरविष, ज्वर, **योनिकर्णशिरःशूल नाशक** होता है।
बकरी, भेड़ और भैंस के घी के गुण उनके दूध के गुण को समान होते है।
पीयूष – नवप्रसूता गौ का प्रथम सात दिन का दूध दीप्ताग्नि, अनिद्रा में हितकारी
मोरट – सात दिन के बाद का स्थिरता वाला दूध – गुरू, वृंहण, तृप्तिदायक, वृष्य।

(10.) इक्षुवर्ग

इक्षुरस :– वृष्य, शीत, सर स्निग्ध, वृंहण, मधुरस और श्लेष्मवर्धक होता है।
पौण्ड्रक :– शीतलता, स्वच्छता और मधुरता के कारण सभी गन्नों में 'श्रेष्ठ है'।
वंशक :– वंशक पौण्ड्रक के समान गुण वाला किन्तु कुछ न्यून गुण होता है।
गुड :– प्रभूतक्रिमि, मज्जासृङ्मेदोमांसकरो गुडः। (च. सू. 27/238)
गुड – क्रिमि रक्त, मांस, मेद और मज्जा को बढ़ाने वाला होता है।

- मत्स्यण्डिका (मिश्री) → खौड → शर्करा → उत्तरोत्तर निर्मल एवं शीतल।

मधु के 4 भेद

1. माक्षिक – तैल वर्ण (पिंगल वर्ण की बड़ी मक्खियों द्वारा निर्मित)
2. क्षौद्र – कपिल वर्ग (पिंगल वर्ण की छोटी मक्खियों द्वारा निर्मित)
3. पौत्तिक – घृत वर्ण (पिंगल वर्ण की बड़ी 'पुत्तिका नामक' मक्खियों द्वारा)
4. भ्रामर – श्वेत वर्ण (भौंरों की तरह काली मक्खियों द्वारा निर्मित)

- **माक्षिकं प्रवरं तेषां विशेषाद् भ्रामरं गुरू – (च.सू. 27/244)** – माक्षिक मधु– श्रेष्ठ और भ्रामर मधु– गुरू होता है।
- **सामान्य गुण :–** वातलं गुरू शीतं च रक्तपित्त कफापहम्। सन्धातृ च्छेदन रूक्षं **कषायं मधुरं मधु। (च.सू. 27/245)**
  मधु रस में **कषाय मधुर** होता है।
- उष्ण किया हुआ मधु मृत्युकारक होता है।
- **अल्प सेवन :– गुरूरूक्षकषायत्वाच्छैत्याच्चाल्पं हितं मधु। (च. सू. 27/246) –**
  मधु, गुरू, शीत, रूक्ष और कषाय होता है अतः अल्प मात्रा में सेवन करना लाभकारी होता है।
- **मध्वाम – नातः कष्टतमं किंचिन्मध्वामात्तद्धि मानवम्। उपक्रमविरोधित्वात् सद्योहन्याद्यथाविषम्। (च. सू. 27/247)**
  मधु सेवनजन्य अजीर्ण से बढकर कोई भी अजीर्ण कष्टकारी नहीं होता है। क्योंकि यह उपक्रम में विरोधी होता है। जिस प्रकार विषसेवन से शीघ्र मृत्यु होती है उसी प्रकार मधु सेवनजन्य अजीर्ण शीघ्र ही मनुष्य को मार डालता है।
- **योगवाहि – 'नानाद्रव्यात्मकत्वाच्च योगवाहि परं मधुं।' (च. सू. 27/249)। –**
  अनेक प्रकार के द्रव्यों के संयोग से मधु की उत्पत्ति होती है इसलिए मधु उत्तम 'योगवाही' होता है।
  ✓ आचार्य चरक ने मधु, वायु और पिप्पली को 'योगवाहि' की संज्ञा दी है।

(11.) कृतान्न वर्ग

1. पेया – क्षुत्तृष्णाग्लानिदौबर्ल्य कुक्षिरोगज्वरापहा। **स्वेदाग्निजननी पेया** वातवर्चोऽनुलोमनी। **(च. सू. 27/250)**
2. विलेपी – तर्पणी **ग्राहिणी** लघ्वी **हृद्या** चापि विलेपिका।
3. मण्ड – **मण्डस्तु दीपयत्यग्निं वातं चाप्यनुलोमयेत्। (च. सू. 27/251)**
दीपनत्वात् लघुत्वाच्च मण्डः स्यात् प्राणधारणः। – दीपन, लघु होने से मण्ड **'प्राणधारण'** कहा गया है।
4. लाजपेया – **लाजपेया श्रमघ्नी तु क्षामकण्ठस्य देहिनः। (च. सू. 27/253)**
5. लाजमण्ड – तृष्णातिसार शमनो धातुसाम्यकरः **शिवः**। लाजमण्डोऽग्निजननो **दाहमूर्च्छानिवारण। (च. सू. 27/254)**
विषमाग्नि व मंदाग्नि वाले मनुष्यों, बालक, वृद्ध, स्त्री और सुकुमार को सुंसस्कृत लाजमण्ड देना चाहिए
6. कुल्माष – कुल्माष गुरवो रूक्षा वातला भिन्नवर्चसः। (च. सू. 27/260)
7. वेशवार – **वेशवारो गुरूः स्निग्धो बलोपचयवर्धनः। (च. सू. 27/269)**
8. रसाला – रसाला बंहणी बृष्या स्निग्धा बल्या रूचिप्रदा। (च. सू. 27/278)
9. रागषाडव – **कट्म्लस्वादुलवणा लघवो रागषाडवाः। मुखप्रियाश्च हृद्याश्चदीपना भक्तरोचनाः। (च. सू. 27/281)**

- **अकृतयूष → कृतयूष → तनुमांसरस → संस्कारित मांस → अनम्ल सूप (गुरूपाकी)**

(12.) आहारयोनि वर्ग

तैल

तैल के सामान्य गुण :— सभी प्रकार के तैल मधुर रस, कषायानुरस वाले, उष्ण वीर्य, पित्तलं, कफ को न बढ़ाने वाला, वातघ्न द्रव्यों में उत्तम, सूक्ष्म, व्यवायि, बद्धविण्मूत्रल, बल्य, त्वच्य, और **'मेधाग्निवर्धनम्'** होते है।

तैलं संयोगसंस्करात् सर्वरोगापहं मतम्। — (च. सू. 27/287)

1. एरण्ड तैल — ऐरण्डतैलं मधुरं गुरू श्लेष्माभिवर्धनम्। **वातासृग्गुल्महृद्रोगजीर्णज्वरहरं परम्।। (च. सू. 27/289)**
2. सर्षप तैल — कटूष्णं सार्षपं तैलं रक्तपित्तप्रदूषणम्। कफश्रक्रानिलहरं कण्डूकोठविनाशनम्।। **(च. सू. 27/290)**
3. कुसुम्भ तैल — 432, अत्यंत विदाहि और विशेषकर **'सर्वदोषप्रकोपण'** होता है।

- शुण्ठी — सस्नेहं दीपनं बृष्यमुष्णं वातकफापहम्। **विपाके मधुरं** हृद्यं रोचनं विश्वभेषजम्।
- पिप्पली — श्लेष्मला **मधुरा चार्द्रा** गुर्वी स्निग्धा च पिप्पली।
  सा **शुष्का** कफवातघ्नी कटूष्णा **वृष्य**संमता।।
- मरिच — नात्यर्थमुष्णं मरिचवृष्यं लघु रोचनम्। छेदित्वाच्छोषणात्वाच्च दीपनं कफवातजित्।

लवण

1. सैन्धव — **रोचनं दीपनं वृष्यं चक्षुष्यं अविदाहि।** त्रिदोषघ्न समधुरं **सैन्धवं लवणोत्तमम्। (च.सू. 27/300)**
2. सौवर्चल — **सौवर्चलं विबन्धघ्नं हृद्यमुद्गारशोधि च।** — सूक्ष्म, उष्ण, लघु और **उद्गार शोधक हो**ता है।
3. विड्लवण — **उर्ध्व चाधश्च वातानामानुलोम्यकरं विडम्।** — तीक्ष्ण, उष्ण, अग्निदीपन और उदरशूल नाशक है।
4. औद्भिद् — सतिक्तकटु सक्षारं **तीक्ष्णमुत्क्लेदि** च औद्भिद्म।
5. काललवण — **सौवर्चल लवण सम गुणवान किन्तु इसमें गन्ध नहीं होती है।**
6. सामुद्र लवण — सामुद्रकं समधुरं।
7. पांशुज लवण — सतिक्त कटु पांशुजम।

सभी लवण — लवणं सर्व रोचनम् पाकि संस्रन अनिलापहम्। (च. सू. 27/304)

क्षार

सभी क्षार उष्ण, तीक्ष्ण, लघु, रूक्ष, क्लेदी, पाचक, विदारक, दाहक, दीपन, छेदक और अग्नि सम गुण वाले होते हैं।

यवक्षार :— हत्पाण्डुग्रहणीरोगप्लीहानाहगलग्रहान्। कासं कफजमर्शांसि यावशूको व्यपोहति।। (च. सू. 27/305)

हृद्रोग, पाण्डु, ग्रहणी, प्लीहरोग, आनाह, गलग्रह, कफज कास और सभी प्रकार के अर्श रोगों को दूर करता है।

अन्नपान में परीक्ष्य विषय — 9

चरः शरीरावयवाः स्वभावो धातवः क्रिया। लिंग प्रमाणं संस्कारो मात्रा चास्मिन् परीक्ष्यते।। (च. सू. 27/331)

1. चर 2. शरीरावयव 3. स्वभाव 4. धातु 5. क्रिया 6. लिंग 7. प्रमाण 8. संस्कार 9. मात्रा। — ये अन्नपान परीक्ष्य विषय है।

(1) चर — 1. आनूप जीव — गुरू मांस, 2. जांगल जीव — लघु मांस।

(2) शरीरायव :— सक्थि → स्कन्ध → क्रोड (छाती) → शिर का मांस — उत्तरोत्तर गुरू होता है।
वृषण → चर्म → मेढ्र → श्रोणि → वृक्क → यकृत → गुदा → मध्य देह → गुरूत्तर मांस।

(3) स्वभाव — मुदग्, लाव, कपिन्जल मांस स्वभाव से — लघु, माष, वराह, माहिषी मांस स्वभाव से — गुरू होता है।

(4) धातु — धातूनां शोणितादीनां गुरूं विद्यात् यथोत्तरम्। — रक्तादि धातुएं उत्तरोत्तर गुरू होती जाती है।

(5) क्रिया — अलसी प्राणी के स्थान पर क्रियाशील प्राणी का मांस गुरू होता है।

(6) लिंग — एक ही जाति के प्राणियों में — पुरूष का मांस — गुरू, स्त्री का मांस — लघु।

(7) प्रमाण — एक ही जाति के प्राणियों में — स्थूल का मांस — गुरू, कृश का मांस — लघु।

(8) संस्कार — गुरूणां लाघवं विद्यात् संस्कारात् सविपर्ययम्।

(9) मात्रा — गुरू और लघु द्रव्यों की भोज्य मात्रा अग्निबल की अपेक्षा करती है।

- **बलमारोग्यमायुश्च प्राणाश्चाग्नौ प्रतिष्ठितः। (च.सू. 27/342)**

- षट्त्रिंशतं सहस्राणि रात्रिणां हितभोजनम्। **(च.सू. 27/348)**
  हिताभ्यासी, जितेन्द्रिय मनुष्य 36000 रात्रि अर्थात् 100 वर्ष तक जीवित रहता है।
- **प्राणाः प्राणभृतामन्नमन्नं लोकोऽभिधावति। (च.सू. 27/349)**
- **वर्णः प्रसादः सौस्वर्य जीवितं प्रतिभा सुखम्। तुष्टिः पुर्ष्टिबलं मेधा सर्वमन्ने प्रतिष्ठितम्। (च.सू. 27/350)**
  प्राणियों के प्राण अन्न है, वर्ण, प्रसन्नता, स्वर, जीवन, प्रतिभा, सुख, तृष्टि, पुष्टि, मेधा – ये सभी अन्न से प्रतिष्ठित है।

28. विविधाशितपीतीय अध्याय

आहार भेद –चरक, सुश्रुत–4 – अशित, पीत, लीढ़, खादित (भा. प्र., शा. –6– भोज्य, भक्ष्य, चर्व्य, लेह्य, चोष्ट, पेय)

धातु	धातु प्रदोषज विकार
(1) रस	अश्रद्धा, अरूचि, आस्यवैरस्य, अरसज्ञता, हल्लास, गौरव, तन्द्रा, अंगमर्द, ज्वर, **तमः, पाण्डुत्व, स्रोत्रोवरोध, क्लैव्य,** साद, कृशांगता, **अग्निनाश, अकाल बलय, पलित।**
(2) रक्त	कुष्ठ, विसर्प, **पिडका,** रक्तपित्त, असृग्दर, गुदपाक, मेढ्रपाक, मुखपाक, प्लीहा, विद्रधि, **गुल्म** नीलिका, **कामला,** व्यंग, पिप्लु, तिलकालक, दद्रु, चर्मदल, श्वित्र, पामा, कोठ, रक्त मण्डल।
(3) मांस	अधिमांस, अर्बुद, कील, गलशालूक, पूतिमांस, **अलजी**, गलगण्ड, गण्डमाला, उपजिह्विका।
(4) मेद	प्रमेह की पूर्वरूप और अष्ट निन्दित महारोग।
(5) अस्थि	अध्यस्थि, अद्यिदन्त, दन्तभेद, दन्तशूल, अस्थिभेद, अस्थिशूल, विवर्णता, केशलोमनखश्मश्रु विकार
(6) मज्जा	**पर्वरूजा,** भ्रम, **मूर्च्छा, तमोदर्शन** (आंखों के अंधेरा छाना) **अरूषां स्थूलमूलानां पर्वजानां च दर्शनम्।**
(7) शुक्र	**क्लैव्य,** अहर्ष, **गर्भस्राव, गर्भपात,** कुरूप सन्तानोपत्ति।
(8) इन्द्रिय	उपताप (इन्द्रियों में विकार), उपघात (इन्द्रिय शक्ति का नाश)
(9) उपधातु	स्तम्भ, संकोच, खल्ली, **ग्रन्थि,** स्फुरण, सुप्ति, विशेषकर स्नायु सिरा कण्डरा में।
(10) मल	मलभेद, मलशोष, मलसंग, अतप्रवृत्ति, मल रस, गंध वर्ण प्रदूषण।

धातु प्रदोषज	चिकित्सा
1. रस	लंघन। **(रसजानां विकाराणां सर्व लंघनमौषधम्)**
2. रक्त	रक्तपित्तहर चिकित्सा, विरेचन, उपवास या रक्तमोक्षण।
3. मांस	संशोधन, शस्त्र, अग्नि, क्षारकर्म। **(मांसजानां तु संशुद्धिः शस्त्रक्षाराग्निकर्म च)**
4. मेद	**अष्टौनिन्दितिकेऽध्याये मेदोजानां चिकित्सतम्।** – अष्टनिन्दित रोग चिकित्सा
5. अस्थि	अस्थ्याश्रयाणां व्याधिनां पंचकर्माणि भेषजम्। –पन्चकर्म विशेषकर वस्ति, तिक्त साधित क्षीरसर्पि
6. मज्जा	व्यवाय, व्यायाम, यथाकाल संशोधन, मधुर, तिक्त, औषध और अन्न सेवन।
7. शुक्र	व्यवाय, व्यायाम, यथाकाल संशोधन, मधुर, तिक्त, औषध और अन्न सेवन।

कोष्ठ → शाखा दोषगमन

व्यायामात् उष्मणः तैक्ष्ण्यात् अहितस्यानवचारणात्। कोष्ठात् शाखा मलायान्ति द्रुतत्वान्मारूतस्य च।। (च. सू. 28/32)
(1) अधिक व्यायाम (2) उष्मा की तीक्ष्णता (3) अहितकर आहार विहार सेवन (4) वायु की अत्यंत तीव्र गति।

शाखा → कोष्ठ दोषगमन

वृद्धया विष्यन्दनात् पाकात् स्रोत्रोमुखविशोधनात्। शाखा मुक्त्वा मलः कोष्ठं यान्ति वायोश्चनिग्रहात।। (च. सू. 28/33)
(1) दोषों की वृद्धि (2) विष्यंदन (3) दोषों का पाक। (4) स्रोत्रों का मुख शोधन से (5) वायु के निग्रह से।

परीक्षक मनुष्यों के गुण :– 9

परीक्षक :– श्रुतं बुद्धिः स्मृतिः दाक्ष्यं धृतिः हितनिषेवणम्। वाग्विशुद्धि शमो धैर्यमाश्रयन्ति परीक्षकम्।। (च. सू. 28/33)

(1) शास्त्र अभ्यास (2) विवेकशालिनी बुद्धि (3) स्मरण शक्ति (4) कार्यदक्षता (5) धारणा शक्ति
(6) हिताभ्यासी (7) वाणी की पवित्रता। (8) शान्ति। (9) धीरता

29. दशप्राणायतनीय अध्याय

दशविध प्राणायतन :–दशैवायतनान्याहुः प्राणा येषु प्रतिष्ठितः। शखौ मर्मत्रयं कण्ठो रक्तं शुक्रौजसी गुदम।।

(1) शंख द्वय + त्रिमर्म + शुक्र, ओज, रक्त, कण्ठ, गुद। (चरक. सू. 29/3)

(2) मांस, नाभि + त्रिमर्म + शुक्र, ओज, रक्त, कण्ठ, गुद। (चरक. शा. 7/9)

(3) जिह्वाबंधन, नाभि + त्रिमर्म + शुक्र, ओज, रक्त, कण्ठ, गुद। (अ. ह. शा. 3/13)

द्वादश प्राण :– अग्नि, सोम, वायु, सत्व, रज, तम, पंचेन्द्रियां + भूतात्मा। (सुश्रुत)

द्विविध वैद्य :–

1. **प्राणाभिसर –** प्राणानामभिसरा हन्तारो रोगाणाभिति प्राणाभिसरः।– प्राणों की रक्षा एवं रोगों का नाश करने वाला।

प्राणाभिसर :– तानीन्द्रियाणि विज्ञानं चेतनाहेतुमामयान्। जानीते यः स वै विद्वान प्राणाभिसर उच्यते।।

जो वैद्य (1) दश प्राणायतन (2) इन्द्रियों (3) आयुर्वेद विज्ञान 4) चेतना हेतु (आत्मा) और (5) रोगों को जानता है । उस विद्वान वैद्य को 'प्राणाभिसर' कहा जाता है।

प्राणाभिसर वैद्य के लक्षण –

(1) कुलीन (उत्तम कुल में उत्पन्न)
(2) पर्यवदातश्रुताः (शास्त्र ज्ञान)
(3) परिदृष्टकर्मा (शास्त्र प्रत्यक्ष ज्ञान)
(4) दक्षा (चिकित्साकार्य में निपुण)
(5) शुचि (शरीर, मन, पवित्रता)
(6) जितहस्ता (चि. में हाथ सधे हो)
(7) जितात्मानः (जो जितात्मा हो)
(8) सर्वोपकरणवन्त : चिकित्सा सामग्रियों से युक्त
(9) सर्वेन्द्रियोपपन्नाः सभी इन्द्रियों से युक्त हो
(10) प्रकृतिज्ञाः रोग, रोगी दोनों की प्रकृति का ज्ञाता
(11) प्रतिपत्तिक्षास्ते – रोग व्याप्ति को जानने वाला
(12) शरीर क्रियाज्ञान – शरीर क्रिया का ज्ञान हो।
(13) शरीर विकृति ज्ञान – शरीर विकृति का ज्ञान हो।
– जिससे शरीर से निकलते प्राणों को लौटा दें।

2. **रोगाभिसर –** रोगाणाभिसरा हन्तारः प्राणानाम् इति रोगाभिसरः।। – प्राणों के नाशक एवं रोगों को लाने वाला। 'प्राणाभिसर' के विपरीत एकदम विपरीत जो वैद्य रोगों को बढ़ाने वाले और प्राणों का नाश करने वाले होते हैं। वे रोगियों को ठगने के लिए वैद्य का वेश धारण कर लेते है और अपने वास्तविक रूप को छुपाये रखते है।

श्रुतदृष्टक्रियाकाल मात्राज्ञान बहिष्कृताः। वर्जनीया हि ते मृत्योश्चयन्त्यनुचरा भुवि। (चरक. सू. 29/11)
ऐसे छद्मचर वैद्य श्रुत (शास्त्रज्ञान), प्रत्यक्षकर्माभ्यास, चिकित्सा क्रिया, औषध प्रयोग काल, औषधि का मात्रा – इन सभी का ज्ञान न रखने वाले वैद्यो का सर्वदा परित्याग करना चाहिए। क्योकि ये भूमि पर यमराज के अनुचर रूप में भ्रमण करते हैं।

30. अर्थेदशमहामूलीय अध्याय

दश महामूला – अर्थे दश महामूलाः समासक्ता महाफलाः महच्चार्थश्च हृदयं पर्यायैरूच्यते बुधैः।। (च. सू. 30/3)
अर्थ अर्थात् हृदय में महामूल और महाफला दश धमनियां जुड़ी हुई है। **पर्याय** – अर्थ/महत्/हृदय।

हृदय आश्रय :– षडंगमंग विज्ञानमिन्द्रियाण्यर्थ पञ्चकम्। आत्मा च सगुणश्चेतश्चिन्त्यं हृदि संश्रितम्।। (च. सू. 30/4)

(1) षड्ंगशरीर (2) पञ्च ज्ञानेन्द्रिय (3) इन्द्रियार्थ (4) सगुण आत्मा। (5) मन
(6) मन के विषय – (चिन्त्य, विचार्य, ऊह, ध्येयं, संकल्प)।

आगारकर्णिका के समान हृदय की रक्षा :– अपने विशिष्ट गुणों के कारण ओज को 'महत्' कहते है और जो धमनियां हृदय से ओज को समस्त शरीर में ली जाती है। वे **तत्फला/महाफला** कहलाती है।

ओज का स्थान :– तत्पस्यौजसः स्थानं तत्र चैतन्यसंङ्ग्रहः। हृदयं महदर्थश्च तस्मादुक्तं चिकित्सकैः।। **(च. सू. 30/7)**
– पर ओज का स्थान हृदय है। हृदय चैतन्य संग्राहक है।

निरूक्ति :— धमनी — ध्मानात् धमन्यः। स्रोत्रस — स्रवणात स्रोतांसि। सिरा — सरणात् सिराः। (च. सू. 30/12)

श्रेष्ठ (उत्कृष्ट)	**भाव**
1. अंहिसा	प्राणवर्धनानां
2. वीर्य	बलबर्धनानां
3. विद्या	बृंहणाणां
4. जितेन्द्रिय	नन्दनानां (मनः आनंदवर्धक)
5. तत्व बोध	हर्षणानां
6. बह्मचर्य	अयनानां (मार्गों में)

आयुर्वेदज्ञ लक्षण :— **वाक्यशः प्रवचन। वाक्यार्थशः प्रवचन अर्थावयवशः प्रवचन। इन्हें त्रिविध उत्तर भी कहते है।**

वेद — 4— ऋग्वेद, सामवेद, यजुर्वेद और अथर्ववेद। **आयुर्वेद** — अर्थववेद में अपनी श्रद्धा प्रकट करता है।

आयु — तत्रायुश्चेतनानुवृत्तिः जीवितमनुबन्धो धारि चेत्येकोऽर्थः। (च. सू. 30/22)

आयु पर्याय — चेतनानुवृत्ति, जीवितम्, अनुबंध, धारि।

सुख एवं असुख आयु के लक्षण — जो मनुष्य शारीरिक या मानसिक रोगों से आक्रान्त नही है, विशेषकर युवा है, समर्थ है बल, वीर्य, यश, पौरूष और पराक्रमशील है, ज्ञान, विज्ञान, इन्द्रिय एवं इन्द्रिार्थ बल के समुदाय से युक्त है, अधिक सम्पत्तिशाली है और अनेक प्रकार के भोगों से युक्त है, जिनके समस्त इच्छित कर्म पूरे हो जाते है, जो अपनी इच्छानुसार भ्रमण करने वाला है — ऐसे पुरूष की आयु सुखायु और इससे भिन्न मनुष्यों की आयु असुख आयु कहलाती है।

हित एवं अहित आयु के लक्षण — प्राणियों की भलाई चाहने वाला, पर धन इच्छा न रखने वाला, सत्यवादिन, शान्तिप्रेमी, परीक्ष्य पूर्वक कार्य करने वाला, असवधान न रहने वाला, त्रिवर्ग का बाधा रहित उपार्जन करने वाला, पूजायोग्य मनुष्यों की पूजा करने वाला, ज्ञान, विज्ञान, शान्तिशील, वृद्धो की सेवा करने वाले, राग, ईर्ष्या, मद, मान के वेगों को रोकने वाला, सतत विविध दान करने वाला, सदैव तप, ज्ञान, और शान्ति करने वाले, अध्यात्म विद्या को जानने वाले और उसी के अनुसार आचरण करने वाले, इस लोक और परलोक को ध्यान में रखते हुए स्मरणशक्ति और बुद्धि से युक्त पुरूषों की आयु हितायु और इससे विपरीत पुरूषों की आयु अहितायु कही जाती है।

मृत्यु के पर्याय : — स्वभाव, प्रवृत्तिरूपरम् (प्रवृत्ति का नाश), मरण, अनित्यता और निरोध।

आयुर्वेद का प्रयोजन — प्रयोजनं चास्य स्वस्थस्य स्वास्थ्यरक्षणं आतुरस्य विकारप्रशमनं च। (च. सू. 30/26)
स्वस्थ व्यक्ति के स्वास्थ्य की रक्षा करना और रोगी व्यक्ति के रोग का उन्मूलन करना — ये 2 आयुर्वेद के प्रयोजन है

आयुर्वेद शाश्वत है — सोऽयमायुर्वेदः शाश्वतो निर्दिश्यते, अनादित्वात्, स्वभावसंसिद्ध लक्षणत्वात् भावस्वभावनित्यात्वाच्य।

(1) अनादि — अनादिकाल से स्थित होने से।
(2) स्वभावसंसिद्धलक्षणत्वात् — आयुर्वेद के लक्षण स्वभावतः सिद्ध होने से।
(3) भावस्वभाव नित्यात्व — पदार्थों के स्वभाव से नित्य होने से।

अष्टांग आयुर्वेद :— कायचिकित्सा, शालक्यं, शल्यापहर्तृकं, **विषगरवैरोधिक प्रशमंन,** भूतविद्या, कौमारभृत्यकं, रसायनं, बाजीकरणमिति। (च.सू. 30/28)

आयुर्वेद का अध्ययन :— सुश्रुत — ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, कुलगुणी शुद्र। काश्यप — सर्वगुणसम्पन्न सभी वर्ग के छात्र।
चरक —1. ब्राह्मण — (प्राणिनां अनुग्रहार्थ) — प्राणियों के प्रति कृपाभाव रखते हुए।
2. क्षत्रिय — (आरक्षार्थ राजन्यैः) — प्राणियों की रोगों से रक्ष करने के लिए
3. वैश्य — (वृत्यर्थे वैश्येः) — जीविका (धनोपार्जन) के लिए।

आयुर्वेद का अध्ययन करना चाहिए।

वैद्य परीक्षा के लिए अष्टविध प्रश्न

- **एक वैद्य दूसरे वैद्य के ज्ञान की परीक्षा करने के लिये सर्वप्रथम 8 प्रश्नों को पूछ सकता है।**

प्रश्न :– 8	(1) तंत्र	(2) तंत्रार्थ	(3) स्थान	(4) स्थानार्थ
	(5) अध्याय	(6) अध्यायार्थ	(7) प्रश्न	(8) प्रश्नार्थ।

1. तत्र :– तत्रायुर्वेदः शाखा विद्या सूत्रं ज्ञानं शास्त्रं लक्षणं तन्त्रम् इत्यानर्थान्तरम्। (च. सू. 30/31)
तन्त्र – आयुर्वेद शाखा, विद्या, सूत्र, ज्ञान, शास्त्र, लक्षण और तंत्र – ये सब शब्द पर्यायवाची है। (तन्त्रणात् तंत्रः)

2. तन्त्रार्थ :– तन्त्रार्थः पुनः स्वलक्षणैरूपदिष्टः। – तन्त्रार्थ 10 प्रकरणों पर विचार किया जाता है।
(1) शरीर (2) वृत्ति (3) हेतु (4) व्याधि (5) कर्म (6) काल (7) कार्य (8) कर्ता (9) कारण (10) विधि

3. स्थानः – 'स्थानम् अर्थ प्रतिष्ठया।' स्थान संख्या – 8।
(1) सूत्र (2) निदान (3) विमान (4) शरीर (5) **इन्द्रिय स्थान** (6) चिकित्सा (7) कल्प (8) सिद्धि

4. स्थानार्थ :– 'श्लोकौषधारिष्ट विकल्पसिद्धि निदानमानाश्रय संज्ञकेषु। (च.सू. 30/34)

1. सूत्र स्थान	–	श्लोक स्थान।	5. इन्द्रिय	–	अरिष्ट स्थान।
2. निदान	–	–	6. चिकित्सा	–	औषध स्थान।
3. विमान	–	मान स्थान।	7. कल्प	–	विकल्प/दिव्य स्थान।
4. शारीर	–	आश्रय स्थान।	8. सिद्धि	–	–

5. अध्याय :– अधिकृत्यार्यम् अध्याय नाम संज्ञा प्रतिष्ठित।। (च.सू. 30/70)

120 अध्याय :–	(1) सूत्र	– 30	(5) चिकित्सा	– 30
	(2) निदान	– 8	(6) इन्द्रिय	– 12
	(3) विमान	– 8	(7) कल्प	– 12
	(4) शरीर	– 8	(8) सिद्धि	– 12

6. अध्यायार्थ –(1) सूत्रस्थान – **श्लोक स्थानं समुदिष्टं तन्त्रस्यास्य शिरः शुभम्।**
श्लोक (सूत्र) स्थान इस आयुर्वेद तंत्र का "**शुभ शिर**" (कल्याणकारक) है।

ठति सर्वविकाराणामुक्तमेतच्चिकित्सितम्। स्थानमेतचिकित्सितम्। स्थान मेतद्धि तन्त्रस्य रहस्यं परमुत्तमम्। (च. चि. 30/228)
चिकित्सा स्थान इस आयुर्वेद तंत्र का "**सर्वोत्तम स्थान और परम रहस्य**" है।

सप्तचतुष्क :–	(1) भैषज्य चतुष्क	(1 – 4)	(5) रोग चतुष्क	(17 – 20)
	(2) स्वास्थ्य चतुष्क	(5 – 8)	(6) योजना चतुष्क	(21 – 24)
	(3) निर्देश चतुष्क	(9 – 12)	(7) अन्नपान चतुष्क	(25 – 28)
	(4) क्रिया चतुष्क	(13 – 16)	(8) संग्रह द्वय	(29 – 30)

7. प्रश्न :– पृच्छा तन्त्राद्यथाम्नायं विधिना प्रश्न उच्यते। (च. सू 30/69)
शास्त्र में जो विषय जिस प्रकार से कहा गया हो, उसे उसी रूप में विधिपूर्वक पूछना '**प्रश्न**' कहलाता है।

8. प्रश्नार्थ :– प्रश्नार्थो युक्तिमांस्तस्य तन्त्रेणैवार्थ निश्चयः।। (च.सू. 30/69)
युक्ति युक्त ढंग से शास्त्र के द्वारा जो अर्थ निश्चित किया जाता है उसे '**प्रश्नार्थ**' कहते हैं।